परमाणु-विखण्डन

हिन्दी-समिति-ग्रन्थमाला---५७

परमाणु-विखण्डन

लेखक

डा० रमेशचन्द्र कपूर,

इलाहाबाद विश्वविद्यालय

हिन्दी समिति

सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश

प्रकाशकीय

"परमाणु-विखडन" अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषय है। आधुनिक विज्ञान की इस उपलब्धि से ससार का कायापलट हो जाने की बडी-बडी सम्भावनाएँ उपस्थित हो गयी हैं। इसके कारण एक ओर जहाँ युद्ध की विभीषिका मे अभूतपूर्व वृद्धि होकर मानव जाति के विनाश का ही खतरा उत्पन्न हो गया है, वहाँ दूसरी ओर सस्ती से सस्ती विजली तथा जनहित के अन्य सुख-साधनो की उत्पत्ति द्वारा यह मनुष्य और समाज के लिए परम कल्याण-कारी भी सावित हो सकता है। परमाणु-शक्ति के इस अवरोक्त सदुपयोग से यथासम्भव लाभ उठाने की ओर ही भारत अग्रसर हो रहा है, यद्यपि वम्बई के निकट स्थापित प्रतिष्ठान की गति-विधि के कारण आज वह इस स्थिति मे भी आ गया है कि यदि आवश्यकता पडे तो वह अल्प समय के भीतर ही परमाणु वम तैयार कर सकता है। थोडे मे इस विषय की वैज्ञानिक जानकारी हिन्दी के पाठको को हो सके, इसी उद्देश्य मे यह पुस्तक हिन्दी समिति द्वारा प्रकाशित की जा रही है।

इस पुस्तक के लेखक डाक्टर रमेशचन्द्र कपूर इस विषय के अच्छे ज्ञाता और सुयोग्य विद्वान् है। उन्होने दिखलाया है कि परमाणु वम तथा परमाणु भट्टी का स्वरूप क्या है, विस्फोट कैसे होता है, परमाणु ऊर्जा का उत्पादन किस तरह किया जाता है और भारत ने इस सम्बन्ध मे कहाँ तक उन्नति कर ली है। परमाणु वम विस्फोट की अत्यन्त भयावह विनाशकारी लीला का रोमाचक वर्णन भी इसमे है और परमाणु ऊर्जा के कृषि, चिकित्सा

आदि में होने वाले लाभकारी प्रयोग की तथा जहाजों, रेलों और विमानों के चलाने में उसके प्रयुक्त किये जाने की सम्भावना भी स्पष्ट रूप से दिखलायी गयी है। उन्होंने बहुत ही सुबोध भाषा में अपना अभिमत प्रकट करने की चेष्टा की है और बीच बीच में चित्र भी दिये हैं जिससे आशय समझने में यथेष्ठ सहायता मिलती है।

लीलाधर शर्मा 'पर्वतीय'
सचिव, हिन्दी समिति

विषय-सूची

परिशिष्ट

अध्याय १

परिचय

प्राचीन काल के हिन्दुओ ने सर्वप्रथम द्रव्य को परमाणुओ से बना हुआ माना। यूनानी विद्वानो ने इसी विचार को भारत से लिया। यूनान के प्रसिद्ध दार्शनिक डिमाक्रिटस ने कहा कि सम्पूर्ण भौतिक वस्तुएँ छोटी इकाइयो से बनी है। ये इकाइयाँ और अधिक सूक्ष्म नही की जा सकती। इन सूक्ष्मता-इकाइयों को परमाणु या एटम (जो काटा न जा सके) कहा गया। एटम नाम यूनानी दार्शनिको ने २५०० वर्ष पहले रखा था। यद्यपि यह नामकरण प्राचीन काल मे ही हो चुका था, किन्तु यह दार्शनिको के मस्तिष्क की सामग्री मात्र था।

इसके पश्चात् बहुत काल तक परमाणु सम्बन्धी यह विचारधारा अन्धकार में रही। पन्द्रह शताब्दियों के बाद पुनः गैलेलियो, डेकार्ट, बायल, बेकन, न्यूटन आदि दार्शनिको तथा वैज्ञानिको ने यह मत प्रकट किया कि द्रव्य छोटे-छोटे कणों द्वारा बना है।

अग्रेजी स्कूल के अध्यापक जॉन डाल्टन ने वर्तमान परमाणु-सिद्धान्त की नीव डाली। उसने अनिश्चित क्रियाओं के स्थान पर एक पुष्ट सिद्धान्त का निर्माण किया। पुराने दार्शनिक अपने विचारों की उड़ानो तक ही सीमाबद्ध रहते थे। डाल्टन के बाद से परमाणु-सिद्धान्त का उपयोग भौतिकी तथा रसायन मे निरन्तर बढ़ता रहा। पुराने विचारो को सरलता से हटाना कठिन कार्य होता है। कुछ वैज्ञानिको ने परमाणु की सत्ता को न मानते हुए विचार प्रकट किया कि परमाणु-सिद्धान्त एक कोरी कल्पना है, वास्तविकता नही। परन्तु आज विश्व में कोई विरला ही विचारक होगा जो परमाणु की वास्तविकता पर सन्देह करता हो।

तत्वो सम्बन्धी विचार

जिस समय परमाणु की वास्तविकता की कल्पना की जा रही थी, उस समय तत्वो सबधी विचारो मे क्रान्तिकारी परिवर्तन आ गये थे। प्राचीन हिन्दू सभ्यता मे पच तत्वो का विशेष महत्त्व रहा है, जिसके अनुसार सारा ब्रह्माण्ड पाँच तत्वो से निर्मित माना जाता था। ये तत्व पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाश माने गये है। इसी प्रकार यूनानियों ने सृष्टि के निर्माण मे चार तत्वों की कल्पना की। इन विचारो को बहुत काल तक मान्यता मिलती रही।

अरस्तू ने इन विचारों पर आधारित ब्रह्माण्ड की कल्पना की थी। उसके अनुसार प्रत्येक वस्तु एक आदि तत्व[1] तथा अन्य चार तत्वों से मिलकर बनी हुई होती है। ये चार तत्व थे—पृथ्वी, वायु, अग्नि तथा जल।

कुछ विशेष गुणों के कारण इन तत्वों मे अन्तर भी माना गया। साथ में यह भी समझा गया कि इन गुणो को घटानें-बढ़ाने से द्रव्य का रूप बदला जा सकता है। कीमियागरो[2] को तो यहाँ तक विश्वास था कि सही पद्धति ज्ञात होने पर एक वस्तु को दूसरी मे परिवर्तित किया जा सकता है।

माध्यमिक युग में यही कीमियागर ऐसे पारस पत्थर की खोज करते रहे जिसके द्वारा निम्न प्रकार की धातुओ को स्वर्ण में परिवर्तित किया जा सके। इस काल में लोगों को रासायनिक क्रिया की वास्तविक प्रकृति का ज्ञान न था। कतिपय क्रियाओं के फलस्वरूप पदार्थो के रूप तथा गुणो में पर्याप्त अन्तर आ जाता था। इस अन्तर से ही कीमियागर अपने सिद्धान्त की पुष्टि समझते थे। बहुत-से लोगो ने यह दावा किया कि उन्होंने ऐसे गुर का पता लगा लिया है जिससे वे लौह से स्वर्ण बना सकते है। अब यह भलीभाँति ज्ञात हो चुका है कि इनमे से कोई भी सही न था और इस विधि से स्वर्ण का एक कण भी न बन पाया होगा।

1. *Primordial* 2. *Alchemists*

अठारहवी शती के अंत तक तत्त्वातरण-सिद्धान्त की अन्त्येष्टि हो चुकी थी और रसायन विज्ञान पर इसका कोई भी प्रभाव शेप न रह गया था। परन्तु कीमियागर कुछ हद तक जनता को चमत्कृत करते रहे, यहां तक कि वर्तमान युग मे भी कतिपय लोगों ने स्वर्ण बनाने का दावा किया है और आश्चर्य है कि कुछ लोग उन पर विश्वास कर उनके जाल मे फँस जाते है।

धीरे-धीरे रासायनिक विज्ञान की प्रगति हुई। प्राय ९० तत्त्वो में द्रव्यों का विभाजन हुआ। ये तत्त्व किसी भी रासायनिक क्रिया द्वारा विभाजित नही हो सकते थे। हर तत्त्व के परमाणु का रूप पृथक्-पृथक् था। वह स्थायी तथा अविनाशी प्रतीत होता था।

कहा जाता है कि जब ऐसे दो या इससे अधिक तत्त्व मिलते है तो यौगिक बनते हैं। आजकल वैज्ञानिक लोग यौगिको और तत्त्वो का अन्तर सरलता से ज्ञात कर लेते है। हर तत्त्व को पहचानने के बडे सफल उपाय निकाले गये है, यथा एक्स-रे,[1] प्रकाश वर्णक्रम[2]। किसी तत्त्व का परमाणु उसका सबसे छोटा कण है। अतः हर तत्त्व के परमाणु मे उसी के गुण धर्म होते हैं।

क्रांतिकारी खोज

बीसवी शताब्दी के प्रारम्भ मे एक क्रान्तिकारी खोज हुई। इस खोज ने परमाणु की इस रूप-कल्पना को ही भंग कर दिया। सन् १९०२ मे अनुसन्धान द्वारा ज्ञात हुआ कि यूरेनियम तथा थोरियम तत्त्व रेडियधर्मी है। इस प्रक्रिया में इन तत्त्वो के परमाणु स्वत: रूपान्तरण[3] करते है। यद्यपि इनकी गति[4] तो कम होती है, परन्तु सरलता से उनकी पहचान हो जाती है। परमाणु अविनाशी है, इस सिद्धान्त को इस नयी खोज ने जड़ से हिला दिया। रेडियधर्मिता के अध्ययन से परमाणु की संरचना पर बहुत प्रकाश पड़ा। वैज्ञानिको ने उसके द्वारा यह सिद्ध किया है कि कतिपय भारी तत्त्वों के

1. X-Ray 2. Optical spectrum
3. Spontaneous transformation 4. Rate

परमाणु अविनाशी नही हैं, वरन् विस्फोट के साथ विखण्डित होते हैं। इस विखण्डन में प्रचुर मात्रा मे ऊर्जा मुक्त होती है। तत्पश्चात् शृखलाबद्ध तत्वों की उत्पति होती है। इन तत्वो की जीवन-अवधि सीमित होती है तथा उनके विखण्डन पर अधिक उर्जा के विभिन्न प्रकार के विकिरण निकलते हैं जिनका वर्णन अगले अध्याय मे किया जायगा।

रेडियधर्मिता की खोज ने परमाणु-सिद्धान्त के दूसरे आधारों को भी धक्का पहुँचाया है। डाल्टन ने अपने सिद्धान्त मे कहा था कि एक ही तत्त्व के परमाणुओं का भार समान होता है। रेडियोधर्मिता ने एक ही तत्त्व के भिन्न-भिन्न भारों वाले परमाणुओं की उपस्थिति सिद्ध की। यह परमाणु रासायनिक गुणो मे बिलकुल एक-से होते है। यदि उन्हें मिला दिया जाय तो किसी भी रासायनिक क्रिया द्वारा वे अलग-विलग नही किये जा सकते। ऐसे परमाणुओ को समस्थानिक[1] कहते हैं।

कुछ समय तक वैज्ञानिकों का यह विचार था कि समस्थानिक केवल रेडियधर्मी परमाणुओ मे ही वर्तमान होते हैं। परन्तु यह विचार निर्मूल सिद्ध हुआ। जे० जे० टॉमसन[2] के अनुसन्धानो ने सिद्ध कर दिया कि अरेडियोधर्मी स्थायी तत्वों में भी समस्थानिक मिल सकते हैं। इस ओर उसके शिष्य एस्टन ने विशेष सर्तकता के साथ अनुसन्धान किया। उसने एक भार-वर्णक्रम लेखी[3] का आविष्कार किया। इस उपकरणिका से तत्वों के समस्थानिक अलग-अलग किये जा सकते हैं। इसके द्वारा आज तक के समस्त तत्वों का विश्लेषण हो चुका है। प्राकृतिक अवस्था में पाये जाने वाले अधिकांश तत्त्व समस्थानिको के मिश्रण हैं।

सन् १९१९ में रदरफोर्ड[4] ने एक खोज की जिसे हम कीमियागरों के स्वप्न की पूर्ति कह सकते हैं। यद्यपि उन्होंने लोहे से स्वर्ण का निर्माण नही

1. Isotopes
2. J. J. Thompson
3. Mass-spectrographs
4. Rutherford

किया परन्तु उससे भी कहीं अधिक मौलिक खोज की। रदरफोर्ड ने नाइट्रोजन के कुछ परमाणुओं को आक्सीजन में परिणत किया। यह एक ऐसा प्रयोग था जिसमें परमाणु की बाहरी परिधि को तोड़ कर उसके नाभिक¹ का विखण्डन किया गया। इस विखण्डन से परमाणु का रूप बिलकुल बदल गया और एक परमाणु दूसरे परमाणु में परिवर्तित हो गया। रदरफोर्ड की खोज विज्ञान के लिए क्रान्तिकारी सिद्ध हुई। उसके पश्चात् अन्य अनेक वैज्ञानिक इस परमाणु-विखण्डन क्रिया में सफल हुए। इसी क्रिया द्वारा कृत्रिम रेडियधर्मी² तत्त्व भी बने। ये परमाणु स्थायी तत्त्वों के समस्थानिक हैं और प्राकृतिक रेडियधर्मी परमाणुओं की तरह विखण्डित होते हैं। उन पर प्राकृतिक रेडियधर्मिता³ के समस्त नियम लागू होते है।

पिछले ३० वर्षों में इस दिशा में विज्ञान में उच्च कोटि का कार्य हुआ है। इन प्रयोगों के निमित्त अत्यन्त मूल्यवान् तथा जटिल उपकरण बने है जिनके द्वारा परमाणुओं पर अपूर्व शक्ति का प्रयोग किया जाता है। परमाणु विखण्डन के लिए उच्चस्तरीय ऊर्जा की आवश्यकता होती है और विशेष प्रकार के उपकरण ही इस ऊर्जा को उत्पन्न कर सकते है।

परमाणु की सरचना

इस प्रसग में परमाणु की सरचना पर कुछ कहना अनुपयुक्त न होगा। आज की परमाणु कल्पना डाल्टन की कल्पना से बहुत भिन्न है। अब यह सिद्ध हो चुका है कि परमाणु के खण्ड हो सकते है। आइए, हम देखें कि इसके खड किस प्रकार के होते हैं। यद्यपि हमारे पास ऐसा सूक्ष्मदर्शी यन्त्र नही है जिससे हम परमाणु देख सकें, परन्तु वैज्ञानिकों के अनुसन्धानों से हमें उसका एक चित्र तो मिल ही सकता है। उस चित्र से हम परमाणु के आकार की कल्पना कर सकते है। हमे यह ज्ञात है कि हर तत्त्व के परमाणु

1. Nucleus 2. Artificially radio-active
3. Natural Radio-activity

दो प्रकार के कणो से बने हैं जिनमे मौलिक अन्तर होता है। उनमें एक कण को हम नाभिक कहेंगे। नाभिक कण में धनात्मक विद्युत का आवेश होता है। दूसरे कण को हम इलेक्ट्रान[1] कहते हैं। इस पर ऋणात्मक विद्युत स्थापित है। इलेक्ट्रान, नाभिक के चारों ओर उसी प्रकार परिक्रमा करते है जैसे अन्य ग्रह सूर्य के चारो ओर। इन दोनों कणों के भार में भी बहुत अन्तर है। इलेक्ट्रान बहुत हलका कण है। इसका भार एक हाइड्रोजन परमाणु के भार का १८००वा अंश है। यह कहना आवश्यक है कि हाइड्रोजन प्रकृति मे सबसे हलका तत्त्व है। परमाणु के भार का एक अत्यन्त अल्प भाग इलेक्ट्रान मे स्थापित रहता है। इसके विपरीत नाभिक में परमाणु भार का समग्र भार रहता है। इस प्रकार किसी भी तत्त्व का परमाणु भार उसके नाभिक भार के बराबर होता है।

परमाणु का आयतन अति सूक्ष्म होता है। वैज्ञानिको का कहना है कि परमाणु को आँख से देखना कभी भी संभव न होगा। इसकी सूक्ष्मता का अनुमान इस प्रकार किया जा सकता है कि यदि हम दस करोड परमाणुओं को एक रेखा मे रखे तब उनकी सयुक्त लम्बाई एक इच से अधिक न होगी। यह तो रही परमाणु की बात। अब हम उसके नाभिक को देखें। नाभिक को परमाणु का हृदय ही समझना चाहिए। यद्यपि उसमे परमाणु का सारा भार स्थित है, परन्तु उसका आयतन परमाणु के आयतन का एक लाखवां भाग है। सारे परमाणुओं के नाभिक दो प्रकार के मूलभूत कणों से बने होते है जो प्रोटान[2] तथा न्यूट्रान[3] है। प्रोटान पर धनात्मक विद्युत स्थित होती है, पर न्यूट्रान पर विद्युत् का कोई आवेश नही रहता। प्रोटान का भार लगभग हाइड्रोजन के परमाणु-भार के समान है, वास्तव में वह हाइड्रोजन का नाभिक है। दोनो कणों (प्रोटान-तथा न्यूट्रान) का भार प्रायः समान

1. Electron
2. Protons
3. Neutrons

होता है। परन्तु सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर न्यूट्रान का भार, प्रोटान से थोडा अधिक प्रतीत होगा।

विभिन्न तत्वो के नाभिको पर घनविद्युत् का आवेश भिन्न-भिन्न मात्रा में रहता है, परन्तु एक तत्त्व के सारे समस्थानिक परमाणुओं पर विद्युत् आवेश समान रहता है। प्रत्येक तत्व के नाभिक पर एक विशेष विद्युत् आवेश होता है जिसकी मात्रा से हम उस तत्त्व को पहचान सकते है।

मध्ययुग मे कीमियागर तत्वो को बदलने का प्रयत्न किया करते थे, परन्तु वे उसमे असफल ही रहे। किन्तु अब हम जानते है कि एक परमाणु को दूसरे मे परिणत करने के लिए उसके नाभिक पर आक्रमण करना आवश्यक होता है। नाभिक तक पहुँचने मे उच्च कोटिका बल लगता है क्योकि नाभिक के कणो को पास-पास रखने वाली शक्ति परमाणु को अक्षत रखने वाली शक्ति से बहुत अधिक है। इसका एक उदाहरण देखे—

हीलियम एक गैस है जो हाइड्रोजन को छोड़कर सबसे हलका तत्त्व है। उसके परमाणु हाइड्रोजन से चार गुना भारी होते है। इस कारण उसका परमाणु भार ४ माना गया है। इसके नाभिक मे २ प्रोटान तथा २ न्यूट्रान सम्मिलित है। इस नाभिक के चारो ओर २ इलेक्ट्रान परिक्रमा करते है। यदि हम हीलियम परमाणु से एक इलेक्ट्रान निकालना चाहे तो हमे कुछ ऊर्जा का उपयोग करना होगा। परन्तु यदि हम इसके नाभिक का विखण्डन करें तो पहले प्रयोग से १० लाख गुनी अधिक ऊर्जा की आवश्यकता पड़ेगी। परमाणुओ के नाभिको के मध्य क्रिया लाने मे व्यवहृत ऊर्जा, रासायनिक प्रयोगो से कही अधिक होती है।

रदरफोर्ड तथा अन्य वैज्ञानिकों ने परमाणु का तत्त्वान्तरण[1] किया है, परन्तु इस क्रिया में अत्यधिक ऊर्जा प्रयुक्त करना पड़ता था। साथ ही तत्वातरण वाले परमाणुओ की संख्या अत्यन्त अल्प थी और उनका परीक्षण भी

1. Transmutation

रासायनिक क्रिया द्वारा सम्भव नहीं था। अतः कार्य में विशेष प्रगति न
आ सकी।

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के प्रसिद्ध वैज्ञानिक लारेंस के अद्भुत अन्वेषण
कार्य से ही इस दिशा में कार्य द्रुत गति से बढ़ने लगा। सन् १९३२ में उन्हों
एक यंत्र का आविष्कार किया जिसका नाम साइक्लोट्रान[1] है। इसके द्वार
मूलभूत कणों को अत्यन्त वेग से प्रवाहित किया जा सकता है। इसके
पश्चात् ये ऊर्जाशील कण दूसरे नाभिकों का लक्ष्य वेध कर नाभिक
क्रिया में भाग लेते थे। साइक्लोट्रान द्वारा अनेक अनुसन्धान किये गये
जिनसे नाभिक क्रियाओं को समझने में सरलता हुई। परमाणु-भट्टी या
परमाणुपुंज[2] बनने के पूर्व इस दिशा में साइक्लोट्रान का ही प्रयोग होता था।

न्यूट्रान की खोज

सन् १९३२ में रदरफोर्ड के शिष्य चेडविक[3] ने इंग्लैंड में न्यूट्रान की
खोज की। जैसा पहले बताया जा चुका है, न्यूट्रान पर कोई विद्युत आवेश
नहीं रहता। इसे हम निरपेक्ष[4] कण भी कह सकते हैं। परमाणु
तत्वांतरण और विखण्डन में न्यूट्रान सबसे उपयोगी कण सिद्ध हुआ है।
निरपेक्ष होने के कारण इन कणों को दूसरे परमाणुओं के नाभिक तक
पहुँचने में कठिनाई नहीं होती क्योंकि उन्हें प्रतिकर्षण[5] का सामना नहीं
करना पड़ता।

सन् १९३३ में रेडियम की अन्वेषिका मेरी क्यूरी[6] की पुत्री इरीन
क्यूरी[7] और उनके पति फ्रेड्रिक जोलियट[8] ने सर्वप्रथम कृत्रिम रेडियधर्मिता
की घोषणा की। यह पहले बताया जा चुका है कि कृत्रिम रेडियधर्मी

1. Cyclotron
2. Atomic pile
3. Chadwick
4. Neutral
5. Repulsion
6. Mary Curie
7. Irene Curie
8. Fredrick Joliet

तत्वों पर रेडियधर्मिता के समस्त नियम उसी प्रकार लागू होते है जैसे कि रेडियम, यूरेनियम और थोरियम आदि पर।

नाभिक क्रिया मे न्यूट्रान का सर्वप्रथम उपयोग एनरीको फर्मी[1] द्वारा सन् १९३४ में किया गया था। फर्मी इटली राज्य का प्रसिद्ध भौतिकी वैज्ञानिक था। इटली मे फासिस्टों के अत्याचारो से तंग आकर उसे अमेरिका मे शरण लेनी पड़ी थी। उसकी विधि द्वारा तत्वांतरण की क्रिया सरल हो गयी और आवर्त सारणी के अन्य तत्वो पर भी यह क्रिया सम्भव हो सकी। कुछ ही समय मे अनेक तत्वो के कृत्रिम रेडियधर्मी समस्थानिक बनाये गये।

यह दशा सन् १९३८ मे थी। उस समय जर्मनी के रसायनज्ञ आटो हान[2] ने एक मौलिक खोज की घोषणा की। हान तथा स्ट्रासमान[3] ने न्यूट्रान द्वारा यूरेनियम पर आक्रमण क्रिया की। यूरेनियम प्रकृति मे सबसे भारी तत्व है। इसका परमाणु-भार २३८ तथा परमाणु-संख्या ९२ है। इन अन्वेषणकर्ताओं का लक्ष्य यूरेनियम से भारी तत्वों का निर्माण था, परन्तु उन्हें कुछ और ही प्राप्त हुआ। उन्होने देखा कि यूरेनियम का परमाणु दो भागों में खण्डित हो गया। साथ में अत्यधिक मात्रा मे ऊर्जा का उदय हुआ।

परमाणु-ऊर्जा

यह वह समय था जब हिटलर का नात्सी राज्य बढ रहा था। उसके अत्याचारों से पीड़ित होकर लोग बडी संख्या मे जर्मनी से भाग रहे थे। इनमें उच्च कोटि के वैज्ञानिक भी थे। उसी समय दो वैज्ञानिकों एक आटो राबर्ट फ्रिश[4] तथा दूसरे (कु) लिज माइटनर[5] को जर्मनी छोड़कर भागना पड़ा। माइटनर इसके पूर्व ओटो हान के साथ कैसर विल्हेल्म अनुसन्धान-शाला में उच्चकोटि का कार्य कर चुकी थी। सन् १९३९ में फ्रिश ने

1. Enrico Fermi
2. Otto Hahn
3. Strassmann
4. Otto Robert Frisch
5. Lise Meitner

डेनमार्क में तथा माइटनर ने स्वीडन में ओटो हान की अणुविखण्डन की इस क्रान्तिकारी खोज की सराहना की और इस घटना को नाभिक-खण्डन अथवा न्यूक्लियर फिशन[1] का नाम दिया। इससे भी अधिक अद्‌भुत बात यह थी कि इस क्रिया को शृंखलाबद्ध किया जा सकता है।

उस समय एक अनजाने मनुष्य के लिए इन खोजों का कोई स्थायी महत्त्व नही था। उसके लिए यह घटना भी अनेक वैज्ञानिक लेखों की तरह, जिनमे कुछ अनुसन्धानशाला मे किये हुए प्रयोगों का वर्णन होता, पत्रिकाओं में छपी घटनाओं के समान थी, परन्तु भौतिक विज्ञान में दक्ष मनुष्यों ने जिन्हे परमाणु ऊर्जा मे रुचि थी, इस खोज मे एक नये युग का आह्वान पाया। इन प्रयोगों से सिद्ध हुआ था कि परमाणु ऊर्जा अब केवल एक स्वप्न नहीं रहेगी वरन् शीघ्र ही वस्तुतः उत्पादित होगी। इस खोज के साथ ही परमाणु ऊर्जा युग के प्रारम्भ की पुनीत बेला आ पहुँची। दुर्भाग्यवश उस समय द्वितीय विश्व-युद्ध के काले बादल आकाश पर मँडरा रहे थे, इस कारण ऊर्जा का सर्वप्रथम उपयोग विनाश के लिए ही हुआ।

उस समय ससार के बड़े-बडे वैज्ञानिक इस खोज की महत्ता पर बड़ी बडी सभाओ मे विवाद कर रहे थे। वे इस प्रयत्न मे थे कि परमाणु ऊर्जा को प्रयोग में लाने के लिए एक शृखलाबद्ध क्रिया सुलभ की जा सके। शृंखला बनने के पश्चात् ही इस क्रिया का परमाणु ऊर्जा-उत्पादन में उपयोग हो सकता था। सन् १९४० में इस प्रकार की एक सभा अमेरिका के वाशिंगटन नगर मे हुई। इसमे भौतिकी के बडे-बड़े दिग्गज—निएल, बोर तथा फर्मी भी भाग ले रहे थे। उस समय तक शृंखला क्रिया[2] का पूर्णन सम्भव न हो सका था अतः उसकी पूर्ति के लिए अनेक सुझाव रखे गये थे।

द्वितीय महायुद्ध प्रारम्भ होने के कारण परमाणु ऊर्जा का सारा कार्य गोपनीय बना दिया गया। पाँच वर्ष तक वाह्य संसार को इसका कुछ भी

1. Nuclear fission　　2. Chain reaction

पता न लग सका। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका मे ही इसका केन्द्र स्थापित हुआ, जहाँ संसार के कोने-कोने से वैज्ञानिक तथा इजीनियर लाये गये जिनकी सहायता से और सहरानीय सहकारिता मे बहुत कुछ कार्य सम्पन्न हुआ। उस समय सबको एक ही धुन थी कि जल्दी से जल्दी धुरी राष्ट्रों (जर्मनी, इटली तथा जापान) को हराया जाय। पहले जिस कार्य को पूरा होने मे, साधारणत. पचास वर्ष लगते, वही कार्य अमेरिका की औद्योगिक शक्ति तथा अनत पूजी की सहायता से ५वर्ष के लघुकाल मे सम्पन्न हो गया।

अगस्त १९४५ में यकायक जापान के नगर हिरोशिमा पर परमाणु बम गिरने का समाचार मिला। इसके साथ ही परमाणु-विखण्डन विषयक अनुसन्धानों की कुछ झलक जनसाधारण को मिली।

परमाणु उर्जा के सारे अनुसन्धान अत्यन्त गोपनीय रूप से किये गये थे। प्रथम नियंत्रित-खण्डन-शृंखला[1] को १९४२ मे शिकागो विश्वविद्यालय मे वैज्ञानिक फर्मी ने फलीभूत किया। प्रथम परमाणु बम का विस्फोट सयुक्त राष्ट्र अमेरिका के न्यू मेक्सिको प्रदेश के रेगिस्तान में सन् १९४५ के बसत में हुआ। इन प्रयोगो के समाचार अन्य राष्ट्रों को बिलकुल न मिल सके।

द्वितीय महायुद्ध के साथ अस्त्र-शस्त्रों की प्रतियोगिता समाप्त नही हुई। अमेरिका के साथ सोवियत रूस ने भी होड लगायी। सन् १९४९ में रूस ने प्रथम एटम बम का विस्फोट किया। कुछ समय पश्चात् इग्लैंड भी इसमे सफल हुआ। अब फ्रास भी ऐसे बम बना रहा है।

परमाणु ऊर्जा की उत्पति दूसरे स्रोत मे भी हुई जिसमे हाइड्रोजन के परमाणुओ का उपयोग होता है। इस प्रतिक्रिया मे हाइड्रोजन के परमाणु मिलकर हीलियम बनाते है। इसका उपयोग भी विशिष्ट प्रकार के बम बनाने में हुआ है जिन्हें हाइड्रोजन बम कहते है। ये बम परमाणु बमों से कई गुने अधिक विनाशकारी होते है। परमाणु ऊर्जा का उपयोग विध्वंस-

1. Controlled fission chain

कारी तथा शान्ति दायक दोनो ही प्रकार के कार्यो मे हो सकता है। यदि अत्यन्त अल्प समय मे ऐसी ऊर्जा पैदा की जाय जिसकी मात्रा बहुत अधिक हो तब उससे शीघ्र ही विनाशकारी विस्फोट होगा। इसी सिद्धान्त पर परमाणु तथा हाइड्रोजन बम बनाये गये। हलके विस्फोट से सुरंग खोदना, चट्टानो को तोडना आदि उपयोगी कार्य भी सिद्ध हो सकते हैं।

परमाणु ऊर्जा का शान्तिप्रद कार्यो मे उपयोग करने के लिए आवश्यक है कि उसका ईंधन धीरे-धीरे नियत्रण मे जले। इससे उत्पन्न ऊर्जा का उपयोग घरो, नगरो, गाँवो आदि मे जन-साधारण के लिए होना चाहिए। इस ओर भी कुछ प्रगति हुई है। सोवियट रूस ने सर्वप्रथम एक छोटा विद्युत् घर परमाणु ऊर्जा से चलाया। आजकल इस प्रकार के विद्युत् घर इंग्लैंड, अमेरिका तथा रूस मे कार्य कर रहे है। अमेरिका ने परमाणु ऊर्जा से संचालित पनडुब्बी नावें[1] बनायी है। इनमे से दो नावो ने तो उत्तरी ध्रुव के बर्फ की तह के नीचे यात्रा भी कर ली है। अमेरिका ने परमाणु ऊर्जा संचालित सेवानाह[2] नामक जहाज प्रवाहित किया है जो सारे संसार की परिक्रमा, बिना रुके, कर सकेगा। रूस भी इस ओर पीछे नहीं है। लेनिनग्राड के बदरगाह मे लेनिन[3] नामक हिमभंजक तैयार होकर बाल्टिक सागर की यात्रा कर चुका है।

परमाणु ऊर्जा का अभी तो प्रारम्भ ही हुआ है। अभाग्य से जिन देशों में इस ओर अनुसन्धान हो रहे है वे इसे गोपनीय रखने का प्रयत्न करते हैं। यद्यपि यह विज्ञान की नीति के विरुद्ध है, फिर भी विश्वयुद्ध की समाप्ति के १५ वर्ष बाद भी परमाणु ऊर्जा के उपयोगों सम्बन्धी अनुसंधान कार्य को प्रत्येक देश अपनी विशिष्ट बपौती समझता है।

कुछ प्रशसनीय कार्य भी इस दिशा में हुए हैं जिनमें संयुक्त राष्ट्र संघ

1. Sub-marines
2. Savannah
3. Lenin

की ओर से हुई दो सभाएँ गिनायी जा सकती है। इनमें वैज्ञानिकों ने परमाणु-ऊर्जा के शान्तिप्रद उपयोगो पर विचार किया था। पहली सभा सन् १९५५ में जेनीवा मे हुई तथा दूसरी उसी स्थान पर १९५८ में। पहली सभा के सभापति भारतवर्ष के भौतिक शास्त्र के प्रमुख पंडित श्री होमी जहांगीर भाभा थे। अब बड़े राष्ट्रों ने अनुभव किया है कि परमाणु-विज्ञान किसी राष्ट्र विशेष की सम्पत्ति न होकर सारे मानव समाज की भलाई के लिए एक साध्य यंत्र होना चाहिए। ऐसी सभाओ से होने वाले प्रभावों का परिणाम तुरन्त प्रकट नही होता। अभी देश-विदेशों के लोगों को एक साथ जुटकर काम करना है जिसके पश्चात् विश्व को उसके लाभकारी फल मिलेंगे।

हाँ, यह तभी सम्भव है जब संसार किसी दूसरे विश्वयुद्ध के चक्कर में न पड जाय। भला यह कौन आश्वासन दे सकता है कि परमाणु-ऊर्जा का उपयोग मानव के हित के लिए ही होगा, न कि सारे विश्व को विध्वंस करने के लिए।

अध्याय २

रेडियधर्मिता

(परमाणुओं का प्राकृतिक विखण्डन)

उन्नीसवी शताब्दी के अन्तिम चरण के सन् १८९५ में जर्मन भौतिक शास्त्री विलियम रटगन[1] ने अधकार मे विद्युद्विसर्जन विषय पर अनुसंधान-कार्य किया। वह कांच की नलियो में हलके दबाव पर गैसों को लेकर उनके बीच दो विद्युदग्रो[2] से विद्युद्विसर्जन कर रहा था। उन अनुसन्धानो के बीच उसने देखा कि यद्यपि नली काले कपडे से ढकी थी, तो भी उससे कुछ किरणें निकलती थी। ये किरणें आंखो से नही दिखाई पड़ती थी, परन्तु फोटोग्राफी के प्लेटो पर उनकी छाप पड सकती थी। इनके गुणों का अध्ययन करने पर पता चला कि इनका तरग-दैर्घ्य[3] प्रकाशीय किरणों के दैर्घ्य से बहुत कम था। वे ठोस पदार्थो के बीच से भी निकल सकती थी। इन किरणो का नाम उसने एक्स-रे[4] अथवा रंटगन-रे रखा। एक्स-रे विकिरण बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। इससे शरीर की हड्डियों का चित्र सरलता से लिया जा सकता है। अब तो औषधि-विज्ञान तथा औद्योगिक कार्यों में एक्स-रे का अत्यधिक उपयोग होता है।

एक्स-रे की खोज के थोड़े काल के अनन्तर एक फ्रांसीसी वैज्ञानिक

1 William Roentgen
2. Electrodes
3 Wave-length
4. X-ray, Roentgen-Ray

हेनरी बेक्वरल[1] ने एक दूसरी आश्चर्यजनक खोज की। वह विभिन्न अयस्कों[2] के गुणों पर प्रयोग कर रहा था। अकस्मात् उसने यूरेनियम के अयस्क को एक काले कागज में लिपटी फोटोग्राफी प्लेट पर रख दिया। उस प्लेट को विकसित करने पर उसने देखा कि ठीक उसी स्थान पर अयस्क की छाप बन गयी। अन्य अयस्कों में से थोरियम के अयस्कों ने भी प्लेट पर उसी प्रकार अपनी छाप डाली। उसने इन अयस्कों से निकलने वाली किरणों को बेक्वरल किरणों के नाम से पुकारा। कुछ समय पश्चात् पियर क्यूरी तथा मेरी क्यूरी ने बेक्वरल किरणों पर अन्वेषण किया। उन्होंने देखा कि ये किरणें एक नव तत्त्व से, जो यूरेनियम के अयस्क में सदैव सूक्ष्म मात्रा में पाया जाता है, विशेषत निकलती थी। उन्होंने इस तत्त्व का नाम रेडियम रखा। विशुद्ध रेडियम तत्त्व अंधेरे में द्युतिमान्, तथा ऊष्मा-ऊर्जा का विकिरण करता है। इनसे भयंकर फफोले पड़ जाते हैं। क्यूरी के अनुसन्धानों से ज्ञात हुआ कि कुछ अन्य तत्त्व, जैसे थोरियम, यूरेनियम, पोलोनियम, रेडान, में भी इसी प्रकार के गुण वर्तमान हैं। इस प्रकार की विकिरण-सामर्थ्य वाले तत्त्वों के गुण को रेडिय-धर्मिता या विकिरण-शीलता कहने लगे।

सर्व-प्रथम रदरफोर्ड ने रेडियधर्मिता की विवेचना प्रस्तुत की। रदर-फोर्ड न्यूजीलैंड के नागरिक थे। उच्च शिक्षा के हेतु वे जे० जे० टामसन के पास इंग्लैण्ड आये थे। अन्त में वे इंगलैण्ड में ही रहने लगे। रदर फोर्ड तथा साडी[3] ने सन् १९०२ में यह प्रकाशित किया कि बेक्वरल किरणें अस्थिर परमाणुओं के कारण अद्भुत है। परमाणु-विच्छेदन से एक प्रकार का विस्फोट होता है जिससे तीन तरह की किरणें निक-लती है। इन्हें क्रमश. अल्फा-किरण[4] बीटा-किरण[5], तथा गामा-किरण[6]

1 Henri Becqueral 2. Ores 3. Soddy
4. (∝–ray), 5. (β–ray) 6. γ–ray

गामा विकिरण
(γ फ़ोटोन)
अल्फ़ा कण
(α)
बीटा कण
(β⁻ इलेक्ट्रोन)
धन विद्युदग्र
ऋण विद्युदग्र
बीटा कण
(β⁺ पाज़िट्रान)
रेडियधर्मी स्रोत
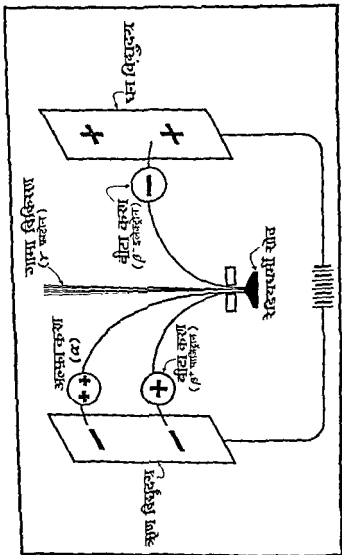
नाम दिये गये हैं। अल्फा-किरण आवेशयुक्त हीलियम परमाणु है। इन्हे हीलियम का नाभिक भी कह सकते है। बीटा किरण स्वयम् ही इलेक्ट्रान है। गामा-किरण लगभग एक्स-रे के समान गुण वाले विकिरणो का ही नाम है।

अल्फा-किरण के कण वे हीलियम परमाणु है जिन पर दो विद्युत् घन आवेश होता है। इनका परमाणु-भार ४ है। बीटा किरण के कणों में एक विद्युत् ऋण आवेश होता है। उनका भार एक हाइड्रोजन के नाभिक भार का $\frac{1}{1840}$ वा भाग है। इस प्रकार उनका भार परमाणु-भार की तुलना मे शून्य ही माना जाता है। यदि अल्फा-किरण किसी नाभिक से निकल जाय तब उसका भार ४ अश तथा नाभिक आवेश २ अश कम हो जाता है। दूसरी ओर नाभिक से एक बीटा-कण निकल जाने पर भार तो उसका उतना ही रहता है, परन्तु आवेश एक अश बढ जाता है। (नाभिक पर घन आवेश है। उसमे से एक ऋण आवेश निकल जाने पर घन आवेश मे एक की वृद्धि होगी)। गामा-किरण निकलने पर नाभिक के भार या आवेश पर कुछ अतर नही पड़ता।

प्रकृति में रेडियधर्मी रूपान्तरण की शृंखला पायी जाती है। रेडियम विच्छेदन की शृंखला निम्न प्रकार होगी—

	रेडियम	$\xrightarrow{\alpha}$ (अल्फा)	रेडान	$\xrightarrow{\alpha}$ (अल्फा)	रेडियम-ए (पालोनियम)	$\xrightarrow{\alpha}$ (अल्फा)
भार	२२६		२२२		२१८	
आवेश	८८		८६		८४	

	रेडियम-बी (सीसा)	$\xrightarrow{\beta}$ (बीटा)	रेडियम-सी (बिसमथ)	$\xrightarrow{\beta}$ (बीटा)	रेडियम-डी (पोलोनियम)	$\xrightarrow{\alpha}$ (अल्फा)	रेडियम-ई (सीसा)
भार	२१४		२१४		२१४		२१०
आवेश	८२		८३		८४		८२

यूरेनियम तथा थोरियम भी इसी प्रकार शृंखलाबद्ध विच्छेदित होते हैं और अनेक परमाणुओं को जन्म देते हैं। इस समय चालीस प्रकार के रेडियो-तत्त्व प्राकृतिक विच्छेदन मे मिलते है। ये सारे तत्त्व रेडियधर्मी हैं।

यह तो रही प्राकृतिक रेडियधर्मिता की बात। अब वैज्ञानिकों का चमत्कार देखिये। इस समय तक लगभग सारे तत्त्वों के कृत्रिम रेडियधर्मी समस्थानिक बनाये जा चुके है। कुछ ऐसे तत्त्व भी है जो प्रकृति में नही पाये जाते, परन्तु कृत्रिम रूप मे बनाये गये हैं। ये भी रेडियधर्मी हैं।

रेडियधर्मिता का क्षय तथा अर्धजीवन अवधि

रेडिय तत्त्वो से तीन प्रकार की किरणे निकलती है। ये किरणें नियमानुसार ही निकला करती है। उदाहरण के लिए एक ग्राम यूरेनियम ले लीजिए। इस समात्रा में से लगभग २४०० अल्फा-कण प्रति सेकेंड निकलेंगे। इस प्रकार यूरेनियम के २४०० परमाणुओं का प्रति सेकेंड विच्छेदन होगा। यह सख्या साधारणत बड़ी ज्ञात होती है, परन्तु एक ग्राम यूरेनियम के सम्पूर्ण परमाणुओ की दृष्टि से वह बहुत ही न्यून है। इस समूची समात्रा के आधे परमाणुओं के विच्छेदन में ४५० करोड़ वर्ष लग जायेंगे। यह पहले बताया जा चुका है कि यूरेनियम परमाणु के विच्छेदन से उत्पन्न परमाणु अस्थिर होने के कारण, बीटा-कण निकालता है। इस रूपातरण के एक बार प्रारम्भ होने पर क्रिया की शृखला चलती रहती है। प्रत्येक दशा पर अस्थिर परमाणु बनता है जो स्वयं दूसरे को जन्म देता है। यूरेनियम शृखला मे पाँचवा स्थान रेडियम का है।

किसी रेडिय-तत्त्व की सक्रियता समयानुसार कम होती जाती है। उस सक्रिया में परिवर्तन के कुछ नियम हैं। जितने काल में किसी तत्त्व की रेडियधर्मिता का आधा भाग रह जाता है, उस काल को अर्धजीवन अवधि कहते हैं। यह बात चित्र देखने से भलीभाँति समझी जा सकती है। प्रत्येक रेडियधर्मी तत्त्व की अर्धजीवन-अवधि स्थिर होती है। यह स्थिरांक तत्त्व की मात्रा पर निर्भर नहीं होती, वरन् यदि हम उस तत्त्व की किसी भी
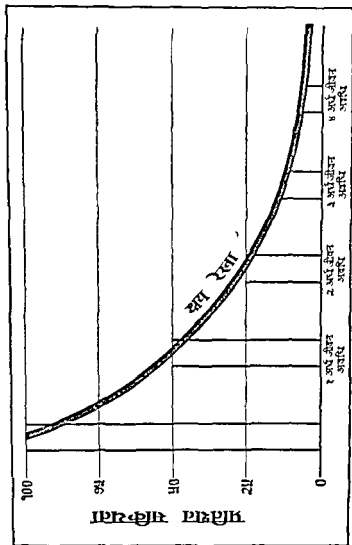
चित्र संख्या २—अर्धजीवन अवधि का अर्थ

मात्रा से आरम्भ करें तो स्थिर समय के पश्चात् उसकी आधी मात्रा रह जायगी। यदि हम मात्रा १ से चलें तो 'क' समय के पश्चात् वह ½ रह जाती है, फिर यदि ½ से चलें तो भी समय 'क' के पश्चात् ½ का ½ अर्थात् ¼ रह जायगी।

विभिन्न तत्त्वों के अर्धजीवन काल अलग-अलग होते हैं। उदाहरण के लिए रेडियम का अर्धजीवन काल लगभग १६०० वर्ष है और यूरेनियम का ४५० करोड़ वर्ष और रेडियम सी०, का $\frac{१}{१०,००,०००}$ सेकेंड है।

हम जानते हैं कि तत्त्व के रासायनिक गुण उसके नाभिक आवेश अथवा परमाणु-संख्या पर निर्भर होते है। अल्फा या बीटा कण निकल जाने मे तत्त्व एक दूसरे मे परिवर्तित हो जाते हैं। यह ध्यान देने योग्य है कि अल्फा या बीटा-किरण निकल जाने से अत्यधिक मात्रा मे ऊर्जा मुक्त होती है। यदि रेडियम की थोडी मात्रा बन्द नली मे रख दी जाय तो उससे निकलने वाले कण रेडियम अथवा बद दीवार से टकरायेंगे। वे अपनी गतिज ऊर्जा ऊष्मा में परिवर्तित करते रहते हैं जिससे नली का ताप बाहर से कुछ अधिक रहता है।

रेडियधर्मी रूपातरण स्वत. होता और नियन्त्रण में नही रह सकता। चरम ऊष्मा या शीत का इस क्रिया पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता। हम उसे केवल देख सकते हैं, उस पर अनुसन्धान कर सकते हैं, परन्तु उसे परिवर्तित नही कर सकते।

अध्याय ३

मूलभूत कण

जिन कणो की प्रतिक्रिया और सयोग द्वारा समस्त ब्रह्माण्ड का निर्माण हुआ है, उनको हम मूलभूत कण कह सकते है। यह एक ऐसा पारिभाषिक शब्द है जिसकी सज्ञा प्राचीन काल से बदलती आयी है। न्यूटन के समय की विचारधारा के अनुसार हर एक वस्तु के पृथक् पृथक् मूलभूत कण थे। उदाहरणार्थ जल, वायु, लौह, नमक, काच आदि हर एक वस्तु के विभिन्न कण माने जाते थे। उन्नीसवी शताब्दी मे रसायनज्ञो के कार्यों से ज्ञात हुआ कि ससार की सारी वस्तुएं लगभग ९० तत्वों से बनी है।

१९१० के लगभग परमाणु के अन्दर की एक झलक मिली। यह ज्ञात हुआ कि परमाणु एक ठोस गोला नही है, वरन् उसके अन्दर एक नन्हा नाभिक है जिसके चारो ओर इलेक्ट्रान परिक्रमा करते है। इसके दस वर्ष पश्चात् नाभिक का भी विखण्डन हुआ। तत्पश्चात् अन्य प्रयोगो द्वारा ज्ञात हुआ कि नाभिक भी अटूट नही है वरन् दो प्रकार के कणो से बना है जिन्हे वैज्ञानिको ने न्यूट्रान एव प्रोटान कहा। इस प्रकार परमाणु की ऊपरी खाल निकालने के पश्चात् हमे यह ज्ञात हुआ कि जिन ९० तत्वो को हम मूलभूत समझे बैठे थे वे सारे तीन प्रकार के कणो द्वारा निर्मित है, प्रोटान, न्यूट्रान और इलेक्ट्रान।

इनके साथ भौतिक शास्त्रियो ने प्रकाश-कण अथवा फोटान को भी जोड़ दिया। यह कण समय-समय पर एक्स-रे, गामा विकिरण, फोटान आदि अनेक रूपों मे दिखाई देता है। कभी इसका तरग रूप रहता है और कभी कण रूप । इस द्वैतवाद को समझने का श्रेय आधुनिक भौतिकी को

है जिसने यह बताया है कि यह द्वैतवाद केवल फोटान मे ही नही है वरन् हर कण मे पाया जाता है। हर कण में तरग गुण भी वर्तमान है या हम यह कहें कि प्रकाश-तरंग भी उसी प्रकार का कण है, जैसे इलेक्ट्रान, प्रोटान आदि।

नाभिक रसायन, नाभिक यान्त्रिकी

इन चार कणो के मूलभूत कण होने का सुनहरा स्वप्न भी शीघ्र ही ढह गया। वर्तमान समय मे भौतिकी के क्षेत्र मे विशेष प्रगति प्रयोगशाला तथा सैद्धान्तिक अनुसन्धान दोनो ही क्षेत्रों मे हुई। भौतिकी ज्ञान का अंतरिक्ष सदा बदलता रहा है। इस अलौकिक विज्ञान के कार्यकर्ता बड़ी तीव्र गति से ज्ञान-सीमा बढा रहे हैं। गेलीलियो और न्यूटन के भौतिकी सिद्धान्तों से इन्जीनियरी की यान्त्रिक शाखाएँ निकली। तीस-चालीस वर्ष पहले भौतिक शास्त्री रेडियो तरंगे, इलेक्ट्रान-विज्ञान, प्रकाश-विज्ञान, वर्णक्रम-विज्ञान, आदि के अनुसन्धान में तन्मय थे। आज वे इन विषयो को छोड़ चुके है और इस समय इन विषयों पर इंजीनियरी और रसायन के विशेषज्ञ कार्य कर रहे हैं। यहाँ तक कि पिछले पन्द्रह वर्षों पहले की नाभिक भौतिकी से आज नाभिक रसायन और नाभिक यान्त्रिकी नामक विषय उत्पन्न हो गये हैं।

आज का भौतिक शास्त्री एक ओर ब्रह्माण्ड के निर्माण की समस्या को सुलझा रहा है और दूसरी ओर अणु, परमाणु, नाभिक को पार करता हुआ न्यूट्रान, प्रोटान की बनावट पर ध्यान दे रहा है। उसने ज्ञात किया कि नाभिक के अन्दर न्यूट्रान और प्रोटान एक अभूतपूर्व प्रतिक्रिया द्वारा जुडे हैं। इस अनुसन्धान मे मेसान आदि कुछ अन्य कणो का भी ज्ञान प्राप्त हुआ। अब प्रोटान भी विखण्डित हो गया और उसके अन्दर की बनावट का भी ज्ञान सगृहीत हो रहा है। यह ज्ञान अत्यन्त क्लिष्ट, अभूतपूर्व एवं अप्रत्याशित होते हुए भी विस्मयजनक और सौन्दर्यपूर्ण है।

जैसा कि ऊपर संकेत किया गया है, इन मूलभूत कणों को नये सम्यक् उपकरणो द्वारा देखने से पता चलता है कि इनके अन्दर भी अनेक विचित्र कण उपस्थित हैं।

उच्च ऊर्जाशील कणदण्ड इस अनुसन्धान के मुख्य अस्त्र है। इनके द्वारा ही वैज्ञानिक परमाणु-जगत की खोज करता है। द्रव्य की परम सरचना का ज्ञान प्राप्त करने के लिए कणत्वरक नितान्त आवश्यक है। इन विशाल उपकरणों में इलेक्ट्रान, प्रोटान आदि कणो को प्रचण्ड मात्रा मे त्वरित करते है। ये त्वरित कण नाभिक का वेधन कर उसकी जाँच करते है। इन कणदण्डों द्वारा परमाणु नाभिक से फोटान, न्यूट्रान, मेसान आदि को मुक्त करता है। ये मुक्त कण स्वयम् अनुसन्धान मे उपयोगी सिद्ध हुए है।

इस समय तक लगभग तीस उप-परमाणविक कण ज्ञात है। अभी तक उनकी रचना ज्ञात नही हो सकी, न उनकी प्रतिक्रियाएँ ही पूर्णतया विदित हो पायी है। उनके सयोजन से ही सारे द्रव्य का निर्माण होता है। इस समय यही हमारे मूलभूत कण है। अभी इनकी सख्या मे वृद्धि या कमी हो सकती है। इन कणो के भार, विद्युत आवेश, और प्रतिक्रिया स्वभाव का पता लगाया जा चुका है।

आइस्टान के सापेक्षवाद के आधार पर यह अनुमान किया गया कि प्रत्येक कण का एक विपरीत प्रतिकण भी होना चाहिए। प्रतिकणो की उपस्थिति प्रयोगो द्वारा सिद्ध हो चुकी है। कण और प्रतिकण के कुछ गुणो मे समानता और अन्य मे विषमता होती है। इनके भार तथा भ्रमि समान होते है और दूसरे कणो द्वारा होनेवाली प्रतिक्रियाओ मे भी समानता होती है। परन्तु इनके विद्युत आवेश विपरीत होते है।

कण तथा प्रतिकण के समीप आने पर दोनो पूर्णतया नष्ट हो जायेगे और उनकी समात्राएँ ऊर्जा में परिणत होकर वेगवान् प्रकाश तरगे उत्पन्न करेंगी। परमाणु बम मे तो यूरेनियम कण का अल्प भाग ही ऊर्जा मे परिणत होता है, परन्तु यहाँ तो सम्पूर्ण संमात्रा ही ऊर्जा में परिणत हो सकती है। इस प्रकार यह प्रतिक्रिया परमाणु बम से सहस्रों गुना शक्तिशाली होगी। वेगवान् कणों के आक्रमण द्वारा प्रतिकण उत्पन्न हो सकते हैं। परन्तु यह अपने समीप के कणों से मिलकर शीघ्र ही नष्ट हो जाते है। इस कारण यह

अनुमान है कि प्रतिकणों का हम संग्रह नहीं कर सकते। परन्तु क्या ऐसे ब्रह्माण्ड है जो प्रतिकणों द्वारा ही बने हो? उनका क्या स्वरूप होगा और वे किन नियमो से शासित होते होंगे? अभी हम इसका उत्तर देने में असमर्थ हैं।

इस समय हमारे मूलभूत कणों के संग्रहालय मे विचित्र जन्तु है। इनमे अधिकतर अत्यन्त अस्थिर है जिससे उनकी जीवन-अवधि क्षणिक होती है। ये शीघ्र प्रतिक्रिया करते है जिसमे ये तत्त्वांतरित हो सकते हैं या नष्ट हो सकते है। अंत मे इलेक्ट्रान, प्रोटान या न्यूट्रान बच रहता है और ऊर्जा का उदय होता है। भीमकाय त्वरको मे दी गयी विशाल विद्युत् ऊर्जा का अंत प्रकाश, ऊष्मा या न्यूट्रानो मे ही होता है। परन्तु इस घटना के मध्य में क्षणिक काल के लिए कुछ अद्भुत छटा दिखाई देती है जो भौतिक शास्त्रियों के ज्ञान की वृद्धि के लिए अमूल्य है।

अधिकांश भौतिक शास्त्रियो का विचार है कि यह सारे कण मूलभूत न होंगे। हो सकता है कि इसमे सत्यता हो। जिस प्रकार किसी समय हम आवर्त सारणी के सारे तत्त्वो को मूलभूत कहा करते थे, परन्तु हमारा वह विश्वास भ्रान्ति सिद्ध हुआ। उसी प्रकार हम इन कणो के बारे में भी स्पष्ट उत्तर देने मे असमर्थ है। आधुनिक त्वरकों द्वारा कणों की संरचना की धुंधली झलक ही मिल सकी है। इनका सफल विश्लेषण अधिक भीमकाय त्वरको द्वारा ही सभव हो सकेगा। क्वान्टम यान्त्रिकी के नियम परमाणुओं की प्रतिक्रिया मे अत्यन्त सफल सिद्ध हुए हैं। इनके द्वारा वैज्ञानिक अनेक विलक्षणताओ का सफल विवेचन कर सके है। परन्तु क्या यही नियम उप-पारमाणविक विमितियो मे भी सफल सिद्ध होंगे? यह सम्भव है कि ये नियम इन कणो के आकार की दूरी पर लागू न हो सकें। यह भी हो सकता है कि दिक्-काल सम्बन्धी हमारे विचार उप-पारमाणविक जगत् के लिए पर्याप्त न हों। क्या दिक् में कोई न्यूनतम दूरी है जिससे कम अन्तर तक हम नहीं पहुँच सकते?

अभी हमें यह ज्ञात नही कि इन विश्लेषणों से क्या खोजें होंगी, परन्तु

इतना निश्चित है कि इन अभूतपूर्व अनुसन्धानो से अनेक प्रश्नो के उत्तर मिलेंगे जिससे मनुष्य के ज्ञान की सीमा मे वृद्धि होगी।

आइए, अब हम इन कणो का निरीक्षण करे।

इलेक्ट्रान

सर्वप्रथम जे० जे० टामसन ने कहा था कि विद्युत् का निर्माण कणो से होता है। उसने विद्युद्विसर्जन के प्रयोगों द्वारा दिखाया कि ऋण विद्युदग्र[1] से कुछ किरणे निकलती है। ये किरणे विद्युदग्र से सीधी रेखा मे निकलती है और धन विद्युदग्र[2] की स्थिति मे प्रभावित नही होती। इन किरणो पर विद्युत् का ऋण आवेश रहता है। वास्तव मे ये ऋण विद्युत् के कण है। इन किरणो को विद्युदाविष्ट पट्टियों[3] के प्रभाव मे विक्षेपित किया जा सकता है। प्रभावशाली चुम्बक मे भी इनको मार्ग से विक्षेपित कर सकते है। इन किरणो मे प्रतिदीप्ति[4] का गुण होता है।

टामसन ने इन किरणो पर बडी सावधानी पूर्वक प्रयोग किये। उसने इनका वेग मालूम किया तथा इनके आवेश और समात्रा का अनुपात $\frac{e}{m}$ प्रयोगों द्वारा निकाला। अचम्भेवाली बात यह थी कि इनका वेग प्रत्येक प्रयोग में विभिन्न था, परन्तु $\frac{e}{m}$ अनुपात सर्वदा समान निकला। विभिन्न विसर्ग नलियों[5] तथा विभिन्न गैसों से $\frac{e}{m}$ का अनुपात एक ही मिला। इन अनुसंधानो के पश्चात् सन् १८९७ मे टामसन ने कहा "मैं इससे यह परिणाम निकालता हूँ कि ये पदार्थ के कणों द्वारा वाहित ऋण आवेशीय विद्युत् कण है।" बाद के अनुसन्धानो द्वारा अब हम यह जान गये हैं कि ये किरणें इलेक्ट्रान की धाराएँ थी। सन् १९०९ मे अमेरिकन वैज्ञानिक राबर्ट मिलिकन[6]

1. Negative electrodes
2. Positive electrodes
3. Charged plates
4. Fluorescence
5. Discharge tubes
6. Robert Millikan

ने अमेरिका के शिकागो विश्वविद्यालय में इलेक्ट्रान पर परम आवेश ज्ञात किया। इसके निमित्त उसने एक प्रयोग किया जो आलम्बित तैल बिन्दु विधि[1] नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस प्रयोग द्वारा इलेक्ट्रान पर ४.८×१०^{-१०} स्थि० वै० मा० (स्थिर वैद्युत मात्रक) ऋण आवेश और ८.१×१०^{-२८} ग्राम समात्रा स्थिर हुई। इतनी सूक्ष्म संख्याओं का अनुमान असम्भव-सा है। अब आइए, इलेक्ट्रान की संमात्रा की तुलना सबसे हलके तत्त्व "हाइड्रोजन" के परमाणु की संमात्रा से करें। हाइड्रोजन परमाणु की संमात्रा १.६७×१०^{-२४} ग्राम है। इस प्रकार हाइड्रोजन परमाणु इलेक्ट्रान से १८४० गुना भारी है।

प्रत्येक परमाणु मे इलेक्ट्रान रहते है और सारे इलेक्ट्रान एक से होते हैं, चाहे ये हाइड्रोजन के हो या यूरेनियम के। तुलना के हेतु इलेक्ट्रान का आवेश १ माना जाता है। परमाणु के आवेशों के माप की इकाई यही है, चाहे वह आवेश धन हो या ऋण। हाइड्रोजन के परमाणु मे १ इलेक्ट्रान रहता है जो नाभिक की परिक्रमा एक कक्षा मे करता है। हाइड्रोजन की परमाणु-सख्या भी एक है। यूरेनियम प्रकृति मे सबसे भारी तत्त्व है। उसके परमाणु में ९२ इलेक्ट्रान परिक्रमा करते हैं। उसकी परमाणु-संख्या ९२ है।

सारे पदार्थों में इलेक्ट्रान स्थित हैं। ये परमाणु के वे अंग है जो उसमें रासायनिक क्रियाएँ एवं परिवर्तन करते हैं। मनुष्य की जितनी भी दैनिक क्रियाएँ हैं, जैसे आग जलाना, भोजन पकाना व पचाना, शरीर को बढ़ाना आदि ये सब इलेक्ट्रान द्वारा ही सचालित होती हैं। अरबों इलेक्ट्रान बिजली के तारों मे घूमते हैं। इस प्रकार विद्युत् रूपी ऊर्जा का प्रवाह होता है जो हमारे नित्य-प्रति प्रयोग में आती है। बिजली के लैम्प के भीतरी तार[2] तन्तु मे इलेक्ट्रान का प्रवाह होने से यह दहकता है और हमे प्रकाश देता है।

1. Suspended oil drop method   2. Filaments

इलेक्ट्रान पंखे के मोटर के धात्र[1] में प्रवाहित होकर उसे घुमाते है जिससे हमें गर्मियों में सुखदायी वायु मिलती है। हमारे दैनिक जीवन के लिए इलेक्ट्रान बड़े उपयोगी है। रेडियो तथा टेलीविजन इलेक्ट्रान के कारण काम करते हैं। रेडियो के वाल्व इलेक्ट्रान प्रवाह से ही कार्य करते है। टेलीविजन का पटचित्र इलेक्ट्रान-दंड ही बनाते है।

पाजिट्रान

इंग्लैण्ड के एक प्रसिद्ध भौतिक शास्त्री डिरेक[2] ने सन् १९३० में यह तर्क रखा कि इलेक्ट्रान की तरह एक धन आवेश वाला ऐसा कण प्राप्त होना चाहिए जिसका भार तो इलेक्ट्रान के समान हो, आवेश भी समान हो, किन्तु जिसकी प्रकृति इलेक्ट्रान की विलोम (अर्थात् धन) हो।

सन् १९३२ में एंडरसन[3] ने केलीफोर्निया (अमेरिका) में इस कण को खोज निकाला। उसने विल्सन अभ्र प्रकोष्ठ में कणों के द्वारा निर्मित चिह्नों के चित्र लिये। इन चित्रों में कुछ चिह्न ऐसे कणों के थे जो इलेक्ट्रान के समान-भारीय तथा धन आवेश के ही हो सकते थे। ये कण द्रव्य पर अंतरिक्ष किरण[4] के आघात से पैदा होते थे। इनका जीवनकाल अत्यन्त सूक्ष्म था। एंडरसन ने इनका नाम पाजिट्रान[5] रखा।

बहुतेरे प्रयोगों के पश्चात् पाजिट्रान बड़ी कठिनता से देखने को मिला था। जिस प्रकार इलेक्ट्रान के विपरीत उद्भव के बाद यह द्रव्य में उपस्थित पाया जाता है उसी प्रकार यह द्रव्य में विद्यमान नही रहता, अपितु ज्यों ही इसका उद्भव होता है अल्प समय पश्चात् यह अनंत में विलीन हो जाता है। यह शीघ्र ही इलेक्ट्रान से मिल जाता है और इस क्रिया में दोनो का विनाश होकर

1. Armature 2. Dirac 3. Anderson
4. Cosmic Ray 5. Positron

ऊर्जा की उत्पत्ति होती है। इस कारण पाजिट्रान अधिक समय तक स्वतन्त्र अवस्था मे नहीं रह सकता।

पाजिट्रान की खोज तथा उसके गुणों के अध्ययन से इस ब्रह्माण्ड का एक अलौकिक तथ्य, कि दो कण मिलकर एक दूसरे का नाश कर सकते हैं और इस क्रिया मे ऊर्जा उत्पन्न होती है, प्रकाश मे आया। यह भी पता लगा कि इसके विपरीत अन्तरिक्ष या गामा-किरणें कणों में भी परिवर्तित हो सकती है और यह कि पदार्थ का ऊर्जा मे तथा ऊर्जा का पदार्थ में परिवर्तन इस ब्रह्माण्ड मे सदा से होता चला आ रहा है।

प्रोटान

इलेक्ट्रान की खोज के बाद, टामसन के शिष्य रदरफोर्ड ने परमाणु-रचना की ओर ध्यान दिया। परमाणु का वैद्युत रूप से निरपेक्ष होना ज्ञात ही था। परमाणु में इलेक्ट्रान की उपस्थिति भी सिद्ध हो गयी थी। अतः अब अनुमान इस बात का था कि यत: इलेक्ट्रान मे ऋण विद्युत् का आवेश है इस कारण घन विद्युत् आवेशमय कण की सत्ता भी अवश्य होनी चाहिए। अन्य वैज्ञानिक भी घन विद्युत कण की खोज कर रहे थे और अनेक प्रयोगों द्वारा प्रोटान की पहचान भी की गयी। सन् १८८६ में जर्मन वैज्ञानिक गोल्डस्टाइन[1] ने घन किरणों की खोज की। ये किरणें भी विसर्ग नली में पायी गयी परन्तु, ये इलेक्ट्रान-दंड के विपरीत दिशा की ओर चलती हैं। टामसन ने घन किरणों का सुचारु रूप से परीक्षण किया और इस कार्य मे समस्थानिक तत्त्वो की खोज हुई। इसका वर्णन आगे किया जायगा। इस कार्य को और सूक्ष्मता से एस्टन ने किया। उसने एक यंत्र बनाया जिसको परमाणु-भार वर्णक्रमलेखी[2] या मास स्पेक्ट्रोग्राफ कहते हैं। इसके द्वारा परमाणुओं की समात्राओ का सूक्ष्म अन्तर ज्ञात हो सकता है।

1. Goldstein 2. Mass spectroscope

इन अनुसन्धानों से ज्ञात हुआ कि हाइड्रोजन का आवेशयुक्त परमाणु
व से छोटा धन आवेशयुक्त कण है। इसके पश्चात् रदरफोर्ड द्वारा किये
ा रहे कृत्रिम तत्वांतरण विषयक प्रयोगो के समय हाइड्रोजन का धना-
शयुक्त परमाणु मुक्त हुआ। उन्होंने नाइट्रोजन, सोडियम, एल्यूमिनियम
ादि तत्वों पर अल्फा कण का आक्रमण किया। इसके परिणामस्वरूप
इड्रोजन का आवेशयुक्त परमाणु मुक्त हुआ। इस क्रिया को निम्न
प से लिखा जा सकता है—

$$_{७}\text{नाइट्रोजन}^{१४} + _{२}\text{हीलियम}^{४} \dashrightarrow _{८}\text{आक्सीजन}^{१७} + _{१}\text{प्रोटान}$$

$$_{7}N^{14} + _{2}He^{4} \dashrightarrow _{8}O^{17} + _{1}H^{1}$$
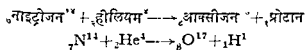
त समीकरण मे सकेत के ऊपरी अक प्रत्येक कण की समात्रा तथा नीचे के
क नाभिक आवेश बताते है।

इन क्रियाओ के बाद रदरफोर्ड ने १९२० मे बताया कि धनावेशयुक्त
इड्रोजन परमाणु एक मूलभूत कण है। यह प्रत्येक परमाणु मे उपस्थित है।
न्होंने इसका नाम प्रोटान प्रस्तावित किया जिसे विज्ञान-ससार ने सहर्ष
वीकार किया। अब प्रोटान एक मूलभूत कण माना जाता है। यह
मस्त परमाणु-रचना की एक आवश्यक ईंट है। किसी परमाणु मे इसकी
पस्थित सख्या उसकी परमाणु-सख्या बताती है। परमाणु-रचना विषयक
स्तृत विवरण अन्यत्र मिलेगा।

ति-प्रोटान

डिरेक के सिद्धान्त का अनुसरण करने से पाजिट्रान की खोज हुई। यह
लेक्ट्रान का प्रतिकण है। इसके बाद वैज्ञानिको ने परिमाणिक अनुमान किया
प्रोटान का भी ऐसा ही प्रतिकण होना चाहिए जिसका भार तो प्रोटान
समान होना चाहिए, पर आवेश उसके विपरीत (१ ऋण मात्रक) हो।

अतरिक्ष किरणो या अत्यन्त ऊर्जाशील कणों के द्रव्य पर प्रतिक्रिया
रने से इलेक्ट्रान-पाजिट्रान युग्म उत्पन्न होते है तथा इसकी पुष्टि अनेक

प्रयोगों द्वारा हो चुकी थी। अनुमान किया गया कि प्रोटान, प्रति-प्रोटान युग्म उत्पन्न करने के लिए लगभग दो सहस्र गुना अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होगी। यह ऊर्जा अंतरिक्ष किरणों द्वारा प्राप्त हो सकती है और अंतरिक्ष किरणों के चित्रों की विवेचना द्वारा अनेक वैज्ञानिकों ने प्रति-प्रोटान की खोज के दावे किये थे, परन्तु इनकी पुष्टि न हो सकी।

१९५५ में केलीफोर्निया विश्वविद्यालय का बीवाट्रान[1] नामक त्वरक महत्तम ऊर्जा से कार्य करने लगा जिसके द्वारा प्रथम बार उच्चतर ऊर्जा का नियंत्रित स्रोत उपलब्ध हुआ। इसके द्वारा इतनी ऊर्जा प्राप्त हो सकती थी कि जिससे प्रोटान, प्रति-प्रोटान युग्म उत्पन्न हो सके। अक्टूबर १९५५ में सेग्रे, चेम्बरलेन एवं अन्य सहकार्यकर्ताओं की विज्ञप्ति के अनुसार बीवाट्रान उपकरण के द्वारा प्रति-प्रोटान की खोज हुई। उन्होंने इस कण की खोज की तथा प्रोटान, प्रति-प्रोटान प्रतिक्रिया द्वारा द्रव्य के नष्ट होने का अद्भुत चमत्कार देखा।

न्यूट्रान

यह आश्चर्यजनक बात है कि न्यूट्रान की खोज के बहुत पहले तीन वैज्ञानिकों ने उसके अस्तित्व के विषय में भविष्यवाणी की थी। अमेरिका में हार्किंस[2], आस्ट्रेलिया में मेसन[3] और इंग्लैण्ड में रदरफोर्ड ने विचार व्यक्त किया कि अवश्य ही कोई ऐसा मूलभूत कण होना चाहिए जिस पर कोई विद्युत् आवेश न हो और जिसका भार हाइड्रोजन परमाणु के बराबर हो। इस कण का नामकरण उसकी खोज से पहले ही हार्किंस ने कर दिया था।

आइए, हम यह देखें कि ऐसे कण में कौन-कौन से गुण-धर्म होंगे। इस कण पर कोई आवेश न होगा, इस कारण उस पर विद्युत् क्षेत्र का कोई

1. Bevatron　　2. Harkins　　3. Masson

प्रभाव न होगा। यह ठोस प्रतिरोध के बीच मे निःशंक निकल जायगा। इसको पहचान पाना भी कठिन होगा क्योंकि यह अपने मार्ग के चारों ओर आयनीकरण न करेगा (आयनीकरण एक गुण है जो आवेशयुक्त कणो में होता है। इसकी चर्चा आगे होगी)।

जब न्यूट्रान की खोज सफल हुई और उसके गुण देखे गये तब ऊपर लिखित सारे विचार सही उतरे। न्यूट्रान ने परमाणु-विज्ञान मे बड़ा भारी ऐतिहासिक कार्य किया।

न्यूट्रान की खोज को सफल बनाने मे दो प्रयोगो का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इनमे से एक प्रयोग जर्मनी मे बोथे तथा बेकर[1] ने १९३० मे किया तथा दूसरा बेरीलियम पर परमाणु विखण्डन का १९३२ मे फ्रास मे जोलियट-क्यूरी[2] ने। इन दोनो निरीक्षणो का तब सही उत्तर नही मिला था। उसी समय रदरफोर्ड के शिष्य चैडविक[3] ने दोनो प्रयोगो के बारे मे अपने विचार प्रगट किये। उसने कहा कि इन प्रयोगो मे एक ऐसा कण निकलता है जिसका भार हाइड्रोजन के बराबर है, परन्तु आवेश न्यून है। न्यूट्रान की खोज होते ही उसे एक मूलभूत कण मान लिया गया। आवेश-युक्त कण में आयनीकरण का गुण होता है। इस कारण वे अपने मार्ग मे आयनों का सकेत मार्ग छोड़ते जाते है। इस गुण का लाभ उठाकर विल्सन ने एक अभ्र प्रकोष्ठ बनाया जिसमे प्रोटान, इलेक्ट्रान आदि अपने मार्ग पर वाष्प की रेखा बनाते थे। परन्तु न्यूट्रान के आवेशरहित होने के कारण कोई चिह्न नही बनता था। न्यूट्रान द्रव्य के बीच मे कणों से टकराता हुआ टेढी-मेढी गति से चलता है। धीरे-धीरे उसका वेग कम होता जाता है और अन्त मे वह रुक जाता है। परन्तु वह सीसा-जैसे भारी परमाणु से टकराये तो उतने ही वेग से वह वापस आ जाता है। उसके वेग मे शिथिलता

1. Bothe and Becker
2. Joliet-Curie
3. Chadıvick

नहीं आती। कभी-कभी न्यूट्रान सीसे की मोटी तह से भी छन कर बाहर निकल जाता है। और कभी जल की पतली दीवार ही उसे रोकने में पर्याप्त समर्थ होती है।

खोज के पश्चात्, न्यूट्रान बहुतेरी अनुसन्धान शालाओं में पहचाना जा चुका है और अब एक स्वर से उसे मूलभूत कण माना जाता है।

प्रति-न्यूट्रान

अनेक कणों के प्रतिकणों की उपस्थिति के प्रमाण मिल चुकने के पश्चात् वैज्ञानिकों का विचार हुआ कि प्रति-न्यूट्रान की खोज भी सम्भव है। प्रति-न्यूट्रान भी दूसरे प्रतिकणों की भाँति सामान्य द्रव्य में न रह सकेगा, परन्तु उसका निर्माण क्षण-कालिक होना ही सम्भव था।

यह हम पहले देख चुके हैं कि प्रोटान, प्रति-प्रोटान दोनों का विध्वंस प्रतिक्रिया द्वारा हो सकता है। परन्तु यदि दोनों कण इतने निकट न आयें कि वे ध्वंस हो जायँ तो यह भी सम्भव है कि एक कण अपना आवेश दूसरे कण को स्थानान्तरित कर दे। इसके फलस्वरूप दोनों कण आवेशरहित हो जायेंगे और न्यूट्रान तथा प्रति-न्यूट्रान का निर्माण होगा।

प्रोटान + प्रतिप्रोटान → न्यूट्रान + प्रतिन्यूट्रान

१९५६ में केलीफोर्निया विश्वविद्यालय के बीवाट्रान त्वरक द्वारा इस कण की खोज इसी प्रतिक्रिया द्वारा की गयी। प्रतिन्यूट्रान तथा न्यूट्रान मिलने से दोनों नष्ट हो जाते हैं और मिलने के फलस्वरूप प्रकाश की आभा उत्पन्न होती है। इसी प्रकाश द्वारा प्रति-न्यूट्रान की उत्पत्ति की पहचान हो सकी थी।

न्यूट्रान और प्रति-न्यूट्रान दोनों ही आवेशरहित कण होंगे। यह प्रश्न उठ सकता है कि दोनों में क्या अन्तर है? वैज्ञानिकों का अनुमान है कि दोनों के चुम्बकीय गुण विपरीत होंगे।

न्यूट्रिनों

अनेक रेडियतत्त्वों से बीटाकण मुक्त होते है। अल्फाकणों के विपरीत

इन बीटाकणों की ऊर्जा समान नही होती। ये कण भिन्न-भिन्न ऊर्जायुक्त होते है जिनकी एक महत्तम सीमा रहती है। यह निरीक्षण-ऊर्जा अक्षयता-वाद के विपरीत पडती थी। इस समस्या के समाधान के हेतु प्रसिद्ध स्विटजरलैण्ड निवासी भौतिक शास्त्री वुल्फगैंग पाउली ने १९३१ मे एक सिद्धान्त प्रस्तुत किया।

इस सिद्धान्त के अनुसार रेडियधर्मी तत्वो मे इलेक्ट्रान मुक्त होते समय एक और कण भी स्वतन्त्र होता है जो आवेशरहित है और जिसका भार शून्य ही है। इस कण का नाम न्यूट्रिनो रखा गया। अब यह ज्ञात है कि नाभिक मे इलेक्ट्रान स्वतन्त्र अवस्था मे उपस्थित नही रहते, वरन् एक प्रतिक्रिया द्वारा उत्पन्न होते है और उसी क्षण मुक्त हो जाते है। यह क्रिया निम्नरूप मे लिखी जा सकती है :—

न्यूट्रान→प्रोटान+इलेक्ट्रान - न्यूट्रिनो

पाउली ने यह अनुमान किया कि इस प्रतिक्रिया द्वारा उदित ऊर्जा इलेक्ट्रान तथा न्यूट्रिनो मे विभाजित रहती है। प्रत्येक परमाणु मे दोनो का योग स्थिर रहता है, परन्तु अनुपात भिन्न-भिन्न रहता है। इसी कारण विभिन्न ऊर्जा-युक्त इलेक्ट्रान दृश्य होते है। इस सिद्धान्त के अनुसार न्यूट्रिनो कण आवेशरहित होगा और उसका भार शून्य होगा। इसको देखना या इसके द्वारा प्रतिक्रिया करना अत्यन्त कठिन होना चाहिए।

परमाणु-विखण्डन प्रयोगो द्वारा ऐसे अनेक रेडिय समस्थानिक बनाये गये है जो पाजिट्रान (धन इलेक्ट्रान) को मुक्त करते है। इस ओर अन्वेषण करने पर ज्ञात हुआ है कि मुक्त पाजिट्रान भी बीटा कणो की भाँति समान ऊर्जाशील नही होते है। इस कारण यह अनुमान है कि इन क्रियाओं द्वारा भी न्यूट्रिन मुक्त होंगे।

न्यूट्रिनो की पहचान करने के अनेक प्रयत्न किये गये। १९४२ मे ऐलेन ने बेरीलियम समस्थानिक पर प्रयोग किये जिनके द्वारा अवैयक्तिक विधि से न्यूट्रिनो की उपस्थिति का आभास हो सकता था। १९५६ में सेवानाह नदी पर स्थित सयुक्त राष्ट्र अमेरिका के परमाणु ऊर्जा आयोग की

पाइ-मेसान→म्यू-मेसान→इलेक्ट्रान या पाजिट्रान

निरावेश म्यू-मेसान की उपस्थिति की कोई पुष्टि अभी तक नहीं मिल सकी।

मेसान कणो को निम्न तालिका में दिया जा रहा है—

हल्के मेसान के गुण

कण का नाम	संकेत	भार	जीवन अवधि (सेकेंड)
ऋण पाई-मेसान	π^-	२७३.८	२.५×१०^{-८}
धन पाई-मेसान	π^+	२७३.३	२.५×१०^{-८}
शून्य पाई-मेसान	π^0	२६४.३	५×१०^{-१५}
ऋण म्यू-मेसान	μ^-	२०६.७	२.१५×१०^{-६}
धन म्यू-मेसान	μ^+	२०६.७	२.१५×१०^{-६}

नोट—इस तालिका में इलेक्ट्रान का भार कणों के भार का मानक है।

गुरु मेसान अथवा के-मेसान

लगभग १९४७ से कुछ ऐसे कणों की खोज हुई है जो पाई-मेसान से भारी हैं, परन्तु प्रोटान से हल्के हैं। इन कणों को के-मेसान कहा जाता है। ये धनावेशयुक्त, ऋणावेशयुक्त और निराविष्ट अवस्थाओं में पाये जाते है। इनकी पहचान अंतरिक्ष किरणों एवं अनुसन्धान शालाओं में हो चुकी है। इन कणों की न्यूनतम संख्या १० मानी जाती है जिनमें चार धनावेशयुक्त, (थीटा+ θ^+, टाऊ+ τ^+, टाऊ′+ τ'^+ और कप्पा+ K^+) चार ऋणावेश युक्त (थीटा− θ^- टाऊ− τ^- टाऊ′− $\tau^{-\prime}$ और कप्पा− K^-) और दो निरावेश है। (के$_1$° K_1° अथवा थीटा° θ° और के$_2$° K_2^0)

इन सारे कणों का भार इलेक्ट्रान से लगभग ९६६ गुना अधिक है। ये अत्यन्त अल्पजीवी हैं। ये शीघ्र ही पाई या म्यू-मेसान में परिणत हो जाते है।

के-मेसान नाभिक पर वेगवान् प्रोटान या ऋणाविष्ट म्यू मेसान के आक्रमण से बनते हैं। कभी कभी ये नाभिक विच्छेदन द्वारा मुक्त होते

पाये गये है। इस कारण हम यह मान सकते है कि इनकी उत्पत्ति दो नाभिकीय प्रतिक्रियाओ द्वारा होती है। ऐसा सम्भव है कि अन्तर-नाभिकीय शक्तियो मे इनका हाथ रहता हो। के-मेसानों के कुछ अद्भुत गुणो के कारण इन्हे विचित्र कणों[1] के परिवार मे रखा जाता है। ऐसे अन्य कणो का जिन्हे हाइपेरान कहते है, आगे वर्णन किया जायगा।

के-मेसान समूह के कणों के गुणों का विवरण निम्नतालिका मे दिया है —

के-मेसान के गुण

कण का नाम	सकेत	भार	जीवन अवधि (मेकेंड)
ऋण के-मेसान	K^-	९६६ ५	$१\ २ \times १०^{-८}$
धन के-मेसान	K^+	९६६ ५	$१\ २ \times १०^{-८}$
शून्य के-मेसान–१	K_1^0	९६५	$१०^{-१०}$
शून्य के-मेसान–२	K_2^0	९६५	$१०^{-८}$

नोट :—इलेक्ट्रान का भार इन कणो के दिये गये भार का मात्रक है।

हाइपेरान

सन् १९४९ से ही अभ्र कोष्ठक और प्रकाश-पायस प्रयोगो में कुछ ऐसे पथ दृष्टिगोचर हुए जो प्रोटान से भारी कणो द्वारा ही सम्भव थे। इनका सर्वप्रथम वर्णन ब्रिटेन मे मेन्चेस्टर विश्वविद्यालय के कार्यकर्ता राचेस्टर एवं बटलर ने किया था। इन्ही कार्यकर्ताओ ने के-मेसान की भी खोज की। ये कण भी विचित्र कणो की श्रेणी मे आते है। इन कण-समूहो को हाइपेरान कहा गया।

इन कणों की जीवन-अवधि $१०^{-१०}$ सेकेंड के लगभग होती है। वर्तमान सिद्धान्त के अनुसार इन कणो की जीवन-अवधि $१०^{-२३}$ सेकेंड होना चाहिए

1. Strange particles

थी। इस कारण इन कणो को विचित्र कण कहा गया। हाइपेरान के क्षय से प्रोटान या न्यूट्रान और पाई-मेसान उत्पन्न होते है।

इस परिवार मे अब तक सात कणों की खोज हो चुकी है। सर्वप्रथम लैम्डा-कण की खोज हुई थी जो निरावेश है। १९५८ में इसके प्रतिकण प्रति-लैमडा के पथ को प्रकाश-पायस द्वारा देखा गया था। १९५९ में इस कण को केलिफोर्निया विश्वविद्यालय की विकिरण प्रयोगशाला के बुदबुद कोष्टक में एलवेरेज ने भी देखा था। लैम्डा कण शीघ्र ही तत्वांतरित होकर प्रोटान और ऋण पाई-मेसान उत्पन्न करता है। इसके विपरीत प्रति-लैम्डा के क्षय द्वारा प्रति-प्रोटान और धन पाई-मेसान उत्पन्न होते हैं।

इस परिवार मे दूसरा समूह सिगमा-कणो का है। ये कण धन, ऋणाविष्ट एव निराविष्ट अवस्था मे भी पाये जाते हैं। धन सिगमा-कण का विच्छेदन दो प्रकार से सम्भव है। एक के द्वारा प्रोटान और निराविष्ट पाई-मेसान उत्पन्न होते हैं। दूसरी सभावना के अनुसार न्यूट्रान और धन पाई-मेसान उत्पन्न हो सकते हैं। इसके विपरीत ऋण सिगमा-कण के विच्छेदन से न्यूट्रान और ऋण पाई-मेसान उत्पन्न होते हैं। निराविष्ट सिगमा-कण विच्छेदित हो लैम्डा और गामा-विकिरण उत्पन्न करता है।

तीसरे जाई-समूह में अभी तक दो कणो की खोज हो सकी है। इन्हे प्रपात हाइपेरान भी कहते है। १९५२ में मैनचेस्टर विश्वविद्यालय की प्रयोगशाला मे अतरिक्ष विकिरण अनुसन्धानकर्ताओं ने ऋण जाई-कण की खोज की थी। तत्पश्चात् जापानी भौतिक शास्त्री ने जाई-शून्य कण के बारे में भविष्यवाणी की। १९५९ मे केलीफोर्निया विश्वविद्यालय के बुदबुद कोष्ठक द्वारा एल्वेरेज ने जाई-शून्य कण की भी खोज की। ऋण जाई-कण के विच्छेदन से ऋण पाई-मेसान और लैमडा-कणो की उत्पत्ति होगी। जाई-शून्य कण विच्छेदित हो निरावेश पाई-मेसान और लैम्डा-कण उत्पन्न करेगा।

हाइपेरान-कण मेसान-कण और नाभिक की प्रतिक्रिया द्वारा उत्पन्न होते हैं। इन्हे अन्तरिक्ष किरणों की प्रतिक्रिया तथा प्रयोगशाला की

कृत्रिम प्रतिक्रियाओं द्वारा उत्पन्न होते देखा गया है। नाभिक पर प्रतिक्रिया द्वारा उत्पन्न होने के कारण इन्हे उत्तेजित नाभिक समझा जा सकता है। जिस प्रकार सामान्य नाभिक उत्तेजित दशा मे फोटान मुक्त करते है उसी प्रकार हाइपेरान उत्तेजित दशा मे पाई-मेसान मुक्त करते है।

हाइपेरान-कणों के गुण निम्नलिखित तालिका मे दिये गये है। इन कणो के भार का मात्रक इलेक्ट्रान रखा गया है।

कण का नाम	सकेत	भार	जीवन-अवधि (सेकेंड)
लैम्डा	Λ°	२१८२	३×१०^{-१०}
प्रति लैम्डा	$\bar{\Lambda}^{\circ}$		
ऋण सिग्मा	Σ^{-}	२३४३	$१ ५ \times १०^{-१०}$
घन सिग्मा	Σ^{+}	२३२७	०.७×१०^{-१०}
सिग्मा शून्य	Σ°	लगभग २३२५	
ऋण जाई	Ξ^{-}	२५८५	लगभग २×१०^{-१०}
शून्य जाई	Ξ°		लगभग $१०^{-१०}$

हाइपर-खण्ड

यह मूलभूत कण नही है, परन्तु नवीनतम विचित्र कण है जिसकी सर्वप्रथम पहचान अतरिक्ष किरणो के प्रकाश-पायस पर बने पथ द्वारा हुई थी। १९५३ मे पोलैण्ड के दो वैज्ञानिको डैनिज एव न्यूविस्की[1] ने अपने अनुसन्धानो द्वारा इन कणो की उपस्थिति का अनुमान किया था।

ऋण मेसान या हाइपेरान द्वारा फोटोग्राफी पायस पर क्रिया करने से प्लेट पर तारिकाओ के आकार के चिन्ह् वन जाते है। इन नाभिज तारिकाओ के अध्ययन से यह ज्ञात हुआ कि इस क्रिया द्वारा हाइपर-खण्डों का निर्माण होता है।

1. Danysz and Pniewski

यह हाइपर-खण्ड क्या है ? ऐसा अनुमान है कि किसी तत्त्व के सामान्य नाभिक मे हाइपेरान (अधिकतर लैम्डा कण) का कण-जुड़ने से हाइपर खण्ड बनते है। इस रूप के अनेक तत्त्व-भार वाले हाइपर-खण्ड बने हैं जिनमे हाइड्रोजन–२, ३, ४, हीलियम–४, ५, लीथियम–६, ८, बेरिलियम–७, ८, ९, और कार्बन–११ मुख्य हैं। इन हाइपर-खण्डो के वास्तविक भार की निकटतम पूर्ण सख्या ऊपर अंकित है। हाइपर-खण्ड मे जुड़े हाइपेरान की बन्धन ऊर्जा न्यूट्रान अथवा प्रोटान की बन्धन ऊर्जा से कम होती है, जिस कारण हाइपर खण्ड अस्थिर कण होते है। हाइपर खण्डो का दो प्रकार से विच्छेदन हो सकता है। पहले के अनुमार एक पाई-मेसान मुक्त होता है जिसके साथ एक कण भी स्वतन्त्र हो सकता है—

हीलियम हाइपर खण्ड^{५*}→हीलियम^{४}+प्रोटान$^{+}$+ऋण पाई-मेसान

$$He^{5*} \rightarrow He^{4} + p^{+} + \pi^{-}$$
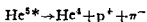
यह मार्ग दो मात्रक नाभिक आवेश के कणो तक सीमित रहता है। उससे अधिक आवेशयुक्त कणों द्वारा लैम्डा और कोई अन्य स्थिर कण (जैसे प्रोटान, न्यूट्रान) मुक्त होंगे।

उक्त विचित्र कणो की खोज ने वैज्ञानिकों के समक्ष अनेक समस्याएँ उपस्थित की है। अभी इन कणो का समुचित ज्ञान नही प्राप्त हो सका है और इसमें भी सन्देह है कि ये सारे कण वास्तव में मूलभूत कण है। इन समस्याओ का समाधान भविष्य के गर्भ में है।

अध्याय ४

परमाणु-संरचना

नाभिक

ब्रिटेन मे उन्नीसवी शताब्दी के प्रसिद्ध विद्वान् डाल्टन ने परमाणु-सिद्धान्त की स्थापना की। उसने कल्पना की थी कि परमाणु अविच्छेद्य हैं। उसके तथा उसके पश्चात् अनेक वैज्ञानिको ने समझा कि परमाणु द्रव्य के मूल कण हैं, जिनका विच्छेदन नही हो सकता। ये विचार उन्नीसवी शताब्दी मे पूर्णतया मान्य थे। शताब्दी के अन्त मे कुछ प्रयोग हुए जिनके कारण यह धारणा एकाएक नष्ट हो गयी।

विज्ञान की परम्परा रही है कि समय-समय पर बडे-बडे आविष्कार तथा खोजे हुई है। पिछली शताब्दी के अन्त मे तथा इस शताब्दी के प्रारम्भ में किये गये प्रयोगो से सिद्ध हो गया है कि डाल्टन के परमाणु-सिद्धान्त मे कुछ त्रुटियाँ है। सन् १८९६ मे हेनरी बेक्वरेल ने फ्रास मे रेडियधर्मिता की खोज की। पहली बार यह ज्ञात हुआ कि परमाणु भी खण्डित हो सकता है। प्रकृति मे कुछ परमाणुओं का सर्वदा विच्छेदन होता रहा है। विच्छेदन के साथ-साथ कुछ किरणें भी निकलती है। इस निरीक्षण से अटूट परमाणु-सिद्धान्त छिन्न-भिन्न हो गया। इस सिद्धान्त को छिन्न करने मे और भी निरीक्षण सहायक हुए है। अन्त में परमाणु-संरचना का नया सिद्धान्त निर्मित हुआ जिसमे नाभिक तथा इलेक्ट्रान सम्मिलित हुए। परमाणु-संरचना के नये सिद्धान्त में एक नाभिक की कल्पना की गयी जिसमें लगभग सारी संमात्रा स्थित थी। इस नाभिक पर घन विद्युत का आवेश था और

ऋणाविष्ट इलेक्ट्रान चारों ओर परिक्रमा करते थे। इलेक्ट्रानों में बहुत न्यून समात्रा स्थित थी।

नाभिकीय परमाणु का सिद्धान्त एकाएक नही बना, वरन् उसका विकास धीरे-धीरे हुआ। रदरफोर्ड के एक छोटे प्रयोग से इसका समारम्भ हुआ। रदरफोर्ड अल्फा-कण के गुणो का अध्ययन कर रहे थे। उन्होंने एक अल्फा किरण-दण्ड को पतले छिद्र में से प्रवाहित किया। तत्पश्चात् उस दण्ड का बिम्ब फोटोग्राफी के प्लेट पर गिरने दिया गया जिससे उसका चित्र खिंच गया। इस प्रयोग मे देखा गया कि विभिन्न अवस्थाओ मे भिन्न प्रकार के चित्र खिचे। जब अल्फा-किरण के स्रोत और प्लेट के बीच वायु उपस्थित थी उस समय एक प्रकार का चित्र आया और वायु की अनुपस्थिति में दूसरी प्रकार का चित्र खिंचा। सारी वायु निकाल देने पर छिद्र का चित्र साफ उतरा। जब वायु उपस्थित थी उस समय का चित्र धुंधला था तथा अल्फा-किरण के कण छिद्र की सीमा के बाहर भी पहुँच गये।

इस अन्तर का कारण रदरफोर्ड को सरलता से मालूम हो गया। अल्फा कण-दण्ड वायु की अनुपस्थिति मे सीधा जाकर प्लेट पर पड़ा। उसने छिद्र से प्लेट तक सीधी रेखाएँ बनायी। इस कारण चित्र साफ आया। इसके विपरीत वायु की उपस्थिति में, अल्फा-कण वायु के कणों से टकराकर अपने सीधे रास्ते से विचलित हो गये और चित्र धुंधला हो गया। रदरफोर्ड ने इस प्रभाव का नाम प्रकीर्णता रखा। इस प्रयोग में विभिन्न अल्फा-कण भिन्न-भिन्न प्रकार से टकराते हैं। परमाणुओं के साथ कुछ कणो का आयतन कोण कम और किन्हीं का अधिक होता है। इसीलिए कणो का विक्षेप अलग-अलग होता है। कम विक्षेपण वाले कण अपने मार्ग से कम हटते हैं। इनकी संख्या अधिक होती है। थोड़े-से कण ९०° अंश तक विक्षेपित हो जाते हैं और बहुत न्यून सख्या के कण १८०° अंश का कोण बनाते हैं। ऐसे कण, टकराकर जिस मार्ग से वे आये है उसी मार्ग से, वापस लौट जाते हैं।

इन निरीक्षणों पर ध्यान देना आवश्यक है। परमाणु से, निकलने वाले
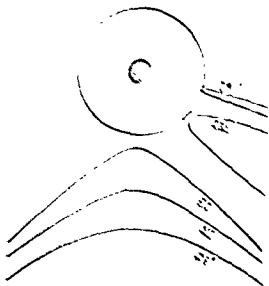
इस दिशा में गाइगर तथा मार्डसन[1] ने विशेष कार्य किया, जिसमें अल्फा-कणों की प्रकीर्णता के अनुसन्धान वायु, धातुओं तथा अन्य वस्तुओं की चादरों के माध्यमों से किये गये। उन्होंने फोटोग्राफी प्लेट हटाकर उससे अधिक सवेदी[2] रीति का उपयोग किया। प्लेट के स्थान पर एक प्रतिदीप्ति पट का प्रयोग किया गया जिससे अल्फा-कणों की उपस्थिति का पता चमक[3] द्वारा लगता था।

उनके निरीक्षणों से मालूम हुआ कि अधिकतर अल्फ़ा कण अपने मार्ग से थोड़ी मात्रा में विचलित होते हैं। कुछ कण अपने मार्ग से एक समकोण तक जाते हैं और कुछ अपने मार्ग में वापस लौट आते हैं। ये अनुसन्धान रदरफोर्ड के पुराने कार्यों की पुष्टि करते हैं। गाइगर व मार्डसन ने यह भी देखा कि ९०° कोण से अधिक प्रकीर्णित होने वाले कणों की संख्या विभिन्न पदार्थों के साथ एक-सी नहीं रहती। एल्यूमिनियम, मैगनीशियम, बेरीलियम आदि कम परमाणु-भार वाली धातुएँ कम संख्या में अल्फ़ा-कणों का प्रकीर्णन करती हैं, यदि एक तत्त्व की दो चादरें ली जायें जिनमें एक पतली तथा दूसरी मोटी हो, तो उस स्थिति में मोटी चादर के द्वारा प्रकीर्णन अधिक होगा।

अब हम यह समझने का प्रयत्न करें कि इस प्रकार का प्रकीर्णन क्यों होता है? हम जानते है कि अल्फा-कणों पर विद्युत-आवेश रहता है। विद्युत्-आवेश पर विद्युत् क्षेत्र अपना प्रभाव डालता है। अल्फा-किरणों के प्रकीर्णन से सिद्ध होता है कि परमाणु में अत्यन्त शक्तिशाली विद्युत्-क्षेत्र केन्द्रित है। कूलो सिद्धान्त[4] के अनुसार दो आवेशयुक्त कणों के मध्य विद्युत् बल दो बातों पर निर्भर करता है। एक है दोनों कणों पर आवेश की मात्रा और दूसरी दोनों कणों के बीच की दूरी। आवेश की

1. Geiger and Mardsen
2. Sensitive
3. *Scintillation*
4. *Coulomb's Law*

मात्रा जितनी अधिक होगी उतना ही बल भी अधिक होगा, परन्तु दूरी के अधिक होने पर बल घट जायगा। अब हम अल्फा-कणो पर दृष्टि डाले।

पिछले प्रयोगों में कुछ कण ऐसे भी थे जो जिस मार्ग से निकले उसी से लौट भी आये। ऐसा प्रतीत होता था मानो दो गोलो की मर के बल मुठभेड़ हुई हो और एक गोला वापस चला आया हो। जो गोला वापस चला आया उसे स्वभावत. हलका होना चाहिए। साथ ही वह दूसरे गोले के, जिसमें घनावेश केन्द्रित है, बिल्कुल निकट अवश्य ही पहुँचा होगा, क्योकि उसी स्थिति मे वह वेग से वापस लौट सकेगा। यह दूरी जो प्राय: $१०^{-११}$ सेमी० (सैण्टीमीटर) है, गणित द्वारा ज्ञात की गयी है। इसी प्रसग मे यह ध्यान देना आवश्यक है कि परमाणु का आकार लगभग $१०^{-८}$ सेमी० माना जाता है। इस प्रकार परमाणु-सरचना मे तीन बातें सामने आयी। एक यह कि धन विद्युत् आवेश का एक स्थान पर केन्द्रित होना आवश्यक है। दूसरी, यह कि इसी स्थान पर सम्पूर्ण समात्रा भी केन्द्रित हो। तीसरी आवश्यक बात यह है कि इसको बहुत सूक्ष्म होना चाहिए। इसका व्यास $१०^{-१२}$ सेमी० के लगभग होगा। इस अवस्था मे अल्फा-कण की टक्कर इस केन्द्र से उसी प्रकार होगी जैसे एक फुटबाल बड़े पत्थर से टकरा कर वापस चला आता है।

रदरफोर्ड, गाइगर एवं मार्डसन के अनुसन्धानों से बहुत-सी परमाणु सरचना की पुरानी कल्पनाएँ झूठी सिद्ध हुई। उससे कुछ समय पूर्व टामसन ने परमाणु-सरचना सम्बन्धी अपना सिद्धान्त रखा था। उसके अनुसार परमाणु गोलाकार होता है जिसके सारे आयतन मे द्रव्य भरा रहता है तथा इस पर चारों ओर घन विद्युत् आवेशित रहता है। यह आवेश किसी स्थान-विशेष पर केन्द्रित न होकर सारे द्रव्य पर समान रूप से वितरित रहता है। इस आवेश को न्यून करने के लिए इलेक्ट्रान सारे द्रव्य में तैरते रहते है। इलेक्ट्रान की संख्या इतनी होती है कि उनका पूरा ऋणावेश द्रव्य के घनावेश के बराबर होता है। हलके परमाणु पर कम इलेक्ट्रान तथा भारी पर अधिक इलेक्ट्रान रहते है।

टामसन के परमाणुवाद से पदार्थो के कुछ गुण भली-भाँति समझ में आने लगे थे जिससे अन्य अनेक भौतिक शास्त्रियों ने उसे स्वीकार भी किया। परन्तु धीरे-धीरे इस सिद्धान्त पर शकाएँ होने लगी क्योंकि रेडियधर्मिता की विवेचना इस सिद्धान्त पर नही हो सकती थी। रदरफोर्ड के प्रकीर्णता के प्रयोगो के सामने यह सिद्धान्त बिल्कुल न ठहर सका।

विद्युत् का प्रारम्भिक सिद्धान्त घन आवेश का ऋण आवेश के साथ आकर्षित होना तथा समान आवेश के साथ प्रतिकर्षण होना है। परमाणु-संरचना-सिद्धान्त के लिए यह आवश्यक था कि वह अल्फ़ा-कण के प्रकीर्णन के प्रयोगों को समझा सके। इन सब को ध्यान मे रखकर रदरफोर्ड ने अपना परमाणु संरचना-सिद्धान्त स्थापित किया। उसके अनुसार हम परमाणु को दो भागो में बाँट सकते है। एक भाग वह है जिसमें अधिकतम समात्रा केन्द्रित है। यह केन्द्र अल्फा कणो पर प्रतिकर्षण बल लगाता है जिससे वे अपने मार्ग से विचलित हो जाते है। अल्फा-किरणों पर धनावेश होता है। इस कारण इस केन्द्र पर भी धनावेश होना चाहिए। हमें यह भी ज्ञात है कि पहले के कुछ प्रयोगो में कुछ अल्फ़ा-कण इस केन्द्र के बिलकुल पास पहुँच कर लौट आये। उस समय इस केन्द्र तथा अल्फ़ा-कण की दूरी $१०^{-१२}$ मी० थी। फलत. इस धनावेश परमाणु केन्द्र का व्यास $१०^{-१२}$ से० मी० के लगभग होना चाहिए। ऐसे परमाणु केन्द्र को रदरफोर्ड ने न्यूक्लियस[1] या नाभिक कहा। नाभिक का आयतन परमाणु के समूचे आयतन से बहुत कम है। नाभिक पर परमाणु का सारा धनावेश केन्द्रित रहता है।

परमाणु का दूसरा भाग वह है जो नाभिक के चारों ओर के अवकाश में विद्यमान है। इस अवकाश मे इलेक्ट्रान रहते हैं जिन पर ऋणवेश रहता है। हर तत्त्व के परमाणु में रहने वाले इलेक्ट्रान नियत है। इसी प्रकार हर तत्त्व के नाभिकीय धनावेश भी नियत हैं। धनावेश की मात्रा तथा इलेक्ट्रानों की संख्या बराबर होती है। इलेक्ट्रान नाभिक की परिक्रमा उसी प्रकार करते है जैसे तमाम ग्रह सूर्य की परिक्रमा करते हैं।

रदरफोर्ड का परमाणु-प्रतिरूप एक क्रान्तिकारी सिद्धान्त था। बहुत-से वैज्ञानिक बड़ी तत्परता से इस ओर अनुसन्धान करने लगे और इस सिद्धान्त की जाँच-पडताल करने लगे। नाभिक पर वर्तमान धनावेश की मात्रा ज्ञात करने के लिए प्रयोग किये जाने लगे। गाइगर एव मार्डसन ने अल्फा-कणो के प्रकीर्णन द्वारा कुछ तत्त्वो के नाभिको के आवेश और उनकी मात्रा मालूम की।

नाभिको के आवेश-मापन का कार्य मोजले[1] नामक अग्रेज भौतिक शास्त्री ने बड़े सुचारु रूप से किया। उसने इस कार्य के लिए एक्स-रे का उपयोग किया। अनेक तत्त्वो द्वारा मुक्त एक्स-रे का उसने विश्लेषण किया। ये विश्लेषण एक्स-रे वर्णक्रम-मापी द्वारा किये गये।

जब कैथोड-किरणे किसी धातु या अन्य तत्त्व पर आघात करती है तो उनसे रंटगन किरणे अथवा एक्स-रे निकलती हैं। मोजले के अनुसन्धानो से मालूम हुआ कि प्रत्येक तत्त्व द्वारा निकले एक्स-रे का तरग-दैर्घ्य भिन्न-भिन्न होता है। उदाहरणस्वरूप हम देखते है कि कैथोड-किरणे लौह पर आघात कर जो एक्स-रे उत्पन्न करेगी उनका तरग-दैर्घ्य एल्यूमिनियम या ताँबे से निकली किरणो से भिन्न होगा।

आइए अब हम एक ही तत्त्व से निकली सारी किरणो को वर्णक्रम-मापी द्वारा देखे। देखने पर हमे ज्ञात होगा कि ये किरणे एक ही तरग-दैर्घ्य की नही होती। इनको तीन या चार मुख्य भागों मे बाँटा जा सकता है। सबसे छोटी तरग-दैर्घ्य वाली किरणो को के-विकिरण[2] कहते है। उससे बडी किरणो को क्रमश. एल-विकिरण[3] एम-विकिरण[4] तथा एन-विकिरण[5] कहते है।

1. Mosley
2. K-radiations
3. L-radiations
4. M-radiations
5. N-radiations

मोज़ले ने तत्त्वों के विकिरण का विस्तार से अध्ययन किया। इस विकिरण के तरंग-दैर्घ्य द्वारा परमाणु-सख्या सरलता से निकाली जा सकती है, जिसका समीकरण निम्नलिखित है—

$$\text{आवृत्ति}^{[५]} = \text{स्थिरांक}_{१} \times (\text{परमाणु संख्या} - १)^{२}$$

$$\text{Frequency}^{[5]} = \text{Constant}_{1}\ (\text{atomic no.} - 1)^{2}$$

$$\text{अथवा } \frac{१}{\text{तरंग दैर्घ्य}^{[८]}} = \text{स्थिरांक}_{२} \times (\text{परमाणु संख्या} - १)^{२}$$

$$\frac{1}{\text{Wave length}^{[8]}} = \text{Constant}_{2}\ (\text{atomic no.} - 1)^{2}$$

इस प्रकार मोजले ने विशद अनुसन्धान किया। उसने देखा कि इस प्रकार निकाली गयी परमाणु सख्या निश्चित क्रम से तत्त्वों मे बढती जाती है। यह परमाणु संख्या आवर्त-सारणी मे तत्त्व की स्थिति की सूचिका है। इस प्रकार किसी भी तत्त्व की परमाणु सख्या एक्स-रे प्रयोग द्वारा निकाली जा सकती है और आवर्त-सारणी मे उसके स्थान की पुष्टि की सकती है। जा

निएल बोर[1] ने गणित द्वारा सिद्ध किया कि मोज़ले द्वारा परिगणित परमाणु संख्या ही उसके परमाणु के नाभिक पर धनावेश की मात्रा है। परमाणु संख्या तथा नाभिकीय आवेश परस्पर सम्बद्ध हैं। दोनों सख्याएँ तत्त्वों मे निश्चित क्रमानुसार बढ़ती है। फलतः मोजले के प्रयोग से तत्त्व के नाभिक आवेश ज्ञात किये जा सकते है।

इस प्रकार मोजले के प्रयोग से रदरफोर्ड की परमाणु-सरचना की पुष्टि हुई। अब यह भली प्रकार ज्ञात है कि परमाणु मे नाभिक तथा इले-क्ट्रान वर्तमान रहते हैं। परमाणु संख्या कोई कल्पनात्मक सख्या नहीं, वरन् तत्त्व की एक विशेष गुणात्मक संख्या है। विभिन्न तत्त्वों के परमाणुओं के

1. Niel Bohr

नाभिकों पर भिन्न-भिन्न आवेश रहता है। मेण्डलीव[1] की आवर्त-सारणी में तत्त्व अपने नाभिक आवेश के अनुसार व्यवस्थित है। हाइड्रोजन के नाभिक पर आवेश की मात्रा एक (१) है। इस कारण उसको आवर्त सारणी में सर्वप्रथम स्थान दिया गया है। हीलियम के नाभिक पर आवेश की मात्रा दो (२) है अत. उसे आवर्त-सारणी में दूसरा स्थान प्राप्त है। इसी प्रकार आक्सीजन के नाभिक पर आवेश की मात्रा आठ (८) होने से उसको आठवाँ स्थान प्राप्त है। यूरेनियम के नाभिक पर बानवे (९२) मात्रक का आवेश है, फलत: आवर्त सारणी में उसे बानवेवाँ स्थान मिला है। इस प्रकार पड़ोसी तत्त्वों के आवेशों में एक का अन्तर रहता है।

इसी सिद्धान्त द्वारा परमाणु में इलेक्ट्रानों की संख्या ज्ञात की जा सकती है, क्योंकि नाभिक के आवेश की मात्रा इलेक्ट्रान की संख्या के बराबर होती है। उदाहरणस्वरूप, हम जानते हैं कि आक्सीजन के नाभिक का आवेश आठ (८) है। इसलिए उसके परमाणु में आठ (८) इलेक्ट्रान नाभिक की परिक्रमा करते हैं। क्लोरीन के नाभिक के चारों ओर सत्रह (१७) इलेक्ट्रान चक्कर लगाते हैं। लौह के परमाणु में छब्बीस (२६) इलेक्ट्रान परिक्रमा करते है तथा यूरेनियम के एक परमाणु में बानवे (९२) इलेक्ट्रान है।

मोजले तथा अन्य वैज्ञानिकों के अनुसन्धानों से यह सिद्ध हो चुका था कि परमाणु में नाभिक होता है जिस पर धन विद्युत् का आवेश रहता है और उसकी *समात्रा लगभग सारे परमाणु के भार के बराबर होती है।* इस समय आवश्यकता इस बात की थी कि परमाणुओं के भार अत्यन्त सूक्ष्मता से ज्ञात किये जायँ। परमाणु इतना सूक्ष्म होता है कि एक परमाणु का भार नहीं लिया जा सकता। परन्तु इसके भार निकालने की रासायनिक विधियाँ ज्ञात थीं। दीर्घकाल से रसायनज्ञों ने परमाणु भार या समात्रा

1. Mendeleyev

का मात्रक हाइड्रोजन को माना था, अर्थात् हाइड्रोजन की संमात्रा एक (१) मानी गयी थी। हाइड्रोजन सबसे हलका तत्त्व है। इस कारण अन्य तत्त्वों का भार इससे अधिक होता है, यथा हीलियम का परमाणु भार चार (४) है। इसका अर्थ यह है कि हीलियम का परमाणु हाइड्रोजन के परमाणु से चार गुना है। कुछ समय पश्चात् रसायनज्ञों ने कुछ कारण से इस प्रतिमान मे परिवर्तन किया। उन्होंने हाइड्रोजन के परमाणु भार को एक (१) न मान कर आक्सीजन के भार को सोलह पूर्ण मात्रक (१६.००) माना। इसके कारण हाइड्रोजन का भार १.००० से बदल कर १.००८ हुआ। आजकल रसायन मे यही प्रतिमान स्वीकृत है। इस माप के अनुसार क्लोरीन का भार ३५ ४६, लोह का भार ५५.८५, सीस का भार २०७ २ है। परमाणु भार की सारणी पुस्तक के अन्त मे दी गयी है। परमाणु-भार ग्राम मे व्यक्त न करके इसी प्रतिमान से अंकित किया जाता है।

२०वी शताब्दी के प्रारम्भ के पूर्व परमाणु-भार निकालने की रासायनिक विधियाँ ज्ञात थी। आवश्यकता इस बात की थी कि कोई सूक्ष्म भौतिक विधि निकाली जाय। डाल्टन ने अपने परमाणुवाद मे घोषित किया था कि एक तत्त्व के सारे परमाणुओं का भार समान होता है, यद्यपि इसकी प्रायोगिक पुष्टि नही हुई थी, परन्तु रेडियधर्मी तत्त्वों के प्रयोगो मे एक ही तत्त्व के भिन्न-भिन्न भार वाले परमाणु मिल चुके थे जिन्हें समस्थानिक कहा गया था। इन रेडियसमस्थानिकों को किसी रासायनिक क्रिया द्वारा पृथक् नही किया जा सकता था। इस कारण रासायनिक क्रिया द्वारा यह जानना असम्भव था कि अरेडियधर्मी तत्त्वो मे सम-स्थानिक है या नही। अत: इसके लिए कोई भौतिक प्रयोग ही सफल हो सकता था, जिसके द्वारा प्रथम परमाणुओं का भार सूक्ष्मता से ज्ञात हो सके।

इस आवश्यक कार्य को टामसन ने अपने प्रयोगों द्वारा प्रारम्भ किया। उसने विद्युच्चुम्बकीय विधि का उपयोग किया। इस विधि मे किसी भी कण का $\frac{e}{m}$ अर्थात् आवेश और समात्रा का अनुपात निकाला जा सकता है। अत: यदि हमे उस आवेशयुक्त कण अथवा आयन के आवेश की मात्रा

ज्ञात हो तो उसकी संमात्रा निकाली जा सकती है। टामसन की इस विधि का नाम परवलय विधि है।
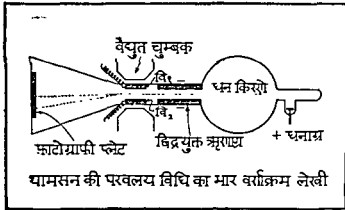
चित्र संख्या ४—टामसन की परवलय विधि का भार-वर्ण-क्रम लेखी

टामसन ने सर्वप्रथम नियन गैस पर परवलय विधि का प्रयोग किया। विसर्ग नली में नियन गैस भर कर उससे धन किरणें प्राप्त की गयी। ये धन किरणें नियन के परमाणुओं से प्राप्त हुई थी। विसर्ग नली मे विद्युत्-वेग के कारण नियन के परमाणु से एक इलेक्ट्रान हट गया और परमाणु पर एक धनावेश हो गया। इन धनावेश परमाणुओं की किरणे बनी। जिन पर वैद्युत तथा चुम्बकीय क्षेत्र का एक साथ प्रभाव डाला गया। इस प्रभाव द्वारा विभिन्न समात्रा वाले कण भिन्न-भिन्न मार्गो में चले गये। एक संमात्रा वाले कण एक परवलय के मार्ग में जाते थे। दूसरी संमात्रा वाले कण दूसरा परवलय बनाते थे। इस प्रकार जितनी प्रकार की संमात्राओ वाले कण उपस्थित होंगे उतने ही परवलय बनेंगे। यदि इनके मार्ग में एक फोटो-ग्राफी का प्लेट रख दिया जाय तो सारे परवलय उसमें चित्रित हो जायेंगे। विसर्ग नली मे नियन के प्रयोग करने से २ परवलय दिखाई दिये। एक २० तथा दूसरा २२ e/m के कारण थे। टामसन ने यह निष्कर्ष निकाला कि

ये दोनों परवलय नियन के समस्थानिकों के कारण हैं। यद्यपि नियन की परमाणु संमात्रा २०.१८ है, परन्तु इसमें दो समस्थानिक संमिश्रित रहते है—एक की संमात्रा २० तथा दूसरे की २२ है। तत्पश्चात् अत्यन्त प्रमाणित प्रयोगो से मालूम हुआ कि एक २१ संमात्रा वाला समस्थानिक भी इनमें समिश्रित रहता है जो अत्यन्त सूक्ष्म मात्रा में उपस्थित पाया जाता है। रासायनिक विधियों से प्राप्त इस समिश्रित नियन का परमाणु भार २०.१८ आता है। जो एक माध्यम सख्या है। इससे टामसन इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि इस समिश्रिण मे ९१ प्रतिशत Ne^{20} समस्थानिक तथा ९ प्रतिशत Ne^{22} समस्थानिक वर्तमान है। कुछ समय के पश्चात् प्रमाणित प्रयोगों द्वारा नियन की निम्नलिखित सरचना प्राप्त हुई—

नियन[20]	(Ne^{20})	८०.५१%
नियन[21]	(Ne^{21})	०.२८%
नियन२२[22]	(Ne^{22})	९.२१%

नोट—सकेतो के ऊपर लिखित संख्याएँ समस्थानिक की परमाणु संमात्रा बताती हैं।

टामसन अपने प्रयोगो से इस नतीजे पर पहुँचे कि स्थिर तत्त्वों में भी समस्थानिक होते हैं तथा इन समस्थानिकों का भार प्रायः पूर्ण संख्या ही होती है। इस कार्य के पश्चात् एस्टन ने कुछ ऐसे भौतिक प्रयोग किये जिनके द्वारा समस्थानिको को पृथक् किया जा सका। उसने विसरण विधि का प्रयोग किया। भारी तथा हल्के समस्थानिकों के विसरण मे अन्तर होता है, इस कारण वे समान वेग से विसरित नहीं हो पाते। इस अन्तर का लाभ उठाकर एस्टन ने हल्के तथा भारी दोनों प्रकार के समस्थानिकों को पृथक् किया। इस प्रकार न केवल समस्थानिकों की उपस्थिति की पुष्टि हुई, वरन् उन्हें पृथक् भी कर दिया गया।

एस्टन ने एक दूसरी विधि द्वारा समस्थानिकों का विश्लेषण किया। इसका नाम एस्टन भार-वर्ण-क्रम-लेखी[1] है। यह टामसन की परवलय-विधि से अधिक सरल तथा उपयोगी था। इसका ठीक-ठीक अनुमान निम्न चित्र देखने से हो सकेगा।
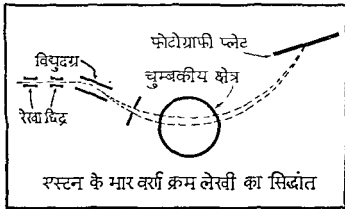
चित्र संख्या ५—एस्टन के भार-वर्ण-क्रम लेखी का सिद्धान्त

इस उपकरण मे किसी तत्व के धन आयनो के विकिरण पर विद्युत् तथा चुम्बकीय क्षेत्र का प्रभाव डाला जाता है। पहले विद्युत् क्षेत्र का प्रभाव पड़ता है, फिर कुछ अन्तर पर चुम्बकीय क्षेत्र का। इन दोनों प्रभावो को इस अनुपात मे स्थिर किया जाता है कि एक विशिष्ट समस्थानिक के समस्त कण एक स्थान पर पहुँच जायँ। आयनों मे जितने समस्थानिकों का समि-श्रण होगा उतने ही पृथक्-पृथक् बिन्दुओं पर समस्थानिक सकेन्द्रित होंगे। इस सकेन्द्र पर एक फोटोग्राफी-प्लेट रखने पर समस्त समस्थानिकों के

1. Aston's mass-spectroscope

चित्र स्वय आ जायेंगे। विभिन्न समस्थानिकों द्वारा अंकित चिन्हों को देखकर उनकी भार सख्या की परिगणना की जा सकती है।

भार-वर्णक्रम लेखी द्वारा एस्टन ने पता लगाया कि अधिकतर तत्त्व दो या दो से अधिक समस्थानिकों के समिश्रण हैं। एस्टन के पश्चात् डेम्पस्टर[1] आदि वैज्ञानिकों ने और भी उपयोगी भार-वर्णक्रम-लेखी बनाये। इन सबके प्रयोगो द्वारा हमे प्रकृति मे पाये जाने वाले तत्त्वो के लगभग ३०० से अधिक समस्थानिक ज्ञात हो चुके है। प्रकृति में निम्न तत्त्वों के केवल एक-एक समस्थानिक प्राप्त हैं जिनके सकेत तथा भार-संख्याएँ साथ मे दी जा रही है। ये भार-सख्याएँ सकेत के ऊपर दाहिनी ओर चिन्हित हैं। यह ध्यान देने योग्य है कि इन सबके परमाणु-भार प्रायः पूर्ण संख्याएँ हैं।

वेरीलियम–९	Be^{9}
फ्लोरीन–१९	F^{19}
सोडियम–२३	Na^{23}
एल्यूमिनियम–२७	Al^{27}
फास्फोरस–३१	P^{31}
स्कैंडियम–४५	Sc^{45}
मेगनीज–५५	Mn^{55}
कोबाल्ट–५९	Co^{59}
आर्सनिक–७५	As^{75}
इट्रियम–८९	Y^{89}
नियोबियम–९३	Nb^{93}
रोडियम–१०३	Rh^{103}
आयोडीन–१२७	I^{127}
सीजियम–१३३	Cs^{133}

1. Dampster

लेंथेनम–१३९	La^{139}
प्रेजोडिमियम–१४१	Pr^{141}
टरबियम–१५९	Tb^{159}
होलमियम–१६५	Ho^{165}
थूलियम–१६९	Tm^{169}
टेंटलम–१८१	Ta^{181}
स्वर्ण–१९७	Au^{197}
बिसमथ–२०९	Bi^{209}

आइए अब हम नाभिक-सरचना की ओर अग्रसर हो ।

उन्नीसवी शताब्दी मे लोगो को नाभिक तथा इलेक्ट्रान के बारे मे कुछ भी ज्ञात न था। उस समय परमाणु प्रत्येक तत्त्व का सबसे छोटा कण माना जाता था। सन् १८१६ मे प्राउट[1] ने एक सिद्धान्त रखा जिसमे कहा गया कि प्रकृति के सारे तत्त्व हाइड्रोजन के परमाणु से बने है। उस समय समग्र तत्त्वों के परमाणु-भार ठीक-ठीक ज्ञात न थे। आगे चल कर ही इनके परिमापन सूक्ष्मता से किये गये, जिनसे पता चला कि अनेक तत्त्वो के परमाणु भार पूर्ण सख्याएँ नही है। क्लोरीन इसी प्रकार का एक तत्त्व है जिसका परमाणुभार लगभग ३५ ५ था। इन प्रेक्षणो के फलस्वरूप लोगो ने प्राउट के सिद्धान्त की अवहेलना की और उसे शीघ्र ही भुला दिया।

बीसवी शताब्दी के प्रारम्भ मे टामसन, एस्टन आदि के अनुसन्धानों से यह सिद्ध हो गया कि सारे समस्थानिकों की भार-सख्याएँ प्राय. पूर्ण सख्याएँ ही है। क्लोरीन जैसे तत्त्व, जिनका परमाणु-भार पूर्ण सख्यक नही है, वास्तव मे दो समस्थानिकों के मिश्रण के कारण है। एक का भार ३५ तथा दूसरे का ३७ है। जहाँ परमाणु-भार पूर्ण सख्याएँ नही है, वहाँ ये सम-

1. Prout

स्थानिक ऐसे समानुपात मे मिश्रित हैं कि उनका मध्यमान पूर्ण संख्यक नही हो पाता।

इन सौ वर्षों मे परमाणु-विज्ञान इतना वढ़ चुका था कि प्राउट के सिद्धान्त की ओर वापस लौटा नही जा सकता था। हाँ, उसी प्रकार के और किसी सिद्धान्त के वनने की सभावना अवश्य हो गयी थी। इस दिशा मे सर्वप्रथम वैज्ञानिको ने नाभिक रचना की ओर ध्यान दिया। इनमें एक सिद्धान्त यह भी वना कि सव तत्त्वो के नाभिक हाइड्रोजन के नाभिक से वने होते है। इस नाभिक का नाम प्रोटान रखा जा चुका था। परन्तु प्रोटान पर समात्रा के साथ आवेश भी होता है। इस प्रसंग में हम हीलियम का उदाहरण ले सकते हैं। इसका परमाणु भार चार (४) है। यदि हम यह कहे कि इसका नाभिक चार (४) प्रोटान द्वारा वना है तो उसका भार तो चार (४) होगा, परन्तु उसका आवेश भी साथ-साथ चार (४) हो जायगा। हमे ज्ञात है कि हीलियम नाभिक पर दो मात्रक आवेश होता है। अत हमारे समक्ष एक समस्या खड़ी होती है जिसे हल करने के लिए यह सुझाव रखा गया कि नाभिक मे इलेक्ट्रान भी होते है। इन इलेक्ट्रानों का भार प्राय नगण्य रहता है। हीलियम के नाभिक में चार (४) प्रोटान तथा दो (२) इलेक्ट्रान है। इस कारण उसका भार तो चार (४) रहेगा पर आवेश ४–२=२ होगा। इसी प्रकार सोडियम के नाभिक पर तेईस (२३) प्रोटान तथा वारह (१२) इलेक्ट्रान हैं जिसके कारण उसका भार तेईस (२३) तथा आवेश २३ – १२ अर्थात् ग्यारह (११) होगा। चूंकि रेडियधर्मी तत्त्वों से इलेक्ट्रान निकलते थे, अत. इससे इस सिद्धान्त की पुष्टि हो जाती है।

कुछ समय पश्चात् वैज्ञानिको को इस सिद्धान्त में भी दोष दिखाई दिये। नाभिक के चुम्वकीय गुण तथा नाभिकीय भ्रमि के प्रेक्षण से यह स्पष्ट हो गया कि इलेक्ट्रान नाभिक में स्वतन्त्र अवस्था में नही रह सकते।

इसी समय न्यूट्रान की खोज हुई। इस आवेश रहित कण की खोज से नाभिक रचना का सारा सिद्धान्त वदल गया। वैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर

पहुँचे कि नाभिक की संरचना दो मूलभूत कणो से हुई है जिनमे एक प्रोटान तथा दूसरा न्यूट्रान है। हीलियम नाभिक मे दो (२) प्रोटान तथा दो (२) न्यूट्रान हैं। सोडियम का नाभिक ग्यारह (११) प्रोटान तथा बारह (१२) न्यूट्रान से बना हुआ है।

समस्थानिको में प्रोटान की सख्या समान रहती है, परन्तु न्यूट्रान की सख्या विभिन्न होती है। उदाहरणार्थ क्लोरीन के दो समस्थानिको की रचना इसी प्रकार से हुई है। क्लोरीन–३५ मे सत्रह (१७) प्रोटान तथा अठारह (१८) न्यूट्रान है और क्लोरीन–३७ मे सत्रह (१७) प्रोटान तथा बीस (२०) न्यूट्रान है। इन्हे प्रदर्शित करने के लिए तत्त्व के सकेत के पूर्व नीचे की ओर प्रोटान संख्या तथा सकेत के ऊपर दाहिनी ओर भार-सख्या दी जाती है। कुछ परमाणुओं के समस्थानिकों की नाभिक रचना निम्न-लिखित है—

समस्थानिक		परमाणुभार,	परमाणुसंख्या;	प्रोटान;	न्यूट्रान
$_1H^1$	(हाइड्रोजन)	१	१	१	०
$_1H^2$ या $_1D^2$	(ड्यूटीरियम)	२	१	१	१
$_1H^3$ या $_1T^3$	(ट्राइटियम)	३	१	१	२
$_6C^{12}$	(कार्बन)	१२	६	६	६
$_6C^{13}$	(कार्बन)	१३	६	६	७
$_8O^{16}$	(आक्सीजन)	१६	८	८	८
$_8O^{17}$	(आक्सीजन)	१७	८	८	९
$_8O^{18}$	(आक्सीजन)	१८	८	८	१०
$_{92}U^{235}$	(यूरेनियम)	२३५	९२	९२	१४३
$_{92}U^{238}$	(यूरेनियम)	२३८	९२	९२	१४६

परमाणु की रचना का यह सिद्धान्त आजकल सर्वमान्य है। परन्तु इसमें भी पाठकों को एक शका हो सकती है। हम पहले कह चुके हैं कि रेडियधर्मी तत्त्व-विच्छेदन द्वारा अल्फा-कण और बीटा-कण निकलते हैं। बीटा-कण इलेक्ट्रान का ही दूसरा नाम है। यदि नाभिक में केवल प्रोटान और न्यूट्रान

चित्र संख्या ६—परमाणु-कुटम्ब
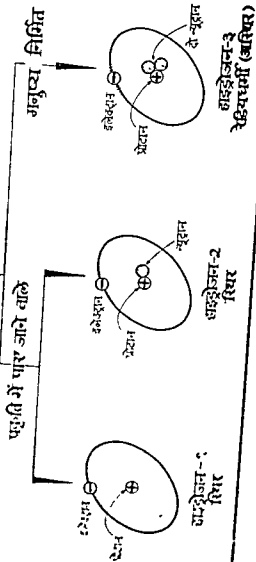
समस्थानिक क्या हैं ?

एक तत्व के विभिन्न भार वाले परमाणुओं को समस्थानिक कहते हैं

कार्बन १० | कार्बन ११ | कार्बन 12

होते है तो यह इलेक्ट्रान कहाँ से आते है। आगे हम देखेंगे कि कृत्रिम रेडिय-धर्मिता मे कभी-कभी पाजिट्रान भी निकलता है।

इलेक्ट्रान तथा पाजिट्रान नाभिक मे स्वतन्त्र अवस्था में नही रहते। अपितु नाभिक मे हुए रूपान्तर के फलस्वरूप मुक्त होते है।

$$\text{युरेनियम - एक्स}_1 \rightarrow \text{यूरेनियम - एक्स}_1 + \text{इलेक्ट्रान}$$

$$Ux_1 \rightarrow Ux_2 + e$$
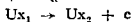
वास्तव मे इलेक्ट्रान निकलते समय नाभिक का एक न्यूट्रान प्रोटान मे परिणत हो जाता है। इस कारण उस नाभिक का भार तो उतना ही रहता है, परन्तु आवेश मे एक की वृद्धि हो जाती है।

$$\text{न्यूट्रान} \rightarrow \text{प्रोटान} + \text{इलेक्ट्रान}$$

$$_0n^1 \rightarrow {}_1H^1 + {}_{-1}e^0$$
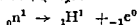
Ux_1 का परमाणु-भार दो सौ चौंतीस (२३४) है तथा उसका आवेश नब्बे (९०) मात्रक है। अत. उसमें नब्बे (९०) प्रोटान तथा एक सौ चवालीस (१४४) न्यूट्रान हैं।

Ux_2 का परमाणु-भार दो सौ चौंतीस (२३४) है और आवेश इक्यानवे (९१) मात्रक है। अतः उसमे इक्यानवे '(९१) प्रोटान तथा एक सौ तैंतालीस (१४३) न्यूट्रान हैं।

Ux_1 के तत्वान्तरण से एक न्यूट्रान प्रोटान वन गया जिससे एक इलेक्ट्रान मुक्त हुआ। फलतः Ux_1 बदलकर Ux_2 वन गया।

इस क्रिया के विपरीत प्रोटान के न्यूट्रान मे रूपान्तरित होने से एक पाजिट्रान मुक्त होता है।

$$\text{प्रोटान} \rightarrow \text{न्यूट्रान} + \text{पाजिट्रान}$$

$$_1H^1 \rightarrow {}_0n^1 + {}_{+1}e^0$$
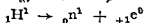
इस क्रिया के उदाहरण आगे चल कर कृत्रिम रेडियधर्मिता में दिये गये हैं। ऐसी एक रूपान्तर क्रिया निम्नलिखित है :—

$$_7\text{नाइट्रोजन}^{13} \rightarrow {}_6\text{कार्बन}^{13} + {}^{\circ}_{1}\text{पाजिट्रान}^{\circ}$$

$$_7N^{13} \rightarrow {}_6C^{13} + e^+$$
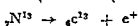
यहां पर नाइट्रोजन का नाभिक कार्बन मे परिणत हो जाता है, क्योंकि नाइट्रोजन के नाभिक का एक प्रोटान बदलकर न्यूट्रान बन गया।

नाभिक में प्रोटान तथा न्यूट्रान आपस में रुपान्तर कर सकते है। इसका अर्थ यह हुआ कि वे कण जिन्हे हम "मूलभूत कण" कहते है, अविनाशी नहीं हैं।

चित्र संख्या ८—विकिरण-संरचना
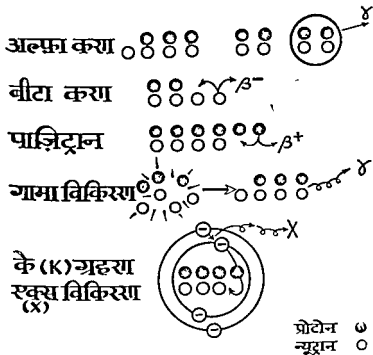
अध्याय ५

नाभिक की बन्धन-ऊर्जा

वृहत् भार-वर्णक्रम-मापी के निर्माण से परमाणुओं का भार बड़ी ही सूक्ष्मता से ज्ञात किया जा सकता है। इससे तत्त्वों के सब समस्थानिकों के भार निकालने में वैज्ञानिक सफल हुए, किन्तु समस्थानिकों के भार निकालते समय रासायनिक प्रतिमान नहीं प्रयुक्त किये गये। रासायनिक प्रतिमान मे आक्सीजन के भार को सोलह मात्र (१६.००) माना जाता है, परन्तु आक्सीजन के तीन समस्थानिक १६, १७ तथा १८ ज्ञात हैं। साधारण आक्सीजन में तीनो का संमिश्रण रहता है, यद्यपि १७ व १८ समस्थानिक सूक्ष्म मात्रा में ही रहते है। इस कारण उसे प्रतिमान के रूप मे व्यवहार करना ठीक न होता। अतः समस्थानिकों के भार निकालने के लिए भौतिक प्रतिमान लिये गये जिनमे आक्सीजन के समस्थानिक सोलह (१६) का भार १६.०० माना गया। इस प्रकार रासायनिक तथा भौतिक प्रतिमानों मे सूक्ष्म अन्तर है। परमाणु-विखण्डन के सारे कार्यो में भौतिक प्रतिमान का ही व्यवहार किया जाता है।

भौतिक प्रतिमान के अनुसार कुछ समस्थानिको के भार निम्नलिखित हैं (परमाणु भार दाहिनी ओर ऊपर तथा परमाणु-संख्या बाईं ओर नीचे दी जा रही है)—

तत्व	सकेत	समस्थानिक भार
हाइड्रोजन	$_1H^1$	१ ००८१४२
	$_1D^2$	२ ०१४७३५
हीलियम	He^4	४ ००३८७३
कार्बन	$_6C^{12}$	१२ ००३८०
	$_6C^{13}$	१३ ००७४७
आक्सीजन	$_8O^{16}$	१६ ००००
	$_8O^{17}$	१७ ००४५३३
	$_8O^{18}$	१८ ००४८७
नियन	$_{10}Ne^{20}$	१९ ९९८८६
न्यूट्रान	$_0n^1$	१ ००८९८२
प्रोटान	$_1p^1$	१ ००७५९३
इलेक्ट्रान	$_{-1}e^0$	० ०००५४९

प्रत्येक समस्थानिक के नाभिक प्रोटान तथा न्यूट्रान द्वारा बने है। हीलियम के परमाणु मे दो (२) प्रोटान, दो (२) न्यूट्रान होते है और दो (२) इलेक्ट्रान नाभिक के चारो ओर परिक्रमा करते है।

इसी प्रकार नियन के परमाणु मे दस (१०) प्रोटान, दस (१०) न्यूट्रान है और दस (१०) इलेक्ट्रान परिक्रमा करते है।

आइए किसी परमाणु मे उपस्थित कणों के भार को जोड़ कर देखे :

उदाहरण

$_1H^2$ अथवा ड्यूटीरियम मे एक (१) प्रोटान, एक (१) न्यूट्रान तथा एक (१) इलेक्ट्रान है।

१—१ प्रोटान का भार= १.००७५९३

२—१ न्यूट्रान का भार= १.००८९८२

३—१ इलेक्ट्रान का भार= ०.०००५४९

४—१ ड्यूटीरियम के कणों का परिगणित योग १.००७५९३+
१००८९८२ (१ · २+३) ०.०००५४९
=२.०१७१२४

५—ड्यूटीरियम का प्रयोग द्वारा प्राप्त भार =२.०१४७३५

६— अन्तर (४-५) =०.००२३८९

कुछ समस्थानिकों के योग द्वारा प्राप्त भार तथा प्रयोगों द्वारा प्राप्त भार नीचे दिये जा रहे हैं।

समस्थानिक	परिगणित	प्रयोगात्मक	अन्तर
${}_1H^2$	२.०१७१२४	२.०१४७३५	०.००२३८९
${}_2He^4$	४.०३४२४८	४ ००३८७३	०.०३०३७५
${}_8O^{16}$	१६.१३६९९२	१६.०००००००	०.१३६९९२
${}_{92}U^{238}$	२४०.०६०४	२३८ १२४९	१.९३५५

इसी प्रकार प्रत्येक परमाणु के भार में अन्तर आता है। हम देखेंगे कि यूरेनियम के १.८३५५ मात्रा का अन्तर है जो एक हाइड्रोजन के परमाणु-भार से भी अधिक है। इस अन्तर को 'बन्धन ऊर्जा' कहते हैं। जितना बड़ा नाभिक होगा उतनी ही अधिक बन्धन ऊर्जा होगी। हीलियम के नाभिक बनने में दो (२) प्रोटान और दो (२) न्यूट्रान जुड़ते ह। इनके जुड़ने मे कुछ संमात्राओं का क्षय होता है। यह क्षय ऊर्जा में परिणित हो जाता है।

पाठक यह प्रश्न कर सकते हैं कि अन्तर तो समात्रा मे है, परन्तु हम उसे ऊर्जा क्यों कह रहे हैं? इसके समझने के लिए हमें संमात्रा तथा ऊर्जा के सम्बन्ध को देखना होगा। बहुत समय से ऊर्जा तथा संमात्रा की परिभाषा

अलग-अलग होती आयी है। लोग यह समझते हैं कि ऊर्जा के कुछ और नियम हैं जबकि संमात्रा बिल्कुल भिन्न नियमों से बंधी है। संमात्रा तथा ऊर्जा द्रव्य के अलग-अलग गुण माने गये हैं। इनमें आपस में कोई सम्बन्ध नहीं है। परन्तु आइन्सटीन के सापेक्षवाद से यह सिद्ध हो गया है कि संमात्रा एवम् ऊर्जा का विनिमय सम्भव है। यह सम्बन्ध निम्न प्रकार का है—

$$\text{ऊर्जा} = \text{संमात्रा} \times (\text{प्रकाश वेग})^2$$

$$E = m\ C^2$$

इन सभी कारणों से हम समस्थानिक के अन्तर को ऊर्जा में परिणत कर सकते हैं। उदाहरण के लिए हम हीलियम लेते हैं। चार (४) ग्राम हीलियम बनाने के लिए लगभग दो (२) ग्राम हाइड्रोजन तथा दो (२) ग्राम न्यूट्रान का व्यय होगा। इसमें ०.०३०५ ग्राम संमात्रा का क्षय होगा। इतनी संमात्रा को ऊर्जा में परिणत करने पर लगभग ६.५×१०^{११} कैलरी ऊर्जा बनेगी। कोयले से इतनी ऊर्जा प्राप्त करने के लिए लगभग एक लाख कि० ग्रा० विशुद्ध कोयला लगेगा। यही विशाल ऊर्जा नाभिक की स्थिरता का मूल मंत्र है। इस ऊर्जा की उत्पत्ति संमात्रा के क्षय के कारण होती है। इसी कारण इसे नाभिक बन्धक ऊर्जा कहते हैं। इस ऊर्जा की विशेषता अन्यत्र दी गयी है।

अध्याय ६

तत्वांतरण

(परमाणु-विखण्डन का प्रथम चरण)

सन् १९१९ ई० तक नाभिक-विज्ञान में उन्नति हो चली थी। रदरफोर्ड तथा अन्य अनुसन्धान-कर्त्ताओं द्वारा नाभिक की सत्ता की पुष्टि हो गयी थी और परमाणु संरचना मे उसका विशेष स्थान स्वीकृत हो चुका था। रेडियधर्मिता द्वारा ही परमाणु-तत्वातरण की प्रथम खोज हुई। इससे यह मालूम हुआ कि रेडियधर्मी तत्वों का रूपान्तर एक चरण में न होकर शृंखला रूप में होता है। इस शृंखला में कुछ तत्त्व अल्फा-कण मुक्त करते हैं तथा कुछ बीटा-कण। इस प्रकार वैज्ञानिक जान गये कि नाभिक की बनावट सरल न होकर अत्यन्त जटिल है। तत्वों की स्थिरता का सिद्धान्त असत्य सिद्ध हो चुका था। वैज्ञानिकों को ऐसा आभास होने लगा था कि प्रत्येक तत्त्व के नाभिक कुछ मूलभूत कणों द्वारा बने हैं। समस्थानिकों की खोज भी इसी समय हुई।

इसी समय (१९१९ में) कृत्रिम रूप से तत्वांतरण लाने मे रदरफोर्ड सफल हुए।

रेडियधर्मी तत्त्वों से निकले अल्फा-कणों मे प्रचुर मात्रा मे ऊर्जा वर्तमान रहती है। इन कणों का वेग इतना अधिक है कि यदि किसी प्रकार की रुकावट न डाली जाय तो वे एक क्षण मे सारी पृथ्वी का चक्कर लगा सकते है। रदरफोर्ड ने इन्ही अल्फ़ा कणो को तत्वांतरण के हेतु प्रयुक्त किया।

रदरफोर्ड के उपकरण अत्यन्त सरल थे। सर्वप्रथम प्रयोग में लाये जाने वाले उपकरण मे एक कोष्ठक लिया गया जिसमे कोई भी गैस ऊपर

बनी दो नलियों द्वारा भरी या निकाली जा सकती थी। रेडियधर्मी स्रोत बीच स्थान पर रख दिया जाता था जिससे अल्फ़ा-कण निकलते थे। अल्फ़ा कण स्रोत से निकल कर एक जिंक सलफाइड पटल पर चमक पैदा करते थे जिसे एक सूक्ष्मदर्शी यंत्र द्वारा देखा जा सकता था। सामान्यतः गैस के अधिक दबाव तथा अन्य रुकावटों के कारण अल्फा-कण जिंक सल्फाइड पटल तक नही पहुँच पाते।

रदरफोर्ड ने अपने प्रयोग विभिन्न गैसो की उपस्थिति मे किये। उपकरण मे आक्सीजन या कार्बन डाइआक्साइड प्रयोग करने से पटल पर चमक नही दिखाई दी, परन्तु उसी दबाव पर नाइट्रोजन की उपस्थिति मे तीव्र चमक दिखाई पडी। यह हम पहले ही बता चुके है कि ऐसी दशा मे अल्फ़ा-कणो का जिंक सल्फाइड पटल तक पहुँचना असम्भव है, अत: यह चमक किन्ही अन्य कणों द्वारा ही हुई होगी। जो कण चमक उत्पन्न करते थे वे नाइट्रोजन की उपस्थिति में ही उत्पन्न हुए होगे।

रदरफोर्ड ने इन प्रयोगों की निम्न प्रकार से विवेचना की। अल्फा-कण नाइट्रोजन परमाणुओं पर क्रिया करते है। इस क्रिया द्वारा एक ऐसे नये कण की उत्पत्ति होती है जो अल्फा-कण से अधिक वेधी है।

ये कण क्या हैं और इनके गुण क्या है ? इस प्रश्न को सुलझाने में रदरफोर्ड सफल भी हुए। उन्होने उत्पन्न कणो पर विद्युत् तथा चुम्बकीय क्षेत्र के प्रभाव का प्रेक्षण किया। इन प्रयोगो द्वारा कणों के भार तथा आवेश की मात्रा ज्ञात हुई जिनसे यह सिद्ध हुआ कि यह प्रोटान ही है। पाठको को याद होगा कि हाइड्रोजन के नाभिक को ही प्रोटान कहते है। रदरफोर्ड ने अपने उपकरण द्वारा प्रोटान उत्पन्न किये। इनकी उत्पत्ति नाइट्रोजन पर अल्फा-कण की क्रिया से हुई।

अल्फा-कण नाइट्रोजन परमाणु के नाभिक पर वेग से टोकर मारते हैं। इस मुठभेड में नाइट्रोजन नाभिक से एक प्रोटान निकलता है। इस परिवर्तन के कारण नाइट्रोजन नाभिक पर आवेश की मात्रा और उसकी परमाणु-संख्या बदल जाती है। नाइट्रोजन नाभिक में अल्फ़ा-कण के प्रवेश

करने से एक नये नाभिक का क्षणिक निर्माण होता है। यह नाभिक फ्लोरीन तत्त्व का समस्थानिक है और इसका भार अठारह (१८) तथा आवेश नौ (९) है। यह नाभिक प्रकृति में नहीं पाया जाता और अत्यन्त अस्थायी होने के कारण शीघ्र ही विखण्डित हो जाता है। इसके टूटने से एक शक्तिशाली प्रोटान उत्पन्न होता है जो वेग से निकलकर पटल पर चमक देता है। बचे हुए कण का भार सत्रह (१७) होता है जो आक्सीजन तत्त्व का नाभिक है। इस क्रिया के विभिन्न रूप निम्नलिखित हैं:—

${}_{७}$नाइट्रोजन^{१४} + ${}_{२}$हीलियम^{४} → ${}_{९}$फ्लोरीन^{१८} → ${}_{८}$आक्सीजन^{१७} + ${}_{१}$प्रोटान^{१}

$${}_{7}N^{14} + {}_{2}He^{4} \rightarrow {}_{9}F^{18} \rightarrow {}_{8}O^{17} + {}_{1}P^{1}$$
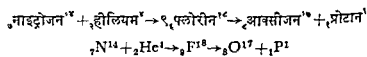
पाठक यह देखेंगे कि क्रिया के दोनों ओर के नाभिकों के भारों का योग समान है जो अठारह-अठारह है। इसी प्रकार दोनो ओर कणों पर आवेश का योग भी समान है जो नौ-नौ है।

नाइट्रोजन नाभिक पर सफलता मिलने के पश्चात् रदरफोर्ड ने अन्य तत्त्वों पर भी प्रयोग किये। फलत अनेक तत्त्वों पर अल्फा-कणों द्वारा आक्रमण किया गया। बोरन, फ्लोरीन, सोडियम, एल्यूमिनियम तथा फ़ासफोरस पर इस आक्रमण से वेगवान् प्रोटानों की उत्पत्ति हुई।

रदरफोर्ड एवम् चेड्विक ने एक अन्य उपकरण का भी निर्माण किया जिससे दूसरे तत्त्वों पर आक्रमण-क्रिया द्वारा उत्पन्न प्रोटान की खोज सम्भव हो सकी। इन तत्त्वों में नियन, मैगनीशियम, सिलिकन, गंधक, क्लोरीन, आर्गन, एवम् पोटैशियम थे। पोटैशियम से अधिक भार वाले तत्त्वों पर यह क्रिया असफल हुई क्योंकि परमाणुओं पर भार बढ़ने के साथ आवेश की मात्रा भी बढ़ती जाती है। अधिक आवेश वाले तत्त्व पर आक्रमण सफल होने के लिए अधिक वेग वाले कण की ही आवश्यकता होती है। रदरफोर्ड ने जिस अल्फा-कण का प्रयोग किया उसका वेग सीमित था, इस कारण भारी तत्त्वों पर वह सफल न हो सका।

रदरफोर्ड के शिष्य ब्लैकट ने अभ्र प्रकोष्ठ द्वारा तत्वांतरण का अध्ययन

किया। उसने बड़ी सख्या में चित्र लिये। केवल नाइट्रोजन के साथ ही लगभग तेईस सहस्र (२३०००) चित्र लिये गये। हर दस या पन्द्रह सेकेंड के पश्चात् चित्र लिये जाने की योजना की गयी थी। इन तेईस सहस्र (२३०००) चित्रों में से आठ (८) चित्र ऐसे थे जिनमें नाइट्रोजन का तत्वांतरण हुआ था। ब्लैकेट ने अत्यन्त कठिन एवम् सूक्ष्म प्रयोग किये जिनसे रदरफोर्ड के पूर्व प्रयोगों की पुष्टि हुई।

न्यूट्रान की खोज

हम यह देख चुके है कि तत्वांतरण के कारण प्रोटान की उत्पत्ति हो सकती है। इन प्रयोगो के सूक्ष्म विश्लेषण से एक नये कण की भी खोज हुई। यह खोज अत्यन्त क्रांतिकारी थी। रदरफोर्ड के इन अल्फ़ाकणीय प्रयोगों के पश्चात्, दस वर्षों तक इस दिशा में कोई नया कार्य न हुआ। यह पहले बताया जा चुका है कि कुछ ऐसे भी हल्के तत्त्व थे जिनसे अल्फा-कण
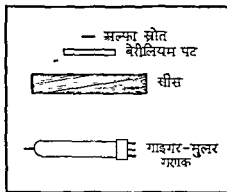
चित्र संख्या ९—बेरिलियम पर अल्फाकणों का प्रयोग

द्वारा प्रोटान की उत्पत्ति नहीं होती थी। इनमें से एक तत्व, बेरिलियम भी है। इसका परमाणु-भार नौ (९) तथा परमाणु-संख्या अथवा आवेश चार

(४) है। जर्मन वैज्ञानिक बोथे तथा बेकर ने बेरिलियम पर अल्फ़ा कणों का प्रयोग किया। उनके प्रयोगों का अनुमान दिये हुए चित्र द्वारा हो सकता है। इसमे पोलोनियम अल्फा-कण का स्रोत था। एक रजत की प्लेट पर पोलोनियम तत्त्व की तह जमायी गयी जिससे अल्फ़ा कण निकलते थे। इस स्रोत के निकट बेरिलियम या अन्य तत्त्व की प्लेट रखी गयी। स्रोत से निकले अल्फ़ाकण बेरिलियम प्लेट से टकराते थे। यदि इस क्रिया द्वारा किसी प्रकार की किरणों की उत्पत्ति हो, तो उनकी पहचान एक गाइगर-मुलर गणक द्वारा की जा सकती है। यह यंत्र ऐसे स्थान पर रखा गया कि वे किरणें उस पर आकर पड़ें। इस प्रयोग में गाइगर-मुलर गणक तथा बेरिलियम के बीच विभिन्न मोटाई की प्लेटों के रखने का प्रबन्ध था।

इस प्रयोग मे उपकरण को इस प्रकार परिगणित करके रखा गया कि अल्फा-कण गाइगर-मुलर यंत्र तक सीधे न पहुँच पाये। पाठकों को यह जानना आवश्यक है कि विभिन्न स्रोतों से निकले अल्फ़ा-कण भिन्न-भिन्न दूरी तक जा सकते हैं अर्थात् भिन्न-भिन्न स्रोतों के अल्फ़ा-कणों की परिधि सीमित है। उस परिधि के बाद यह कण कोई प्रभाव नही डाल सकते; उदाहरणार्थ, पोलोनियम तत्त्व से निकले अल्फ़ा-कण ३.७२ से० मी० की दूरी तक जा सकते हैं।

अब हम देखेंगे कि इन प्रयोगो से बोथे तथा बेकर ने क्या निष्कर्ष निकाला ? यह ऊपर बताया जा चुका है कि स्रोत से निकले अल्फ़ा-कण गणक तक सीधे नही पहुँच सकते और उनके द्वारा गाइगर यंत्र में कोई हलचल नही होती। परन्तु इन दोनों के बीच बेरिलियम या कुछ और तत्त्व (जैसे लीथियम, बोरान) रख दिये जायें तो उन तत्वो से कुछ नयी किरणें निकलती है। ये किरणें गाइगर-मुलर गणक में हलचल या विसर्जन करती है। इस विसर्जन की मात्रा नापी जा सकती है। विभिन्न तत्त्वों के प्रयोग से भिन्न-भिन्न मात्रा में विसर्जन उत्पन्न होता है। इन प्रयोगों मे बेरिलियम द्वारा सबसे अधिक मात्रा मे विसर्जन उत्पन्न हुआ।

रदरफोर्ड ने जब बेरिलियम का उपयोग अपने तत्वातरण प्रयोगों मे किया तो उन्हे उसमे सफलता नही मिली। इसका कारण यह था कि रदर-फोर्ड अपने प्रयोगों में प्रोटान की उत्पत्ति ही देख रहे थे। उनके उपकरण इस प्रकार बने थे कि उनके द्वारा केवल प्रोटान या अन्य आवेशयुक्त कण की उत्पत्ति की ही पहचान हो सकती थी।

बोथे एव बेकर के प्रयोगो द्वारा निकले विकिरण बहुत वेधक सिद्ध हुए। यह सीस आदि भारी तत्वों की मोटी तहो से सरलता से निकल जाते थे। पाठको को हम पहले बता चुके है कि गामा-किरणें द्रव्य की मोटी तहों से आर-पार हो जाती है। इन वैज्ञानिको ने इस समय यही विचार किया कि उनके प्रयोगों मे गामा-किरणो की उत्पत्ति हो। इस तरह नये प्रकार के तत्वातरण प्रयोगो की खोज हुई।

इसी समय फ्रासीसी वैज्ञानिक जोलियेक्यूरी ने बोथे-बेकर के प्रयोगों को दोहराया। उन्होंने अपने निरीक्षणो मे गाइगर-मुलर उपकरण का प्रयोग नही किया, वरन् उसके स्थान पर एक आयनीकरण कोष्ठक का उपयोग किया। इस उपकरण द्वारा आयनीकरण की माप की जा सकती थी। जोलियेक्यूरी ने अपने प्रयोगो द्वारा इन विकिरणों की जॉच की। ये विकिरण स्वतः बहुत कम आयनीकरण उत्पन्न करते थे। परन्तु आयनी-करण कोष्ठक मे पैराफिन रखने पर आयनीकरण की मात्रा बहुत बढ़ जाती थी। पेराफिन के अतिरिक्त कोई और हाइड्रोजन युक्त पदार्थ भी आयनीकरण की मात्रा बढा देता था।

जोलियेक्यूरी द्वारा किये गये निरीक्षणो से यह ज्ञात हुआ कि बेरिलियम पर अल्फा-कणों की क्रिया से जो विकिरण उत्पन्न होते हैं, वे पैराफिन पर क्रिया करते है। इस क्रिया के फलस्वरूप पैराफिन से प्रोटानों की उत्पत्ति होती है। इन प्रोटानों के निकलने से आयनीकरण की मात्रा बढ जाती है। इस क्रिया को निम्न प्रकार लिखा जा सकता है—

बेरिलियम + अल्फ़ाकण → नया तत्व + विकिरण

विकिरण + पैराफिन → प्रोटान

दूसरे वैज्ञानिको ने भी जोलियेक्यूरी एवं बोथे-बेकर के प्रयोगों की पुष्टि की। कुछ प्रयोग ऐसे भी हुए जिनमें उत्पन्न प्रोटानों के मार्ग चिह्न फोटोग्राफी प्लेट पर उतर आये।

इसी प्रकार के प्रयोग अग्रेज वैज्ञानिक चेडविक (Chadwick) ने किये। उसने बेरिलियम से निकले विकिरणों का भलीभाँति निरीक्षण किया। इनमें बेरिलियम से उत्पन्न विकिरणोंके द्वारा नाइट्रोजन तथा हीलियम को प्रभावित किया गया। इन प्रयोगों का आश्चर्यजनक परिणाम मिले। नाइट्रोजन तथा हीलियम पर विकिरणो की क्रिया से वेगवान् कण निकले।

उस समय तक वैज्ञानिको की धारणा थी कि बेरिलियम द्वारा उत्पन्न विकरण स्वयम् गामा-किरणें है। इन गामा-किरणों की क्रिया द्वारा पैराफिन से प्रोटान निकलते हैं जिन्हे बोथे-बेकर एव जोलियेक्यूरी ने देखा था। इसी प्रकार गामा-किरणो की क्रिया द्वारा अन्य हाइड्रोजन युक्त पदार्थों से भी प्रोटान निकले और अन्त मे चेडविक द्वारा किये गये प्रयोगों से भी गामा-किरणों द्वारा वेगवान कण उत्पन्न होना चाहिए। परन्तु इस धारणा में कुछ त्रुटिया थी जिस कारण इसे सत्य मानना कठिन था। उस समय तक गामा-किरणो पर भी प्रचुर कार्य हो चुका था। गामा-किरणों की ऊर्जा की माप भी बहुत-से प्रयोगों द्वारा हुई थी। यदि इन प्रयोगो की क्रिया गामाकिरणो से हुई होती तो उसकी ऊर्जा की मात्रा साधारणत' गामा-किरणों की ऊर्जा से कई सौ गुना अधिक होनी चाहिए थी। यह अनहोनी बात थी। उस समय तक इतनी ऊर्जायुक्त गामा किरणें किसी भी प्रयोग मे न देखी गई थी।

चेडविक ने सर्वप्रथम इस गुत्थी को सुलझाने का प्रयत्न किया। उसने एक नया सिद्धान्त रखा। इसके अनुसार बेरिलियम पर अल्फा-कण की क्रिया द्वारा (और इसी प्रकार बोरान, लीथियिम आदि पर अल्फा-कण की क्रिया द्वारा) गामा किरणे नही निकलती, वरन् नये कणों की किरणे उत्पन्न होती है। ये आवेश रहित कण थे। चेडविक ने इन कणो का नाम न्यूट्रान रखा। इन आवेशरहित कणों की खोज करना कठिन कार्य था।

ये कणों के दण्ड विद्युत या चुम्बकीय क्षेत्र द्वारा प्रभावित नही हो सकते। ये कण आवेश रहित होने के कारण प्रोटान अथवा नाभिक के अत्यन्त निकट जा सकते हैं। इनका नाभिक मे कोई प्रतिकर्षण न होगा। इस कारण यह सरलता से द्रव्य के बीच से निकल सकेगे। इनको रोक कर रखना दुष्कर कार्य सिद्ध होगा।

न्यूट्रान का चित्र लेना असम्भव-सा है क्योकि वे आवेश रहित कण है। परन्तु न्यूट्रान दूसरे कणों से टकराकर उनको अपना वेग दे सकते है। इसके द्वारा दूसरे कणों के चित्र भी लिये जा सकते हैं। इस प्रकार न्यूट्रान अपनी उपस्थिति दूसरे कणों द्वारा प्रदर्शित करते हैं।

चेडविक के न्यूट्रान-सिद्धान्त से बहुत-सी कठिनाइयां हल हो गयी। अब तो अनेक प्रयोगो द्वारा न्यूट्रान की उपस्थिति की पुष्टि हो चुकी है। न्यूट्रान परमाणु रचना का आवश्यक अग है। हम आगे देखेंगे कि न्यूट्रान ने बड़ा ऐतिहासिक कार्य किया है।

न्यूट्रान उत्पत्ति की क्रियाएँ

अब हम यह देखें कि किस प्रकार बोथे-बेकर तथा चेडविक के प्रयोगो द्वारा न्यूट्रान की उत्पत्ति हुई। इन वैज्ञानिकों ने बेरिलियम नाभिक पर अल्फा-कण द्वारा क्रिया की। बेरिलियम नाभिक का भार नौ (९) है और उसकी परमाणु-संख्या अथवा नाभिक आवेश चार (४) है। अल्फा-कण का भार चार (४) तथा आवेश दो (२) है। अल्फा-कण बेरिलियम के नाभिक से टकराकर संलग्न हो जाते है और बदले में एक न्यूट्रान कण बाहर निकल जाता है। इस क्रिया द्वारा एक नया तत्त्व बनता है जिसका भार ९+४-१=१२ (बारह) है तथा परमाणु संख्या ४+२=६ (छ.) है। यह तत्त्व कार्बन है। इस क्रिया को निम्नलिखित समीकरण द्वारा सूचित किया जा सकता है—

बैरिलियम+हीलियम→कार्बन+न्यूट्रान

$${}_4Be^9 + {}_2He^4 \rightarrow {}_6C^{12} + {}_0n^1$$
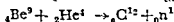
समीकरण में ऊपर के अंक परमाणु भार तथा नीचे के अंक परमाणु संख्या बताते हैं।

बोरान तथा लीथियम के परमाणुओं पर अल्फा-कण की क्रिया द्वारा भी न्यूट्रान निकलते हैं। बोरान पर क्रिया होने से नाइट्रोजन परमाणु की उत्पत्ति होती है—

बोरान + हीलियम → नाइट्रोजन + न्यूट्रान

$$_5B^{11} + _2He^4 \rightarrow _7N^{14} + _0n^1$$
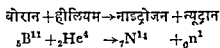
इसी प्रकार अल्फ़ा-कण द्वारा लीथियम पर क्रिया होने से बोरान परमाणु का निर्माण होता है।

लीथियम + हीलियम → बोरान + न्यूट्रान

$$_3u^7 + _2He^4 \rightarrow _5B^{10} + _0n^1$$
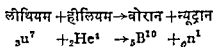
इस क्रिया द्वारा उत्पन्न बोरान के परमाणु का भार दस (१०) है। यह परमाणु बोरान" (B^{11}) का समस्थानिक है।

न्यूट्रान द्वारा तत्वांतरण

तत्वांतरण प्रयोगो में न्यूट्रान अत्यन्त उपयोगी कण सिद्ध हुए हैं। आवेशरहित होने के कारण ये सरलता से नाभिक पर क्रिया करते है। इस समय परमाणु शक्ति की उत्पत्ति एवं प्रयोगों में न्यूट्रान का उपयोग हो रहा है और इस प्रकार न्यूट्रान उत्पन्न करने के सरल उपाय भी ज्ञात हो गये है। परमाणु शक्ति के उपयोगों से पहले भी वैज्ञानिकों ने न्यूट्रान-उत्पत्ति के उपाय ढूंढे थे। रदरफोर्ड ने भी न्यूट्रान बनाने का एक उपाय निकाला था जिसमें रेडियम के किसी लवण को बेरिलियम चूर्ण के साथ मिला दिया जाता था और इस समिश्रण को पतले कांच की बन्द नली मे रख लिया जाता था। इस प्रकार रेडियम से निकले अल्फा-कण बेरिलियम पर क्रिया करके न्यूट्रान उत्पन्न करते थे। १०० मिलीग्राम रेडियमके प्रयोग करने पर लगभग ५ लाख न्यूट्रान प्रति सेकेंड उत्पन्न होते है जिनमें अधि-

दूसरी क्रिया द्वारा नाभिक अस्थिर हो कर दूसरे तत्त्व मे परिणत हो सकता है। इस क्रिया मे कोई कण बाहर निकल जाता है। इस कण के अनेक रूप सम्भव है। कुछ तत्वांतरणो के समीकरण निम्न प्रकार हैं—

आक्सीजन + न्यूट्रान → कार्बन + हीलियम ······(१)

$${}_8O^{16} + {}_0n^1 \rightarrow {}_6C^{13} + {}_2He^4$$

नाइट्रोजन + न्यूट्रान → कार्बन + ड्यूट्रान ······(२)

$${}_7N^{14} + {}_0n^1 \rightarrow {}_6C^{13} + {}_1D^2$$

नाइट्रोजन + न्यूट्रान → बोरान + हीलियम ······(३)

$${}_7N^{14} + {}_0n^1 \rightarrow {}_5B^{11} + {}_2He^4$$
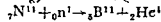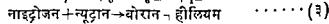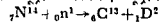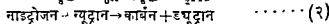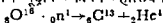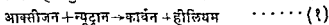
पहले समीकरण मे आक्सीजन पर क्रिया द्वारा कार्बन बनता है तथा एक अल्फा कण स्वतन्त्र हो जाता है। नाइट्रोजन पर न्यूट्रान की क्रिया के दो रूप हैं। एक के द्वारा कार्बन एव न्यूट्रान अथवा हाइड्रोजन का दो (२) भार वाला समस्थानिक बनता है और दूसरी क्रिया मे बोरान-११ और अल्फा-कण बनते हैं। तत्वातरण में मन्द न्यूट्रान अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हुए है। कृत्रिम रेडियधर्मी तत्त्वो के निर्माण मे इनका बहुत उपयोग हुआ है। इसका वर्णन आगे दिया जायगा।

न्यूट्रान द्वारा परमाणु-खण्डन भी सम्भव हुआ है। यह अत्यन्त क्रांतिकारी खोज थी जिसने परमाणु ऊर्जा के द्वार खोल दिये। परमाणु-खण्डन की भी विवेचना आगे होगी।

गामा विकिरण द्वारा तत्त्वांतरण

गामा-विकिरणों द्वारा भी तत्त्वातरण सम्भव हो सका है। चेडविक तथा उनके साथियो ने ड्यूट्रान (${}_1D^2$) अथवा हाइड्रोजन के दो (२) भार वाले समस्थानिक को गामा-किरणो द्वारा विखण्डित किया है—

ड्यूट्रान + गामा → हाइड्रोजन + न्यूट्रान

$${}_1D^2 + \gamma \rightarrow {}_1H^1 + {}_0n^1$$
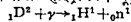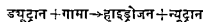
इसी प्रकार जीलार्ड ने बेरिलियम पर गामा विकिरण द्वारा क्रिया की—

बेरिलियम$_9$ + गामा → बेरिलियम^8 + न्यूट्रान

$${}_4Be^9 + \gamma \rightarrow {}_4Be^8 + {}_0n^1$$
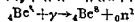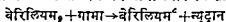
अध्याय ७

परमाणु-विखण्डक यंत्र

पिछले अध्याय मे परमाणु तत्त्वातरण की विधियां बतायी गयी हैं। इनमें मुख्यतः अल्फा-कणों का उपयोग हुआ है। न्यूट्रान की उत्पत्ति भी अल्फा-कणों द्वारा ही हुई। परन्तु अल्फा-कण रेडियधर्मी तत्त्वों द्वारा उत्पन्न होते हैं। इन तत्त्वों मे रेडियम का विशेष स्थान है। विश्व में रेडियम न्यून मात्रा में ही पाया जाता है और अत्यन्त मूल्यवान तत्त्व है। इस कारण तत्त्वांतरण के प्रयोग सीमित मात्रा मे हो सकते है और इनके द्वारा प्राप्त कणो का वेग भी सीमित है।

इन प्रयोगों के प्रारम्भ से ही वैज्ञानिको का यह प्रयत्न रहा है कि रेडियधर्मी तत्त्वों से स्वतंत्र ऐसे कणों का उपयोग किया जाय जिन पर कृत्रिम उपायो द्वारा अधिक मात्रा मे ऊर्जा या वेग प्रदान किया जा सके। अल्फ़ा-कण द्वारा किये गये प्रयोगों से पता चल गया था कि तत्त्वातरण प्रयोगो मे, लाखों इलेक्ट्रान-वोल्ट-उर्जा-युक्त कणो की आवश्यकता पडती है। आगे चलकर तो करोडो इलेक्ट्रान-वोल्ट-ऊर्जा की आवश्यकता पडेगी।

अल्फा-कण या प्रोटान, ड्यूट्रान आदि आवेशयुक्त कण होते है। इन पर धन विद्युत का आवेश होता है। इस कारण इनका किसी परमाणु के नाभिक पर क्रिया करना तभी सम्भव हो सकता है जब वह अत्यन्त वेगवान हों अन्यथा वह नाभिक के धन आवेश के प्रतिकर्षण को पार न कर सकेंगे। इन कणों पर जितनी अधिक ऊर्जा होगी उनके नाभिक वेधन की उतनी ही अधिक सभावना होगी।

रेडियधर्मी तत्त्व सीमित मात्रा मे अल्फा-कण उत्पन्न करते है और इनकी

मात्रा बढ़ायी नही जा सकती। मात्रा बढ़ने पर तत्त्वांतरण की सम्भावना बढ़ जाती है। इस कारण वह कृत्रिम उपाय अधिक उपयोगी सिद्ध होना चाहिए जिससे हम कणों की मात्रा इच्छानुसार बढ़ा या घटा सकें।

इस कार्य के निमित्त बड़े-बड़े यंत्र बनाये गये हैं जिन्हें हम परमाणु विखण्डक यंत्र कह सकते हैं। इन यंत्रों द्वारा अनेक मूलभूत तथा अन्य कणों को शक्तिमान् बनाया जाता है। इसमें प्रोटान, ड्यूट्रान और अल्फा-कण मुख्य हैं। प्रोटान अल्फा-कण से हल्का है इस कारण उसको ऊर्जा देना सरल है और कृत्रिम प्रयोगों मे अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुआ है।

इन कणों का कृत्रिम तत्त्वांतरण के प्रयोगों मे उपयोग करने के लिए अनेक विशालकाय परमाणु विखण्डक यंत्र बनाये गये हैं।

विभिन्न यंत्रो मे अनेक सिद्धान्तों का उपयोग किया गया है। हाइड्रोजन या अन्य गैसों मे विद्युद्विसर्जन द्वारा प्रोटान या अन्य आवेश-युक्त कण उत्पन्न किये जाते हैं। इस प्रकार इन कणों की पूर्ति तत्त्वांतरण प्रयोगों के निमित्त सरलता से की जा सकती है। इन कणों को अधिक वेग देने के लिये विद्युत् क्षेत्र मे त्वरित करना आवश्यक है। इस कार्य के लिए अनेक प्रकार के यंत्र बनाये गये हैं जिनमें लाखों वोल्ट का विद्युत् आवेश रहता है। अमेरिका के प्रिंसटन विश्वविद्यालय मे प्रसिद्ध भौतिक शास्त्री राबर्ट वान डी ग्राफ[1] ने स्थिरवैद्युत जनित्र बनाया था। यह एक विशाल पट्टी द्वारा चालित यंत्र था जिसमे उच्चस्तर का विद्युत् विभव उत्पन्न किया जा सकता था। केलिफोर्निया विश्वविद्यालय, अमेरिका के प्रोफेसर ई० लारेन्स[2] ने साइक्लोट्रान[3] नामक अद्भुत उपकरण का आविष्कार किया। इसके द्वारा आवेश युक्त कण गुणज दशाओ मे त्वरित होते हैं।

इसी समय इग्लैंड की केवेंडिश प्रयोगशाला मे रदरफोर्ड के दो शिष्य

1. Robert van de Graaff
2. E. Lawrence
3. Cyclotron

जान काकक्राफ्ट[1] और वाल्टन परमाणु-विखण्डन पर अनुसन्धान कर रहे थे। सर्वप्रथम इन दोनों ने ही पूर्णतया कृत्रिम तत्त्वांतरण के सफल प्रयोग किये।

१—काकक्राफट-वाल्टन का जनित्र

काकक्राफट-वाल्टन ने अपने उपकरण में विद्युत-त्वरण के सिद्धान्त का उपयोग किया। इस उपकरण के तीन मूल भाग थे।

(१) आयन उत्पत्ति का स्रोत, जिसमे आवेश युक्त कण उत्पन्न होते थे; उदाहरण के लिए हाइड्रोजन गैस मे विद्युत चाप द्वारा प्रोटान उत्पन्न किये जाते थे।

(२) निर्वात नली जिसमे कण स्वतन्त्रतापूर्वक यात्रा कर सकते थे। तथा (३) कणो को वेगवान बनाने का साधन।

काकक्राफट-वाल्टन के उपकरण को समझने मे पहले उसके सिद्धान्त पर दृष्टिपात करना उचित होगा। हम यह जानते है कि समान विद्युत् आवेश के कणों में प्रतिकर्षण होता है। इसके विपरीत विषम आवेशयुक्त कणो मे आकर्षण होता है। वाल्टन तथा काकक्राफट ने एक निर्वात नली के दो सिरों पर दो विद्युदग्र रखे जिनके बीच का विभव-अन्तर बहुत अधिक था। इस नली में कण स्वतन्त्रता पूर्वक गतिज ऊर्जा से यात्रा कर सकते थे। काकक्राफट-वाल्टन विभव-अन्तर के द्वारा कणो को इतना त्वरित कर सके कि वह परमाणु विखण्डन कर सके।

इस क्रिया को सफल करने के लिए कम से कम आठ लाख (८×१०^५) वोल्ट विभव अन्तर की आवश्यकता थी। दिष्ट धारा में ही यह विभव-अन्तर होना चाहिए। उस समय केवल २०,००० वोल्ट विभव-अन्तर पैदा करने के उपकरण प्राप्त थे। काकक्राफट तथा वाल्टन ने इन सीमाओ

1. John Cockcroft & E. T. S. Walton

का ध्यान रख कर अपना यन्त्र संघटित किया। उनके यंत्र की रूप रेखा चित्र १० में दी गयी है।
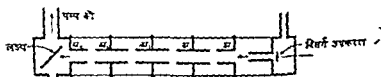
चित्र संख्या १०—काकक्राफ्ट-वाल्टन यन्त्र

उन्होंने दो विद्युदग्रों के मध्य दो लाख (२×१०^५) वोल्ट का विभव अन्तर रखा और अपने उपकरण में इस प्रकार के पांच विद्युदग्र-युग्म रखे। इन पाँचों को शृखलाबद्ध रखने पर प्रथम तथा अंतिम विद्युदग्रों के मध्य दस लाख ($१०^६$) वोल्ट का विभव अन्तर उत्पन्न हुआ। चित्र में ($अ_१$, $अ_२$, $अ_३$, $अ_४$, $अ_५$) पाँच विद्युदग्र युग्म दिखाये गये हैं। प्रत्येक विद्युदग्र युग्म काँच नली में रखा गया और प्रत्येक नली दूसरे से जोड़ दी गयी। इन नलियों को सतर्कता से जोड़ा गया जिससे कहीं से वायु का प्रवेश न हो सके। प्रथम विद्युदग्र युग्म के ऊपर एक विशेष छिद्र था जिसके मध्य से प्रोटान निकल कर विद्युदग्रों में होकर यात्रा कर सकते थे। यह प्रोटान विसर्ग उपकरण में उत्पन्न होते थे। प्रोटान छिद्र से निकल कर प्रत्येक विद्युदग्र युग्म के मध्य में त्वरित होते थे। प्रत्येक विद्युदग्र युग्म के बीच दो लाख (२×१०^५) वोल्ट का विभव-अन्तर था जिसके द्वारा प्रोटान ऊर्जा प्राप्त करते थे। पांचों विद्युदग्र युग्म के मध्य यात्रा करने पर प्रोटान को दस लाख ($१०^६$) वोल्ट की ऊर्जा मिली। इतनी विशाल ऊर्जा प्राप्त करने के पश्चात् प्रोटान लक्ष्य पर आक्रमण करते थे। लक्ष्य का स्थान चित्र में दिया है।

इन विद्युदग्रों को स्थायी विभव-अन्तर देना एक कठिन कार्य था। इस समस्या को काकक्राफ्ट-वाल्टन ने बड़ी कुशलता से सुलझाया। उनके

उपकरण में समान-विभव-अन्तर प्राप्त करने का केवल एक स्रोत था, परन्तु शीघ्र-परिवर्तित स्विच प्रणाली[1] द्वारा वह अनेक विद्युदग्रों को एक साथ सरलता से विभव-अन्तर प्रदान करता था।

लीथियम का विच्छेदन

काकक्राफ्ट तथा वाल्टन ने सर्व-प्रथम लीथियम पर अपने प्रयोग किये। लीथियम एक हलका तत्त्व है। आवर्त-सारणी मे उसका तीसरा स्थान है। उससे हल्के तत्व केवल हाइड्रोजन तथा हीलियम हैं। इस कारण इन वैज्ञानिकों का विचार था कि लीथियम के नाभिक पर प्रोटान का आक्रमण सरलता से हो सकेगा। लीथियम पर अल्फा-कणो का प्रभाव पहले ही देखा जा चुका है। अल्फा-कण हाइड्रोजन से चौगुने भारी है और उन पर आवेश की मात्रा दो (२) है जो प्रोटान के आवेश से दूनी है। इस कारण प्रोटान को अल्फा-कण से अधिक सरलता द्वारा ही हीलियम का विच्छेदन करना चाहिए। लीथियम पर आवेश की मात्रा तीन (३) है। अतः प्रोटान और लीथियम के नाभिक के बीच का प्रतिकर्षण अन्य भारी नाभिकों से कम होना चाहिए।

लीथियम का तत्त्वातरण एक पटल पर चमक की विधि द्वारा देखा गया। चित्र ११ मे दिखाया गया है कि प्रोटान के पतले दण्ड त्वरित होने के पश्चात् एक लक्ष्य पर आक्रमण करते है। यह लक्ष्य दण्ड से ४५° के कोण पर रखा गया। इसी प्रकार लक्ष्य पटल से भी ४५° का कोण बनाता था। लक्ष्य तथा चमक-पटल की दूरी इतनी रखी गयी कि प्रोटान प्रकीर्णन द्वारा पटल तक न पहुँच सके क्योंकि प्रकीर्ण-प्रोटानो की परिधि से यह दूरी अधिक रखी गयी।

काकक्राफ्ट-वाल्टन ने अपने प्रयोग मे लक्ष्य के स्थान पर लीथियम

1. Rapidly changing switches

रखा। इस क्रिया से पटल पर उन्हें चमक दिखाई दी। यह पहले बताया जा चुका है कि प्रोटानों का स्वतः पटल पर पहुँचना असम्भव था। यह
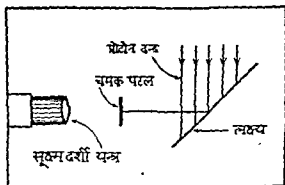
चित्र संख्या ११—प्रोटान दण्ड लक्ष्य पर अनुसरण करते हैं

चमक अन्य कणो द्वारा ही हुई होगी। यह चमक प्रोटान की लीथियम पर हुई क्रिया से ही पटल पर उत्पन्न होती थी और वह उतने काल तक ही वर्तमान रहती थी जब तक प्रोटान का दण्ड लीथियम पर पड़ता था। जिस समय इन कणों का आक्रमण बन्द हो जाता था, चमक भी उसी समय बन्द हो जाती थी।

काकक्राफ्ट तथा वाल्टन ने इन कणों की भली प्रकार विवेचना की। उन्होंने इनकी परिधि अपने प्रयोगों द्वारा ज्ञात की। इसे ज्ञात करने के लिये लक्ष्य और पटल के बीच भिन्न-भिन्न मोटाई की अभ्रक प्लेटें रखी गयीं। जैसे-जैसे अभ्रक प्लेट की मुटायी वढायी गयी, चमक भी बन्द होती गयी। इस प्रकार चमक पैदा करने वाले कणों की ऊर्जा तथा उनकी परिधि ज्ञात की गयी। यह परिधि वायु में ८.४ से० मी० के तुल्य थी। प्रोटानों की इतनी अधिक परिधि असम्भव थी।

काकक्राफ्ट-वाल्टन ने इसकी विवेचना इस प्रकार की—चमक पैदा

करने वाले ये कण प्रोटान न होकर प्रोटान द्वारा बेरीलियम पर हुई क्रिया के फलस्वरूप अल्फ़ा-कण थे जो निम्न प्रकार से उत्पन्न हुए—

$$_{3}\text{लीथियम}^{7} + {}_{1}\text{हाइड्रोजन}^{1} \rightarrow {}_{2}\text{हीलियम}^{4} + {}_{2}\text{हीलियम}^{4}$$

$$_{3}Li^{7} + {}_{1}H^{1} \rightarrow {}_{2}He^{4} + {}_{2}He^{4}$$
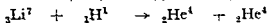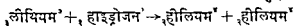
लीथियम का नाभिक एक प्रोटान अवशोषित करके हीलियम के दो नाभिकों में विखण्डित हो जाता है। दोनों वैज्ञानिकों ने यह घोषणा सर्वप्रथम १६ अप्रैल, १९३२ में की।

ऊपर बतायी हुई प्रतिक्रिया द्वारा निकले हुए हीलियम के दोनों नाभिक बड़े वेगवान् थे। इनके साथ संलग्न ऊर्जा प्रयुक्त प्रोटान से कहीं अधिक थी। काकक्रापट-वाल्टन ने अपने प्रयोगों द्वारा इसकी ऊर्जा की मात्रा निकाली। प्रत्येक कण के साथ अस्सी लाख (८×१०^{६}) इलेक्ट्रान वोल्ट ऊर्जा संलग्न थी। प्रायोगिक प्रोटान के साथ केवल दस लाख ($१०^{६}$) इलेक्ट्रान-वोल्ट ऊर्जा थी। यह अधिक ऊर्जा कहा से आयी? इसको समझने के लिए हमें आइन्स्टीन के सिद्धान्त का प्रयोग करना होगा। हम पहले देख चुके हैं कि इस महान् वैज्ञानिक ने ऊर्जा तथा समात्रा का सम्बन्ध निकाला जो निम्न है—

$$E = M.\ C^{2}$$

अथवा ऊर्जा = समात्रा × (प्रकाश का वेग)^{2}

काकक्रापट-वाल्टन के समीकरण में बायीं ओर लीथियम तथा प्रोटान हैं और दाहिनी ओर दो हीलियम के कण हैं। दोनों ओर की समात्राओं का योग इस प्रकार है—

लीथियम^{7}	(Le^{7}) =	७.०१८२२
प्रोटान	(H^{1}) =	१.००८१४
	योग	८.०२६३६
हीलियम^{4}	(He^{4}) =	४.००३८७
हीलियम^{4}	(He^{4}) =	४.००३८७
	योग	८.००७७४

अन्तर ८.०२६३६—८.००७७४ = ०.०१८६२

दो अल्फ़ा-कण बनने की प्रतिक्रिया में ०.० १८६२ संमात्रा का क्षय होता है। आइंसटीन सिद्धान्त के अनुसार यह संमात्रा एक सौ चौहत्तर लाख (१७४,००,०००) इवो० के तुल्य है। काकक्राफ्ट-वाल्टन के प्रयोग में आठ लाख (८,००,००० इवो०) इलेक्ट्रान वोल्ट ऊर्जा वाले प्रोटान ने क्रिया की। इस प्रकार इस क्रिया में कुल मिला कर एक सौ बयासी लाख इलेक्ट्रान वोल्ट (१७४,००,०००+८,००,०००=१८२,००,००० इवो०) ऊर्जा का क्षय हुआ। यह पहले बताया गया है कि काकक्राफ्ट-वाल्टन ने अभ्रक प्लेट द्वारा निरीक्षण से ज्ञात किया कि प्रत्येक अल्फा कण के साथ अस्सी लाख इलेक्ट्रान वोल्ट (८०,००,००० इवो०) ऊर्जा संलग्न रहती है। और इस कारण दो अल्फा-कणों के साथ संलग्न एक सौ साठ लाख इलेक्ट्रान वोल्ट (१६०,००,००० इवो०) ऊर्जा थी। बाद में सम्यक् रीति से किये गये प्रयोगो से ज्ञात हुआ कि दोनो अल्फा-कणों के साथ कुल एक सौ छिहत्तर लाख इलेक्ट्रान वोल्ट (१.७६×१०^{७} इवो०) ऊर्जा रहती हैं।

संक्षेपत. हम कह सकते हैं कि लीथियम पर प्रोटान की प्रतिक्रिया से संमात्रा ऊर्जा मे परिणत होती है। संमात्रा से परिणत ऊर्जा तथा प्रयुक्त प्रोटान की ऊर्जा का योग एक सौ चौरासी लाख इलेक्ट्रान वोल्ट (१,८४,-००,००० इवो०) है। इसके विपरीत उत्पन्न अल्फ़ा-कणो के साथ संलग्न ऊर्जा की मात्रा लगभग एक सौ छियत्तर लाख इलेक्ट्रान वोल्ट (१.७६×१०^{७} इवो०) है। इसके निरीक्षण द्वारा प्राप्त दूसरी सख्या तथा आइंस्टीन समीकरण द्वारा प्राप्त पहली संख्या मे कुछ अन्तर अवश्य है, परन्तु इन प्रयोगो की त्रुटियों पर ध्यान देने पर यह अन्तर अधिक नही माना जायगा। इस प्रकार इन प्रयोगो द्वारा आइंस्टीन समीकरण की पुष्टि होती है।

काकक्राफ्ट तथा वाल्टन ने अपने निरीक्षणो की घोषणा अप्रैल, १९३२ मे की। इनमें कृत्रिम क्रिया द्वारा तत्त्वातरण सम्भव हो सका था।

इन प्रयोगों की पुष्टि अभ्रकोष्ठक प्रयोगों द्वारा हुई। डी तथा वाल्टन ने ये निरीक्षण बड़ी सफलतापूर्वक किये। उन्होंने अल्फा-कणों की परिधि को नापा जिससे उनके साथ सलग्न ऊर्जा की माप सम्यक् रीति से हो सकी।

वान डी ग्राफ का जनित्र

अमेरिका के प्रिंसटन विश्वविद्यालय में सन् १९३१ में प्रसिद्ध भौतिक शास्त्री वान डी ग्राफ ने स्थिर वैद्युत जनित्र[1] बनाया। यह जनित्र परमाणु-विखण्डन में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुआ है। इस उपकरण में उन्हीं सिद्धान्तों का उपयोग हुआ है जिनका स्थिर विद्युत् उत्पन्न करने के लिए वैज्ञानिक भौतिकी में करते हैं। इनमें मुख्य सिद्धान्त यह है कि एक चालक-गोला[2] विद्युत् आवेश को ग्रहण कर सकता है, इसका विभव चाहे जो कुछ भी हो। इस गुण के द्वारा गोले पर विभव बढ़ाया जा सकता है। यह आवश्यक है कि गोला बहुत चिकना और सुडौल हो तथा उस पर नोकीले कोने आदि न हों क्योंकि उनके कारण विसर्ग[3] हो सकता है।

वान डी ग्राफ के जनित्र का अनुमान चित्र १२ द्वारा हो सकता है। इस उपकरण में एक मोटर द्वारा दो गिर्रियों पर एक पेटी घूमती है। यह पेटी किसी अचालक पदार्थ (कागज, रेशम, रेयान आदि) की बनी रहती है। इसमें नीचे की गिर्री के पास ५,००० से २०,००० वोल्ट की दिष्ट-धारा[4] का विभव रहता है जो पेटी को इसी विभव का धन आवेश देती रहती है। यह पेटी धन आवेश लेकर ऊपर जाती है और इस आवेश को धातु के गोले पर संचित करती रहती है। यह गोला एक पृथक्कृत स्तम्भ पर सधा रहता है जिससे उसके आवेश का क्षय न हो। पेटी के बार-बार घूमने से आवेश ऊपर के गोले पर संचित होता रहता है। बाद के बने उपकरणों में पेटी द्वारा गोले से ऋण आवेश के नीचे प्रेषित करने का भी प्रबन्ध रहता था जो अतत. नीचे पृथ्वी पर चला जाता था।

जनित्र के चलाने से गोले पर आवेश संचित होने लगता है जो समय बढ़ने के पश्चात् एक तल पर स्थिर हो जाता है। इस अवस्था में आवेश

1. Electrostatic generator 2. Conducting Sphere
3. Discharge 4. D. C.

चित्र संख्या १२—वान डी ग्राफ़ जनित्र
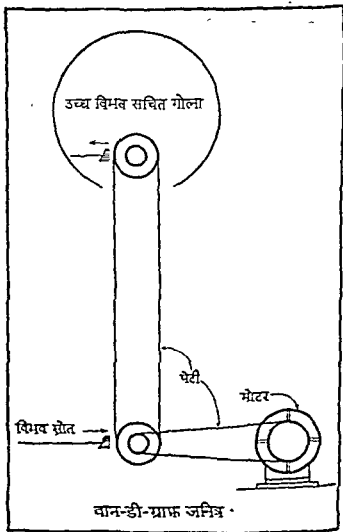
के संचित होने की मात्रा उसके क्षरण की मात्रा के बराबर होती है। यदि हम इस तल को बढ़ाना चाहें तो हमे क्षरण की मात्रा घटानी पड़ेगी। क्षरण को घटाने के कई उपाय किये गये है। पूर्ण जनित्र को अधिक दवाव की वायु या अन्य गैसो मे रखने पर क्षरण घट जाता है। वायु के स्थान पर विशुद्ध नाइट्रोजन, मीथेन, या उससे व्युत्पन्न डाइक्लोरो-फ्लोरोमीथेन अधिक उपयोगी सिद्ध हुए है।

कणो को त्वरित करने के हेतु गोले से एक नली जोडी जाती है जिसमे से कण प्रवाहित होते है। जनित्र के आवेश के कारण कण अत्यत वेगवान् तथा ऊर्जाशील हो जाते है।

वान डी ग्राफ के सर्वप्रथम जनित्र से केवल अस्सी हजार वोल्ट (८०,००० वो०) आवेश उत्पन्न हुआ था। अगले उपकरण मे वह पन्द्रह लाख वोल्ट (१५,००,००० वो०) तक विभव ले जाने में सफल हुए थे। यह स्थिति १९३१ में थी। इसके पश्चात् उन्होने पचास लाख वोल्ट (५०,००,००० वो०) का विभव भी उत्पन्न किया। इस आविष्कार से लोगो मे बहुत उत्साह वढा और अन्य स्थानों मे बड़े-बड़े जनित्रो की स्थापनाए हुईं। आजकल परमाणु-विखण्डन प्रयोगों मे प्राय. सर्वत्र वान डी ग्राफ के जनित्र ही प्रचलित हो गये है। इनके द्वारा कणों पर पचास लाख वोल्ट (५०,००,००० वो०) का विभव उत्पन्न किया जा सकता है और विखण्डन प्रयोगो के लिए कणों के निरन्तर दण्ड उत्पन्न किये जा सकते है। इन कणों पर विभव स्थिर रूप से रहता है और उसे इच्छानुसार घटाया-बढ़ाया जा सकता है। इन जनित्रो के द्वारा धन विद्युत् अथवा ऋण विद्युत् दोनों प्रकार के आवेश उत्पन्न हो सकते है। इस कारण इनके द्वारा न केवल धन आवेश वाले कण त्वरित किये जा सकते है, वल्कि इलेक्ट्रान (जिन पर ऋण आवेश रहता है) के भी वेगवान दण्ड उत्पन्न हो सकते हैं। इलेक्ट्रानो को त्वरित करने मे इस उपकरण का उपयोग बहुत स्थानो मे हुआ है। उच्च ऊर्जाशील एक्स-विकिरण भी इनके द्वारा उत्पन्न किये गये जो उपचार तथा अन्य औद्योगिक कार्यों में अत्यत लाभ-दायक सिद्ध हुए है।

साइक्लोट्रान

अमेरिका में केलिफोर्निया विश्वविद्यालय के भौतिक शास्त्री अर्नेस्ट लारेंस[1] ने १९२९ मे कुछ प्रयोग प्रारम्भ किये जिनके फलस्वरूप साइक्लोट्रान का आविष्कार हुआ। इस आविष्कार के कारण लारेंस को विश्व का प्रसिद्ध नोबेल पुरस्कार भी मिला।

काकक्राफ्ट और वान डी ग्राफ के उपकरणो मे कणों को एक ही बार मे सारी ऊर्जा दे दी जाती है। इसके विपरीत लारेंस ने यह सोचा कि ऊर्जा को छोटी-छोटी मात्राओ मे अनेक बार दिया जाय। आइए, यहाँ उसके इस सिद्धान्त को समझाने का प्रयत्न करें।
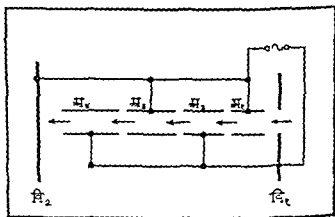
चित्र संख्या १३—लॉरेंस का साइक्लोट्रान सिद्धान्त

यदि हम शृखला में कुछ सिलिंडर लें जिन्हें इस प्रकार प्रत्यावर्ती धारा[2] के स्रोत से जोड़ा जाय जैसा कि चित्र १३ में दिखाया गया है। तो इस प्रकार

1. Ernest Lawrence 2. Alternating current

दो पार्श्ववर्ती सिलिंडर विलोम ध्रुव के होंगे। फिर एक ओर से सिलिंडर में कणों का दण्ड प्रविष्ट करते समय ऐसा प्रबन्ध किया जाय कि क्षेत्र द्वारा उनको आगे बढने के लिए ऊर्जा मिलती रहे। जिस समय कण सिलिंडर के अन्दर होंगे उस समय उन पर कोई क्षेत्र न होगा, प्रत्युत वे प्रवेश करने से पहले दी हुई ऊर्जा के वेग से ही चलेंगे। ज्योंही वे एक सिलिंडर से निकल कर अगले सिलिंडर मे प्रवेश करने वाले होंगे उसी समय उन्हें फिर धक्का देना चाहिए। इस प्रकार कणो को सिलिंडर के बीच के स्थान मे ऊर्जा मिलेगी। प्रत्यावर्ती धारा इस प्रकार बदलेगी कि हर धक्के की दिशा आगे की ओर ही होगी। हर धक्के के पश्चात् कणो का वेग बढेगा और वह अधिक द्युतिमान होते जायेंगे। धारा की दिशा बदलने का समय समान होगा जिसके कारण धक्को की आवृति समान होगी और प्रत्येक अन्त समय के बीच मे वे कण अधिक दूरी तय करते रहेंगे। इस कारण प्रत्येक सिलिंडर की लम्बाई को शृंखला से बडी रखना आवश्यक होगा। हर सिलिंडर के पार करने का समय भी समान होगा। यदि प्रत्येक समय कण-दण्डो को बीस सहस्र वोल्ट (२०,००० वो०) की ऊर्जा दी जाय और इस प्रकार के १० सिलिंडर शृंखला मे लगे हो तो अन्त में उन पर दो लाख वोल्ट (२,००,००० वो०) की ऊर्जा होगी।

इस प्रकार के उपकरण को सरल-त्वरक[1] कहते है। लारेंस ने ऐसे उपकरण से बारह लाख साठ हजार इलेक्ट्रान वोल्ट (१२,६०,००० वो०) की उर्जा वाले कण उत्पन्न किये थे। इस प्रयोग मे सिलिंडर के आकार के इकतीस (३१) विद्युदग्रो का उपयोग किया गया था और प्रत्येक दो विद्युदग्रो के बीच बयालीस सहस्र वोल्ट (४२,००० वो०) का विभव रखा गया। इस निरीक्षण मे लारेंस ने पारे के आयन का त्वरण किया। प्रत्यावर्ती वोल्टता रखने के हेतु लघु तरंग रेडियो जनित्र का उपयोग किया गया

1. Linear accelerator

इससे वोल्टता बदलने की आवृति दो करोड़ (२,००,००,०००) प्रति सेकेंड के लगभग थी। उस समय इस उपकरण की उपयोगिता सीमित थी क्योकि अधिक त्वरण के लिए बहुत लम्बे सिलिंडर के आकार के विद्युदग्रो की आवश्यकता पडती और उपकरण बहुत जटिल तथा असाधारणतया वड़ा हो जाता। कुछ समय के लिए इस प्रकार के त्वरकों सम्बन्धी कार्य रुक गया। पिछले दस वर्षों से फिर ऐसे उपकरण बने हैं। इनका वर्णन हम आगे करेंगे।

लारेंस ने ऊपर बतायी कठिनाइयो का हल बड़ी सुन्दरता से निकाला और साइक्लोट्रान नामक उपकरण का आविष्कार किया। यह उपकरण उसी सिद्धान्त पर कार्य करता है जिस पर लारेंस ने सरल त्वरक बनाया था। इसे हम सर्पिल त्वरक[1] कह सकते हैं। सरल त्वरक मे अनेक धातु-नलियों का प्रयोग होता है। साइक्लोट्रान में केवल दो नलियों का प्रयोग होता है। इन नलियों की बनावट भी सरल त्वरक की नलियों से भिन्न रहती है। प्रत्येक नली (D) के स्वरूप की रहती है और बीच से खोखली रहती है। दोनों नलियों का मुख आमने सामने (DD) के समान रहता है। इसीलिए परमाणु शब्दावली मे ऐसे विखण्डक यंत्रों को डीज़[2] कहा जाता है। चित्र १४ द्वारा इनका अनुमान ठीक प्रकार से हो सकेगा।

इन नलियो के अन्दर किसी प्रकार का विद्युत् क्षेत्र नहीं रहता। वह केवल दोनों विद्युदग्रो के बीच के स्थान में स्थित है जिससे कणो को वेग देने में उसका उपयोग हो सके।

लारेंस ने इन विद्युदग्रों के बीच दोलित विद्युत् क्षेत्र स्थापित किया जिससे दोनों विद्युदग्र ऋण तथा धन विद्युदग्र होते रहे। आवेश युक्त कण इन दोनों विद्युदग्रों के बीच चक्कर काटते हैं। एक विद्युदग्र से निकल कर दूसरे में प्रवेश करते समय उन्हें विद्युत् धारा द्वारा वेग अथवा धक्का

1. Spiral accelerator 2. Dee's

दिया जाता है। फिर क्षेत्र को इस प्रकार से प्रत्यावर्तित करते है कि धक्के की दिशा कण की दिशा के समान रहती है। इस प्रकार कण जितनी बार
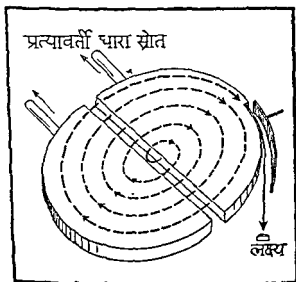
चित्र संख्या १४—सर्पिल त्वरक की बनावट

एक विद्युदग्र से निकल कर दूसरे मे प्रवेश करता है उसके वेग मे कुछ योग हो जाता है। कण गोलाकार परिधि मे चक्कर लगाते है। जिस समय कण अर्ध परिधि बनाकर एक विद्युदग्र से निकलते है उस समय विद्युदग्रो की ध्रुवीयता इस प्रकार की होती है कि उन कणो को आगे बढ़ने के लिए और वेग दिया जा सके। अब वह कण अधिक वेग से दूसरे खोखले विद्युदग्र के अन्दर प्रवेश करते हैं और अर्ध परिधि बनाकर दूसरी ओर से फिर निकल आते है। ज्योंही वह दूसरे विद्युदग्र से निकल कर पहले विद्युदग्र के अन्दर प्रवेश करते हैं त्योंही इन विद्युदग्रों की ध्रुवीयता उलट जाती है जिससे कणों को पहले विद्युदग्र में घुसते समय आगे बढने के लिए धक्का दिया जा सके। इससे पाठक समझ गये होंगे कि विद्युदग्रों की ध्रुवीयता का परस्पर विनिमय

शीघ्रता से होता रहता है। इसका समय नियत रहता है और यह कार्य बहुत शीघ्रता के साथ नियमित रूप से होता है। वस्तुतः कणों का मार्ग सर्पिल गति से बढ़ता जाता है। चित्र को देखने से पाठकों को यह विदित हो जायगा।

ज्यों-ज्यों कणों को वेग मिलता है वे अधिक गति से घूमते हैं। वेग द्वारा गति बढ़ने पर उनका परिधि-व्यास भी बढ़ जाता है। इस कारण वे कण क्रमशः बढ़ते हुए व्यास की परिधि में घूमते हैं। वे एक नियम का पालन करते हैं जिसके अनुसार उन्हें प्रत्येक विद्युदग्र के अन्दर अर्ध परिधि बनाने में समान समय लगता है, चाहे उसका व्यास कम हो या अधिक। प्रारम्भ में ये कण छोटी परिधि में घूमते हैं। धीरे-धीरे परिधि का व्यास बढ़ता जाता है, परन्तु घूर्णन काल समान रहता है। यद्यपि उनका मार्ग बढ़ जाता है, परन्तु समान समय लगने के कारण उनके वेग में वृद्धि हो जाती है। अन्त में ये वेगवान् कण एक विशेष पट्टिका द्वारा विक्षेपित होकर एक गवाक्ष द्वारा बाहर निकल जाते हैं। यह उपकरण, जो साइक्लोट्रान के नाम से प्रसिद्ध है तथा जिसमें कणों को अधिक वेगवान बनाने के लिए बड़े-बड़े विद्युदग्रों का उपयोग किया गया, अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुआ। इसमें आवेशयुक्त कणों पर भिन्न-भिन्न मात्रा की ऊर्जा प्रयोजित होती है। उदाहरण के लिए एक उपकरण द्वारा उत्पन्न ड्यूटीरियम की अपेक्षा हाइड्रोजन के नाभिक अधिक वेगवान् होंगे क्योंकि हाइड्रोजन परमाणु से ड्यूटीरियम परमाणु का भार दुगुना होता है, यद्यपि दोनों के नाभिक में समान आवेश केन्द्रित रहता है। इसी सदर्भ में यह बताना भी आवश्यक है कि आवेश की मात्रा का कण के वेग पर प्रभाव पड़ता है। कम आवेशयुक्त कण शीघ्र वेगवान् हो जाते हैं। इसके विपरीत अधिक आवेशयुक्त कण देर में वेगवान् होते हैं। उनके लिए बड़े उपकरण की आवश्यकता होती है।

साइक्लोट्रान को साधारणतः एक गोलाकार टंकी के मध्य में रखा जाता है। बड़े उपकरणों में इस टंकी का भार इतना अधिक होता है कि उसे खोलने के लिए क्रेन की आवश्यकता पड़ती है। दोनों अर्धगोलाकार

विद्युदग्रों पर आवेश देने के लिए बहुत लम्बा तार लगता है। विद्युदग्रों पर दोलित विद्युत् क्षेत्र स्थापित करने का कार्य बड़ा जटिल है। इस परिवर्तन की आवृत्ति एक करोड़ (१,००,००,०००) प्रति सेकेंड से अधिक होती है जो रेडियो विधि द्वारा ही सम्भव है। इतने परिवर्तन के लिए आवश्यक रेडियो तरंग का दैर्घ्य २५ मीटर के लगभग होगा। इस कारण वैज्ञानिकों को सतर्क रहना पड़ता है कि ये तरंगें प्रयोगशाला तक ही सीमित रहें अन्यथा रेडियो की ध्वनि में गड़बड़ी पैदा करेंगी।

त्वरित होने वाले कण दोनों विद्युदग्रों के मध्य में उत्पन्न होते है। इन्हें हम आवेशयुक्त परमाणु भी कह सकते है।

जिस तत्व के कण उत्पन्न करने होते है उसके वाष्प का प्रवाह करने पर उसके कुछ परमाणु आवेशयुक्त कणो मे परिणत हो जाते है। इस परिवर्तन के लिए एक इलेक्ट्रान-दण्ड का उपयोग किया जाता है। यह इलेक्ट्रान-दण्ड एक गर्म तन्तु से निकलता है जो दोनो विद्युदग्रो के मध्य से नीचे की ओर स्थित रहता है। इलेक्ट्रान-दण्ड नीचे से उत्पन्न होकर ऊपर की दिशा में वेग से जाता है। इस दण्ड को दोनो विद्युदग्रों के बीच सरलता से देख सकते हैं। ये इलेक्ट्रान उपयुक्त तत्त्व के परमाणुओ से टकरा कर इन्हें आवेशयुक्त बना देते है। इस टकराहट से परमाणु मे स्थित बाहरी इलेक्ट्रान निकल जाता है जिसके फलस्वरूप परमाणु आवेशयुक्त कण मे परिणत हो जाता है। उदाहरणार्थ यदि हाइड्रोजन परमाणुओ का उपयोग किया जाय तो टकराहट से परमाणु मे स्थित इलेक्ट्रान निकल जाने पर हाइड्रोजन परमाणु प्रोटान मे परिणत हो जायगा। इसी प्रकार की अवस्था ड्यूटीरियम की भी हो जायगी जिससे ड्यूट्रान की उत्पत्ति होगी।

साइक्लोट्रान मे उत्पन्न आवेशयुक्त कणो के दण्ड का ठीक प्रकार से संकेन्द्रित होना आवश्यक है नही तो कण इधर-उधर फैल कर अपनी ऊर्जा खो देंगे। अन्त मे इस प्रकार से उत्पन्न ये दण्ड विद्युदग्रो के मध्य से निकल कर विखण्डन के प्रयोगो मे उपयुक्त होते है। प्रभावशाली बनने के लिए इन दण्डों का छोटे लक्ष्य पर संकेन्द्रित होना आवश्यक है।

कणों को बड़ी मात्रा में ऊर्जा देने के निमित्त बड़े साइक्लोट्रानों का निर्माण अत्यन्त आवश्यक हो गया। बड़े यंत्रों में लक्ष्य को टंकी के बाहर स्थापित कर दिया गया। इसमे अनेक कठिनाइयां सामने आयीं जिनमें विशेषकर अति निर्वात की समस्या थी। परन्तु वैज्ञानिकों ने अन्ततः उपयोगी यत्रो का निर्माण किया जिनसे अनेक तत्वों का विखण्डन जो पहले किसी भी विधि से नही किया जा सकता था, संभव हो सका।

साइक्लोट्रान के सिद्धान्त को एक सरल उदाहरण द्वारा व्यक्त किया जा सकता है। एक गेंद को धागे से बाँधा जाय। धागे के सिरे को हाथ से स्थिर रखकर गेद को धक्का दिया जाय। जिस समय गेंद अर्ध गोलाकार परिधि पूरी कर ले उसे फिर एक धक्का दिया जाय। इस प्रकार उसकी परिधि की लम्बाई बढती जायगी। अततः जिस समय गेंद अत्यंत वेग से घूम रही हो धागे को छोड़ देने पर वह उसी प्रकार वेग से छूट जायगा जैसे आवेशयुक्त कण वेग से विद्युदग्रों से निकल कर विखण्डन के लिए उपलब्ध होते है।

सिनक्रोट्रान

साइक्लोट्रान की उपयोगिता सीमित है। उसके द्वारा हम कणों को एक सीमा तक ऊर्जा दे सकते हैं, उससे अधिक नही। साइक्लोट्रान में कणों को एक चक्कर लगाने मे समान समय लगता है चाहे उसकी परिधि छोटी हो अथवा बडी। परन्तु यह नियम समान भार वाले कणों पर ही लागू होता है। इस प्रकार समान भार वाले कण साइक्लोट्रान के डी के मध्य निरन्तर समान समय में बढती हुई परिधि वाले चक्कर लगाते रहते हैं जिससे उसका वेग भी निरतर बढता जाता है। सामान्यत. हम भार को एक नियत मात्रा समझते है। परन्तु यदि सूक्ष्मता से देखें तो यह सत्य न उतरेगा। आइंस्टाइन ने अपने सापेक्षवाद में यह बताया है कि किसी भी वस्तु का भार उसकी अवस्थानुसार बदल सकता है। ऊर्जा की मात्रा बढ़ने पर उसका भार भी बढ़ जाता है। आइंस्टाइन ने यह भी बताया कि प्रकाश के वेग से

किसी वस्तु का वेग अधिक नही हो सकता अर्थात् प्रकाश वेग की मात्रा को वेग की उच्चतर सीमा समझना चाहिए।

दैनिक जीवन में यह सिद्धान्त सत्य उतरता प्रतीत नही होता। आजकल तीव्र गति वाले विमान अथवा राकेट पृथ्वी, चन्द्रमा तथा सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करने के लिये छोडे जाते हैं। इनका वेग हमें बहुत अधिक ज्ञात होता है, परन्तु वस्तुतः इनका वेग प्रकाश के वेग का एक सूक्ष्म भाग ही है (लगभग एक लाखवे भाग से भी कम)। अत इतने वेग के कारण किसी वस्तु के भार में बहुत न्यून अन्तर आयेगा। उदाहरणार्थ हम एक लाख किलोग्राम भार के राकेट को लें जो ४०,००० किलोमीटर प्रति घटे के वेग से जा रहा हो। इस वेग के कारण उसके भार में लगभग आधे ग्राम की वृद्धि होगी जो अत्यल्प मात्रा है।

परन्तु त्वरकों मे कणो का वेग ऊपर बताये वेग से कही अधिक पहुँच जाता है। यदि यह वेग प्रकाश के वेग के निकट पहुँच जाय तो उसके भार में बड़ी मात्रा मे वृद्धि होगी। यदि हम एक प्रोटान (हाइड्रोजन नाभिक) को चौरानवे करोड़ इलेक्ट्रान वोल्ट (९४,००,००,००० इवो०) की गतिज ऊर्जा प्रदान करें तो उसका भार स्थिर भार से दुगुना हो जायगा।

इस विवरण से पाठको को विदित हो जायगा कि एक सीमा से अधिक ऊर्जा प्राप्त करने के बाद कणों के भार मे विशेष अन्तर आ जाता है। जब तक यह अन्तर न्यून रहता है उस समय तक साइक्लोट्रान का उपयोग सफलता से हो सकता है। परन्तु जब यह अन्तर पर्याप्त हो जाता है उस समय से कणो को साइक्लोट्रान द्वारा ऊर्जा नही दी जा सकती। इसका कारण यह है कि साइक्लोट्रान के विद्युदग्रों में समान आवृत्ति से ध्रुवीयता बदलती है। यह आवृत्ति उतनी रखी जाती है जितना समय कणो को अर्धपरिधि बनाने मे लगता है। परन्तु एक सीमा के पश्चात् कणो का भार इतना बढ जाता है कि उस समय अर्ध परिधि बनाने का समय बदल जाता है। इस प्रकार विद्युदग्रों की ध्रुवीयता बदलने की आवृति और कणो के अर्ध परिधि काल भिन्न-भिन्न हो जाते है और हम यह कह सकते है कि कण आवृत्ति के परे है।

फलत: वे दोनों विद्युदग्रों के मध्य मे ठीक समय पर नहीं पहुँच पाते। एक विद्युदग्र से निकल कर दूसरे विद्युदग्र में प्रवेश करने के समय उनको ठीक दिशा की ओर धक्का लगना चाहिए। परन्तु ऐसी अवस्था में वह धक्का उलटी दिशा की ओर लगता है, अत. उनके वेग में वृद्धि नहीं होती, वरन् कमी आ जाती है। इन सब कारणो से वैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि प्रोटान को साइक्लोट्रान द्वारा दो करोड़ इलेक्ट्रान वोल्ट (२,००,००,००० इ० वो०) से अधिक ऊर्जा नही दी जा सकती।

इस समस्या को द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् दो वैज्ञानिकों ने एक ही साथ हल किया। इनमे एक वैज्ञानिक केलीफोर्निया विश्वविद्यालय के एडवर्ड मैकमिलन थे तथा दूसरे सोवियत सघ के वेक्सलर। उनके अनुसन्धानों से एक दूसरे उपकरण सिन्क्रोसाइक्लोट्रान[1] अथवा आवृत्ति मूर्छक सिन्क्रोसाइक्लोट्रान[2] का जन्म हुआ। कणो का भार बढ़ने के कारण उनको परिधि बनाने में अधिक समय लगता है। इस उपकरण में समयानुसार विद्युदग्रो के बीच प्रत्यावर्ती आवृत्ति के बदलने का प्रबन्ध था। यह नियन्त्रण एक समस्वरण-घुंडी द्वारा होता था। विभव और कण अनुनाद में रखे जाते थे जिससे कणो को सर्वदा समुचित ऊर्जा मिलती रहे।

संसार मे सबसे बड़ा सिन्क्रोसाइक्लोट्रान केलिफोर्निया विश्वविद्यालय मे है। इसमे पचहत्तर करोड इलेक्ट्रान वोल्ट (७५,००,००,००० इवो०) तक की ऊर्जा देने का प्रबन्ध है। इस उपकरण मे प्रयुक्त चुम्बक का भार तीन सहस्र (३,०००) टन है और प्रत्येक ध्रुव का व्यास ४·५ मीटर है। इसी प्रकार और बड़े उपकरण बनाये जा सकते हैं। परन्तु इनका आकार तथा लागत इतनी अधिक बढ़ जायगी कि उन्हे बनाना असम्भव-सा हो जायगा। इस कारण एक दूसरे उपकरण का आविष्कार किया गया है जिसे

1. Synchrocyclotron
2. Frequency modulated synchrocyclotron

सिनक्रोट्रान कहते हैं। इसमें यन्त्र मे स्थिर परिधि के अन्दर घूमते हुए कणों को ऊर्जा दी जाती है। इस उपकरण के दो भाग होते है। प्रथम भाग में कणों को एक सरल त्वरक द्वारा ऊर्जा प्रदान की जाती है। यह त्वरक वाल्टन-काकक्राफ्ट या अन्य इसी प्रकार का उपकरण रहता है। जब कण इस त्वरक द्वारा वेगवान् हो जाते है तब उन्हे सिनक्रोट्रान मे प्रविष्ट किया जाता है। यहाँ पर वे एक गोलाकार निर्वात की हुई नली मे प्रवेश कर घूमते है, जैसा चित्र १५ मे दिखाया गया है। इस नली के दोनो ओर इसी
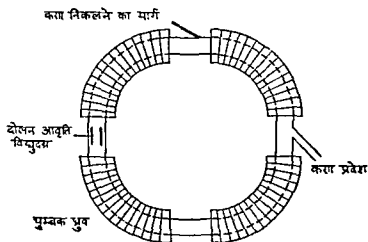
चित्र संख्या १५—कण गोलाकार निर्वात नलीमें घूमते हैं

रूप के खोखले चुम्बक के दो ध्रुव रहते है जो कणों की दिशा ठीक रखते है और उन्हे इधर-उधर भटकने से रोकते है। इस समय इन पर दोलन-क्षेत्र के प्रभाव द्वारा उसी प्रकार ऊर्जा दी जाती है जैसे साइक्लोट्रान में दी जाती है। इस उपकरण मे दोलन आवृत्ति और परिक्रमण अवधि को समान रखने का प्रबन्ध रहता है जिससे दोनों कला मे रहें। धीरे-धीरे एक अवस्था आती है जब समान परिधि मे कण स्थिर समय से परिक्रमा करते है। उनको अधिक ऊर्जा देने से इसमे अन्तर नही आता, वरन् कणो का भार बढता जाता

है। यह अवस्था उस समय आती है जब उनका वेग प्रकाश वेग के निकट पहुंच जाता है।

सिनक्रोट्रान कई प्रकार के हो सकते हैं। इनमें से एक बलवान् संकेन्द्रक होता है जो थोडी सख्या के कणो को बड़े वेग से त्वरित करता है। ऐसे सिनक्रोट्रान, जिनमें कणो को क्रमशः तीस और अट्ठाईस अरब इलेक्ट्रान वोल्ट (२८,००,००,००,००० इ० वो०) की ऊर्जा देने का प्रबंध है, ब्रुक-हैवन राष्ट्रीय अनुसन्धानशाला में जुलाई, १९६० में और जेनीवा, स्विट-जरलैंड मे फरवरी, १९६० मे तैयार हो चुके हैं। लेनिनग्राद, सोवियत सघ में पचास अरब इ० वो० का सिनक्रोट्रान बनाया जा रहा है। ब्रुकहैवन त्वरक द्वारा कणों को लगभग प्रकाश-वेग तक त्वरित कर सकते है।

दूसरे प्रकार के सिनक्रोट्रान को दुर्बल संकेन्द्रक सिनक्रोट्रान कहते है। इसमें चुम्बको के बीच मे अधिक स्थान रहता है जिससे अधिक सख्या में कणो को वेगवान् बनाया जा सकता है। केलिफोर्निया विश्वविद्यालय की अनुसन्धानशाला का बीवाट्रान[1] इसी प्रकार का है। इसमे कणो को छः अरब इलेक्ट्रान वोल्ट (६,००,००,००,०००) से अधिक ऊर्जा प्रदान की जा सकती है। इसका व्यास लगभग चालीस मीटर है और बलयाकार चुम्बक के इस्पात का भार नौ सहस्र सात सौ टन (९,७०० टन) है।

इसी प्रकार का दूसरा उपकरण सोवियत संघ मे दुवना नामक स्थान पर है। इसमें दस अरब इ०वो० (१०,००,००,००,००० इ०वो०) की ऊर्जा देने का प्रबन्ध है। इसके उपकरण का व्यास ६० मीटर है। इसके चुम्बक मे लगे इस्पात का भार छत्तीस सहस्र टन (३६,०००) है। इसकी त्वरक नली मे नब्बे लाख इलेक्ट्रान वोल्ट (९०,००,००० इ० वो०) ऊर्जा सहित कण प्रविष्ट किये जाते हैं। इस उपकरण मे एक लाख चालीस सहस्र

1. Bevatron

किलोवाट (१,४०,०००) की विद्युत् ऊर्जा व्यय होती है। नली को निर्वात करने के लिए छप्पन निर्वात पम्पों का उपयोग होता है।

तीसरे प्रकार के सिनक्रोट्रान को शून्य-प्रवणता-सिनक्रोट्रान' कहते है। इसमे समस्त स्थानों का चुम्बक क्षेत्र समान रहता है। ऐसा एक उपकरण 'ओरेगान' राष्ट्रीय अनुसन्धानशाला, अमेरिका मे बन रहा है। इसका व्यास ६० मीटर होगा। इसके चुम्बक मे कम इस्पात का प्रयोग होगा (केवल चार सहस्र टन और साढे बारह अरब इलेक्ट्रान वोल्ट (१२,५०,००,००,००० इ० वो०) ऊर्जा का प्रबंध रहेगा।

सरल त्वरक

साइक्लोट्रान का वर्णन करते समय पाठको को बताया जा चुका है कि उसके आविष्कारक लारेंस ने सरल त्वरक का सफलता से उपयोग किया था। कुछ कठिनाइयो के कारण उस समय (१९३४) इस उपकरण का कार्य स्थगित करना पडा था। द्वितीय महायुद्ध के समय रेडार का प्रथम बार उपयोग हुआ। इससे उच्च आकृति सांदित शक्ति का उपयोग सम्भव हो सका जिससे सरल त्वरक की नलियों मे अधिक ऊर्जा उत्पन्न हो सकी। केलीफोर्निया विश्वविद्यालय मे ऐसा सरल त्वरक स्थापित किया गया है जिसमें लगभग बारह मीटर लम्बी ताम्र नली का उपयोग हुआ है। इस नली मे ७ रेडार दोलकों का उपयोग हुआ है। वान डी ग्राफ जनित्र द्वारा चालीस लाख इलेक्ट्रान वोल्ट (४०,००,००० इ० वो०) ऊर्जा-प्राप्त प्रोटान नली के एक सिरे मे प्रवेश किये जाते है। नली के एक सिरे से दूसरे तक छियालीस (४६) नलियां लगायी गयी है जिनसे प्रोटान कणो को ४६ बार ऊर्जा प्राप्त होती है। अन्त में तीन करोड़ बीस लाख इलेक्ट्रान वोल्ट (३,२०,००,००० इ० वो०) ऊर्जायुक्त प्रोटान प्राप्त होते हैं।

1. Zero-gradient synchrotron

सन् १९५२ में स्टैनफर्ड विश्वविद्यालय, अमेरिका में एक सरल त्वरक तैयार किया गया जो लगभग ६६ मीटर लम्बा है और जिसके द्वारा कणों को सत्तर करोड़ इलेक्ट्रान वोल्ट (७०,००,००,००० इ० वो०) ऊर्जा दी जा सकती है।

अब अमेरिका में एक और सरल त्वरक बनाने की तैयारी हो रही है जो संभवतः स्टैनफर्ड विश्वविद्यालय में बनेगा। इस त्वरक के कार्य हेतु दो समानांतर सुरगें बनायी जायेंगी। प्रत्येक सुरंग की लम्बाई ३·२ किलोमीटर होगी और ये सुरगें १०.५ मीटर भूमि से दबी रहेंगी जिससे प्रयोगों द्वारा आसपास कोई हानि न पहुँच सके। इस उपकरण को बनाने में ६ वर्ष लगेंगे। संभवतः यह संसार का सबसे बड़ा वैज्ञानिक उपकरण होगा।

अध्याय ८

कण एवं विकिरण-सूचक यन्त्र

रेडियधर्मिता की खोज के पश्चात् वैज्ञानिकों ने रेडियधर्मी तत्वों द्वारा निकलने वाले विकिरणों का अध्ययन करना आरम्भ किया। पाठक पहले ही जान चुके है कि इन तत्वों से तीन प्रकार के विकिरण निकलते हैं—अल्फा, बीटा तथा गामा विकिरण। इनमे अल्फा तथा बीटा-विकिरण तो कणों के दण्डस्वरूप होते है और गामा-विकिरण तरंगस्वरूप। इनके अध्ययन के निमित्त अनेक उपकरण बनाये गये है। कृत्रिम रेडियधर्मिता, तत्त्वांतरण तथा अन्य परमाणु ऊर्जा संबंधी प्रयोगों के अध्ययन में इन उपकरणों को और परिवर्तित किया गया और इस समय अनेक प्रकार के नवीन उपकरण प्रयोग मे लाये जाते हैं। इनके द्वारा भौतिक विज्ञान में अनेक मूलभूत सिद्धान्तों की विवेचना सम्भव हो सकी है और अनेक नये कणों की खोज हुई है।

स्पिन्थेरिस्कोप[1]—इग्लैंड के वैज्ञानिक विलियम (William Crookes) क्रुक्स ने सर्वप्रथम अल्फाकणों को देखने तथा गिनने का एक उपकरण बनाया जिसका नाम स्पिन्थेरिस्कोप रखा गया। इसका अनुमान चित्र द्वारा हो जायगा। इसमें एक धातु का बर्तन लिया गया जिसमे एक ओर एक सुई पर अत्यल्प मात्रा मे रेडियम जमा किया गया। रेडियम का उपयोग अल्फा-कण के स्रोत के रूप मे हुआ। रेडियम से निकले अल्फा-

1. Spinthariscope

कण चारों ओर फैलते रहते हैं। इनमें से कुछ कण एक विलेमाइट पट पर भी पड़ते हैं, जिससे इनके द्वारा चमक पैदा होती है। इस पट को
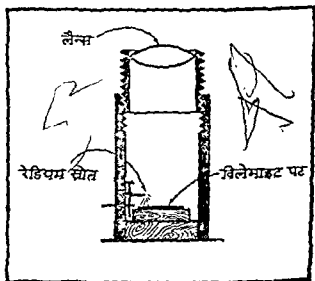
चित्र संख्या १६—स्पिन्थेरिस्कोप

संकेन्द्रित कर एक लेंस द्वारा, जो इसी कार्य के लिए बर्तन के ऊपर की ओर लगा है, देखा जा सकता है।

अँधेरा होने पर लेंस द्वारा पट को देखने पर एक आश्चर्यजनक दृश्य दिखाई देता है। प्रत्येक अल्फ़ा-कण पट पर गिरकर चमक पैदा करता है। यह चमक अल्प समय के लिए रहती है। इस प्रकार पट पर सितारों-जैसी चमक पैदा होती है और अदृश्य हो जाती है। हर बार नयी चमक उत्पन्न होती रहती है इस दृश्य की हम ऐसे काल्पनिक आकाश मंडल से तुलना कर सकते हैं जिसमें हर क्षण नवीन नक्षत्र उत्पन्न होते और पुराने अदृश्य होते रहते हों। इस उपकरण से प्रत्येक अल्फा-कण द्वारा उत्पन्न

चमक अलग अलग देखी जा सकती है। अत. यह अल्फ़ा-कणों को गिनने का अच्छा साधन सिद्ध हुआ है।

गाइगरमूलक-गणक[1]

रेडियधर्मी तत्वों से निकले कणो एव विकिरणो मे यह गुण होता है कि वे यात्रा करते समय वायु का आयनीकरण करते है। अल्फा-कणों द्वारा बडी मात्रा में आयनीकरण होता है क्योंकि वे भारी कण है और उन पर आवेश की मात्रा भी अधिक होती है। बीटा-कण कम आयनीकरण उत्पन्न करते हैं, क्योंकि वे बहुत हलके कण है। गामा-विकिरण और भी कम आयनीकरण उत्पन्न करते है। जिस मार्ग से ये कण जाते हैं उसमें आयन-युग्म बनते है। प्रत्येक आयन-युग्म को एक धन तथा ऋण आयन की जोड़ी समझना चाहिए। गाइगर-मुलर गणक मे आयन-युग्म का उपयोग किया जाता है।

यदि उत्पन्न आयन-युग्म को विद्युत् क्षेत्र मे रखा जाय तो इन युग्मों से धन आवेशयुक्त कण तो ऋण विद्युदग्र की ओर चलेंगे और ऋणावेशयुक्त कण धन विद्युदग्र की ओर अग्रसर होंगे। आवेशयुक्त कणो के चलायमान होने से विद्युत्-धारा उत्पन्न हो जायगी।

इस प्रकार अल्फा-कण या अन्य कोई भी आवेशयुक्त कण आयनीकरण के गुण द्वारा विद्युत्-धारा उत्पन्न किया करते है। वास्तव मे यह विद्युत्-धारा अत्यन्त ही न्यून स्तर मे उत्पन्न होती है। इतनी न्यून स्तर की धारा का मापना अत्यन्त कठिन कार्य है। इसको मापने के लिए विशेष प्रकार के उपकरण बनाये गये है जिसमें इलेक्ट्रानिक वाल्वों का उपयोग होता है और इस न्यून धारा का प्रवर्द्धन किया जाता है।

गाइगर ने आवेशयुक्त कणों को पहचानने के लिए सर्वप्रथम इस

१. Geiger-Muller Counter

विद्युत्-धारा का उपयोग किया। उसके उपकरण से केवल एक अल्फ़ा-कण तक की पहचान हो सकती थी। उसने विशेष प्रकार के आयनीकरण कोष्ठको का आविष्कार किया। इन कोष्ठको में वायु या किसी विशेष गैस को कम दाब पर रखा जाता है और उन पर विद्युदग्रों द्वारा विद्युत् क्षेत्र उत्पन्न किया जाता है। यदि इस कोष्ठक में अल्फ़ा-कण प्रवेश करेगा तो उसके द्वारा आयन-युग्म उत्पन्न होंगे। आयन-युग्म विद्युत्-क्षेत्र के प्रभाव से विद्युदग्रों की ओर जायेंगे और इस गति द्वारा गतिज ऊर्जा प्राप्त करेंगे। ये आयन अपने मार्ग मे अन्य परमाणुओं से टक्कर खाकर नये आयन युग्म उत्पन्न करेंगे। इस प्रकार हर आयन युग्म द्वारा नये आयनों की सृष्टि होगी और अत्यन्त सूक्ष्म काल में इतने अधिक आयन उत्पन्न होंगे कि उनसे उत्पन्न विद्युत्-धारा की मात्रा बढ जायगी और वह सरलता से यन्त्रो द्वारा मापी जा सकेगी।

विभव अन्तर स्रोत

अभ्रक गवाक्ष

तार बिन्दु

गणक यन्त्र
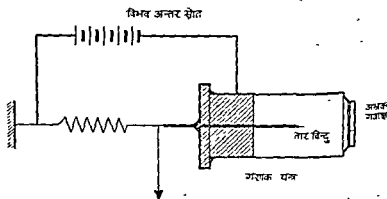
चित्र संख्या १७—गाइगर गणक प्रकोष्ठ

यह प्रकोष्ठ गाइगर गणक के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस का परिचय चित्र १७ से हो जायेगा। इसमें २ सेन्टीमीटर व्यासवाला और लगभग ३ सेन्टीमीटर लम्बा बेलन रहता है। इस बेलन में न्यून दाब की गैस भरी

रहती है। इसके बीच से एक बिन्दुवाला तार लगा रहता है जो बेलन की दीवार से पृथक्कृत रहता है। बेलन के एक ओर अभ्रक का एक पतला गवाक्ष लगा रहता है जिसे अल्फ़ा-कण सरलता से पार कर सकते है। इस तार के बिन्दु और बेलन की दीवार के बीच कई सहस्र वोल्ट का विभव-अन्तर रहता है। विद्युत्-धारा के परिपथ मे एक उच्च प्रतिरोधक रखा जाता है। इस अवस्था मे केवल एक अल्फा-कण के प्रवेश से ही बड़ी मात्रा मे विद्युत्-धारा उत्पन्न हो जाती है। प्रतिरोधक के कारण यह धारा अल्पायु रहती है अथवा हम यह कह सकते है कि एक अल्फा-कण द्वारा एक अल्पावधि स्पन्द की उत्पत्ति होती है। यह स्पन्द (पल्स) अल्पायु होने के साथ ही अत्यन्त वेगवान् भी होता है जिससे यंत्र द्वारा इसे सरलतापूर्वक अंकित किया जा सकता है।

धीरे-धीरे इस गणक में कई परिवर्द्धन हुए जिनमें वैज्ञानिक मुलर का प्रमुख हाथ रहा। उनके द्वारा हुए परिवर्द्धनो से उसकी सवेदनशीलता कई गुनी बढ़ गयी। आजकल इस उपकरण को गाइगर-मुलर गणक के नाम से पुकारते है। इसके द्वारा बीटा-कण और गामा-विकिरण की भी पहचान हो सकती है।

गणक द्वारा उत्पन्न विद्युत्-धारा को इलेक्ट्रानिक वाल्व द्वारा प्रवर्द्धित किया जाता है। इसमे उत्पन्न स्पन्दन को गिनने का भी प्रबन्ध रहता है। कुछ उपकरणों मे प्रत्येक स्पन्दन के उत्पन्न होने पर विशेष प्रकार की ध्वनि होने लगती है। आधुनिक यंत्रों में अधिकतर एक पट्टिका रहती है जिसके पीछे टेलीविजन नलिका लगी रहती है। इस नलिका द्वारा उत्पन्न इलेक्ट्रान दण्ड पट्टिका पर प्रतिबिम्ब बनाते हैं। गणक में आयनीकरण होने पर इस दण्ड मे हलचल पैदा होती है और इस दण्ड का मार्ग ऊपर-नीचे की ओर जाता है। इस प्रकार आवेशयुक्त कण अथवा विकिरण का प्रवेश बड़ी सुगमता से अंकित हो जाता है।

रेडियो-धर्मिता के आधुनिक प्रयोगो में ऐसे उपकरणों का निर्माण आवश्यक हो गया है जिनके द्वारा बड़ी मात्रा में कणों को गिना जा सके।
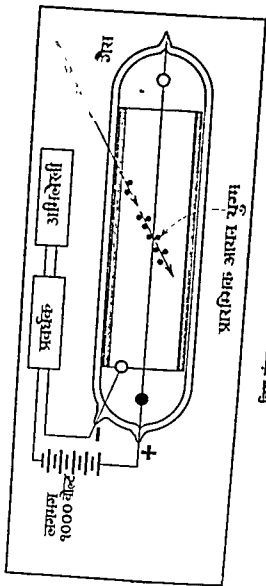
चित्र संख्या १८—गाइगर-मूलर गणक यन्त्र

चित्र संख्या १९—गाइगर-मुलर गणक यन्त्र के विभेद
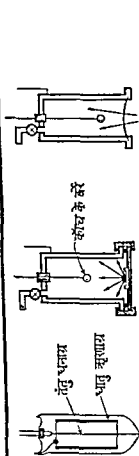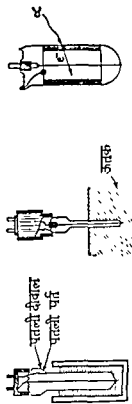
इन यंत्रो में विशेष प्रकार के परिपथ बने होते हैं जिनके द्वारा बीस सहस्र कण प्रति मिनट से अधिक की गणना हो जाती है।

गाइगर-मुलर गणक वर्तमान परमाणु अनुसन्धानशाला का आवश्यक अंग हो गया है। परमाणु-विखण्डन-प्रयोगों में इसकी उपयोगिता अत्यधिक बढ़ गयी है।

चमक गणक यंत्र

यह मुख्यत गामा विकिरण—सूचक यंत्र है। इसमें मणिभ पर गामा विकिरण के प्रभाव द्वारा प्रकाश का उत्पादन होता है जो प्रकाश सुग्राही परत द्वारा इलेक्ट्रान को मुक्त करता है।

ये इलेक्ट्रान विशेष प्रणाली द्वारा गुणित होकर विकिरण की उपस्थिति की सूचना देते हैं।

विल्सन का अभ्र-कोष्ठक

स्काटलैंड के वैज्ञानिक सी० टी० आर० विल्सन[1] ने एक अत्यन्त उपयोगी उपकरण बनाया जो क्लाउड चेम्बर अथवा अभ्र-कोष्ठक के नाम से प्रसिद्ध हुआ। नाभिकीय अनुसंधानो में इससे अधिक उपयोगी उपकरण ढूँढना असम्भव होगा। गाइगर गणक द्वारा हम कण को सुन सकते हैं। परन्तु अभ्र-कोष्ठक की सहायता से हम उसे प्रत्यक्ष देख सकते हैं। अतः इस यंत्र द्वारा परमाणु-विखण्डन-अनुसन्धानों में वैज्ञानिकों को कण की उपस्थिति का प्रत्यक्ष प्रमाण मिलता रहता है।

वाष्प के प्रयोगों में विल्सन की अधिक रुचि थी। उसने बहुत से प्रयोग किये जिनके द्वारा वाष्पों के संघनन होने की अवस्था पर प्रकाश पड़ा। उसने अपने अनुसंधानों से पता लगाया कि धूल के कणों की उपस्थिति

1. C.T.R. Wilson
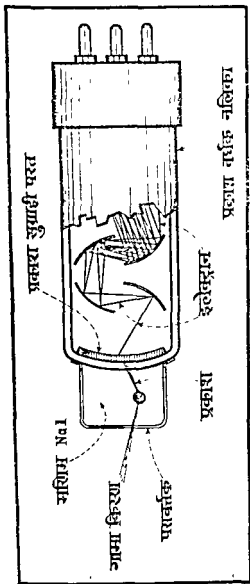
चित्र संख्या २०—चमक गणक यन्त्र

में अतिसतृप्त वाष्प सघनित होता है। विल्सन के प्रयोगों का काल उन्नीसवी शताब्दी का अतिम चरण था। उसी समय जर्मनी के एक वैज्ञानिक ने रटगन-किरण अथवा एक्स-किरण की खोज की थी। उसी समय रेडियधर्मिता का पता चला था। यूरेनियम अथवा थोरियम के अयस्कों से निकले रेडियधर्मी विकिरणों पर अनुसंधानों का प्रारम्भ भी तब हो चुका था।

विल्सन ने अपने अनुसन्धानो द्वारा पता लगाया कि एक्स-विकिरण और रेडियधर्मी विकिरण मे भी वाष्प को संघनित करने का गुण वर्तमान था। यदि अल्फा-कणों के दण्ड को अभ्र-कोष्ठक में प्रविष्ट कराया जाय तो वे कण अपने मार्ग मे आयन उत्पन्न करेंगे। उनके मार्ग में उत्पन्न आयनो की सख्या बहुत अधिक रहती है। उचित दशा में ये आयन वाष्प को संघनित कर सकते है क्योकि प्रत्येक आयन वाष्प के कणों को संग्रह करने का नाभिक बन जाता है। इस प्रकार जिस मार्ग से एक अल्फ़ा कण जायगा उसमे वाष्प के कण सघनित हो जायेंगे। इस मार्ग का चित्र फोटोग्राफी के कैमरे द्वारा लिया जा सकता है और हम किसी भी कण के मार्ग का पता सम्यक् रीति से लगा सकते हैं।

विल्सन ने इन प्रयोगो के निमित्त अनेक अभ्र-कोष्ठक बनाये। लगभग १९१२ मे उसने एक नये कोष्ठक का आविष्कार किया जो आज भी प्रायः उतना ही उपयोगी है।

इसमे एक बेलनाकार कांच का कोष्ठक रहता है जिसका व्यास लगभग एक फुट होता है। इस कोष्ठक का आयतन घटाया-बढ़ाया जा सकता है। इस बेलन मे नीचे की ओर एक पिस्टन लगा रहता है जिसके ऊपर-नीचे आने से आयतन घटता-बढता रहता है। बेलन के अन्दर वाष्प भरा जाता है। एकाएक वाष्प का आयतन बढ़ाने से उसका ताप कम हो जाता है। यह आवश्यक है कि आयतन एकाएक बढ़ाया जाय, अन्यथा बेलन फिर गर्म हो जायगा और प्रयोग ठीक-ठीक न हो सकेंगे। विल्सन ने आयतन में एकाएक वृद्धि लाने का ऐसा नया ढग निकाला जिसमे

पिस्टन के नीचे का स्थान निर्वात कर दिया जाता है। अतः वेलन शीघ्र ही नीचे आ जाता है और आयतन एकाएक बढ़ जाता है।
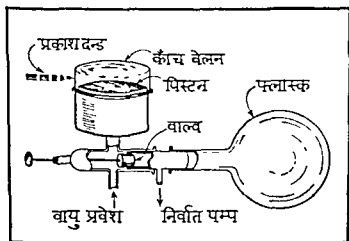
चित्र संख्या २१—विलसन का नया अभ्र कोष्ठक।

वेलन के भीतर वाष्प का आयतन बढ़ने पर उसका ताप घटता है। ताप घटने पर वाष्प सरलता से अभ्र में परिवर्तित हो जाता है। इस वाष्प को परिवर्तित होने के लिए नाभिकों की आवश्यकता होती है। ठीक इसी समय यदि अल्फा या अन्य आवेशयुक्त कण कोष्ठक में प्रवेश करे तो उनके मार्ग का चित्र बन जायगा। उसके मार्ग को दृश्य बनाने के लिए कोष्ठक को पारद चाप दीप द्वारा प्रकाशित करते है। कोष्ठक का पेंदा काला कर दिया जाता है जिससे काली पृष्ठभूमि पर अभ्र-मार्ग सरलता से दिखाई पड़े। कोष्ठक के ऊपर कैमरा लगा रहता है जिससे समयानुसार चित्र लिये जा सकें।

अभ्र-कोष्ठक के कार्य में यह आवश्यक है कि ठीक उसी समय चित्र लिया जाय जिस समय अभ्र-मार्ग पर कण एकत्रित हों क्योंकि यह मार्ग बहुत अल्पकाल के लिए बनता है और शीघ्र ही मिट जाता है। कोष्ठक

अप्रभावित रहता है। और इसको डेवेलपर मे डालने से भी प्लेट पर कोई छाया नहीं बनती और वह प्लेट साफ पारदर्शी दिखाई देती है। इसका कारण यह है कि यौगिक मे सिल्वर और ब्रोमीन के परमाणु इलेक्ट्रान द्वारा एक दूसरे से जुड़े रहते हैं। यह यौगिक डेवेलपर विलयन मे घुल जाता है और प्लेट अथवा फिल्म पारदर्शी रह जाता है।

इसके विपरीत फोटोग्राफी प्लेट पर प्रकाश का प्रभाव पड़ने के कारण सिल्वर और ब्रोमीन के मध्य के इलेक्ट्रान निकल जाते हैं। ये इलेक्ट्रान सिल्वर और ब्रोमीन को सयुक्त कर यौगिक बनाते है। प्रकाश के द्वारा इलेक्ट्रान निकल जाने पर सिल्वर परमाणु स्वतत्र हो जाते है। डेवेलपर में डालने पर यही सिल्वर परमाणु प्लेट पर काला चित्र बनाते हैं। इसी प्रकार गामा-विकिरण या आवेशयुक्त कण भी मिल्वर ब्रोमाइड के मध्य स्थित इलेक्ट्रान निकाल कर सिल्वर परमाणु स्वतत्र करते है।

१९१० के लगभग खोजों द्वारा ज्ञात हो गया था कि अल्फा-कण फोटोग्राफी प्लेट पर अपने गुप्त प्रतिबिम्ब बना देते है। जिस मार्ग द्वारा कोई अल्फा कण यात्रा करता है उस मार्ग का चित्र प्लेटपर खिंच जाता है। इस मार्ग को अणुवीक्षणयत्र द्वारा सरलता से देखा जा सकता है। यदि अल्फा-कण स्रोत फोटोग्राफी प्लेट पर रखा जाय तो उससे निकले अल्फा-कणों के चित्र प्लेट पर खिंच जाते है।

साधारण प्लेट पर सिल्वर ब्रोमाइड की पतली तह जमायी जाती है। अल्फा-कणो की परिधि इस तह से अधिक हो सकती है। ऐसी अवस्था में अल्फा कण का सम्पूर्ण मार्ग प्लेट पर नही दिखाई देगा। इस कठिनाई को दूर करने के लिए विशेष प्रकार की प्लेटे बनायी गयी है जिनपर संवेदनशील पदार्थ की मोटी तह रहती है। इस प्रकार की प्लेटें अन्तरित किरणो के चित्र उतारने में बडी उपयोगी सिद्ध हुई है। इन मोटी तह वाली प्लेटों द्वारा कणो का सम्पूर्ण मार्ग चित्रित हो सकता है। इन चित्रो को उतारने की दूसरी विधि भी उपयोगी हुई है। इस विधि में मोटी तह वाली प्लेट का प्रयोग नही होता, वरन् पतली सतह पर सिल्वर ब्रोमाइड की तह जमायी

जाती है जो कणों को आर-पार जाने से नहीं रोकती। इस प्रकार की दस या अधिक सतहों को एक दूसरे पर रख कर मोटी तह तैयार की जाती है। ये दोनो ही विधियाँ परमाणु अनुसधानो में प्रयुक्त होती हैं।

फोटोग्राफी द्वारा कणो को अंकित करने की विधि सरल तथा बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है। एक चित्र मे अनेक कणो के चित्र उतारे जा सकते हैं। इस प्रकार एक प्लेट सैंकड़ों अभ्र कोष्ठक चित्रों का स्थान ले सकती है। अब ऐसी परिष्कृत विधियाँ प्रयुक्त होती हैं जिनसे कणों की ऊर्जा, आयनीकरण-क्षमता और उनके वेग ज्ञात किये जा सकते हैं। इन्ही प्रयोगो द्वारा कणो का भार भी ज्ञात किया गया है। यद्यपि यह आवश्यक है कि इन प्रयोगों की पुष्टि अन्य प्रयोगो (अभ्र कोष्ठक आदि) द्वारा की जाय।

बुदबुद कोष्ठक

यह एक अत्यन्त नवीन उपकरण है। इसका आविष्कार भौतिकशास्त्री डी० ग्लेजर[1] ने किया। मूलभूत कणो के अनुसधानों के लिए बुदबुद कोष्ठक अत्यत उपयोगी सिद्ध हुआ है। इस उपकरण मे एक कोष्ठक रहता है जिसमे तरल हाइड्रोजन भरा रहता है। यह हाइड्रोजन दो प्रकार से उपयोगी होता है। प्रथम तो यह प्रोटान स्रोत का कार्य करता है और दूसरे कणों की पहचान मे सहायक होता है। अधिकाश प्रयोगों में प्रोटान दण्ड को बुदबुद कोष्ठक में प्रविष्ट कराया जाता है। दण्ड के प्रोटान तरल हाइड्रोजन मे स्थित प्रोटानो से टकराते हैं। इस क्रिया द्वारा उत्पन्न आवेशयुक्त कण तरल हाइड्रोजन का आयनीकरण करते हैं। इस आयनीकरण से हाइड्रोजन का ताप बढता जाता है और स्थानीय वाष्पीकरण से उस कण के मार्ग में नन्हें बुदबुद उत्पन्न होते हैं। यदि क्रिया द्वारा उत्पन्न कण आवेशरहित हो तो वे या तो अन्य क्रिया द्वारा आवेशयुक्त कणो मे परिणत हो जाते हैं अन्यथा

1. D. Glaser

आवेशयुक्त कण उत्पन्न करते है। दोनों ही रूप मे कण द्वारा तै किये मार्ग में बुद्वुदों का पथ बन जाता है। हाइड्रोजन-ग्राहक कोष्ठक पर प्रकाश डालकर बुद्वुदों द्वारा बने मार्गो का चित्र लिया जाता है। कणो के आवेश का स्वभाव तथा मात्रा ज्ञात करने के लिए विशेप प्रकार के चुम्बक के दोनों ध्रुवों के बीच में कोष्ठक को रखते है। इस चुम्बक क्षेत्र के प्रभाव से कणो का मार्ग विचलित हो जाता है। इस विचलन की दिशा से उनके आवेशों की जाँच हो जाती है। इन अनुसधानो से कणो के भार तथा वेग भी मालूम किये गये है।

केलीफोर्निया विश्वविद्यालय की विकिरण प्रयोगशाला मे ३८ से० मी० व्यास का बुद्बुद कोष्ठक बनाया गया है। यह मूलभूत कणो के अनुसधानों मे अत्यत उपयोगी सिद्ध हुआ है। इस उपकरण के द्वारा ही १५५९ मे मूलभूत कण जाइ-शून्य[1] की खोज सम्भव हो सकी है। इसी विश्वविद्यालय मे अभी एक दूसरा १०८ मीटर व्यास का बुद्बुद कोष्ठक बनाया गया है। नये बुद्बुद कोष्ठक से प्रति लैम्डा[2] कण की खोज भी की गयी है जिसकी घोपणा अमेरिकीय वैज्ञानिको ने १९५९ मे उच्च ऊर्जा भौतिकी की अतर्राष्ट्रीय कान्फ्रेन्स में की थी। यह कान्फ्रेन्स सोवियटसघ के कीव नगर में हुई थी।

1. xi-zero 2. Anti lambda

अध्याय ९

कृत्रिम रेडियधर्मिता

बीसवी शताब्दी के प्रारम्भ में रदरफोर्ड ने तत्त्वांतरण के प्रयोग किये जिनसे यह सिद्ध हो गया कि तत्त्वो के नाभिक का विखण्डन वेगवान कणों द्वारा सम्भव है। इसके अतिरिक्त वैज्ञानिकों को ज्ञात था कि कुछ भारी तत्त्वों के नाभिक, रेडियधर्मी क्रियाओं द्वारा विखण्डित होते रहते हैं। इन क्रियाओ को किसी भौतिक या रासायनिक विधि से रोका या बदला नहीं जा सकता। ये ही क्रियाएं एक गति विशेष से, जिसके नियमों का अध्ययन हो चुका है, हुआ करती है।

रेडियधर्मिता और कृत्रिम तत्त्वांतरण दोनों ही परमाणु नाभिक की क्रियाएँ है। दोनों में नाभिक का विखण्डन होकर नये नाभिक की उत्पत्ति होती है। परन्तु दोनों क्रियाओ मे बहुत बड़ा अन्तर प्रतीत होता है। रेडियधर्मी क्रिया स्वत. होती है और अनवरत रूप से चलती रहती है। इसके विपरीत कृत्रिम तत्त्वांतरण क्रिया वेगयुक्त कणों की टकराहट से होती है। जितने समय तक वेगयुक्त कण-दण्ड निकलता रहता है, तत्त्वांतरण चलता रहता है। जिस समय यह दण्ड रोक दिया जाता है, तत्त्वातरण क्रिया भी बन्द हो जाती है। तत्त्वातरण सम्बन्धी प्रयोग केवल हल्के तत्त्वों (परमाणु संख्या से कम) पर ही हो सकते थे। जबकि रेडियधर्मिता केवल भारी तत्त्वों मे ही जिनकी परमाणु संख्या ८० से अधिक थी देखी गयी थी।

ऐसा प्रतीत होता था कि इन क्रियाओं का समन्वय कभी सम्भव न हो सकेगा और इन हलके तथा भारी तत्त्वों के बीच के तत्त्व इन क्रियाओं से परे ही रहेंगे।

ऐसे समय में, १९३३ मे, दो आश्चर्यजनक कणो की खोज हुई जिनमे सारी विचार धारा पलट गयी। इनमें से एक तो न्यूट्रान की खोज की घटना थी जिसका वर्णन तत्त्वातरण के सम्बन्ध मे किया जा चुका है, और दूसरी थी पाजिट्रान कण का अन्वेषण। इस कण को हम धन इलेक्ट्रान भी कह सकते हैं। दोनो कणो का वर्णन हम मूलभूत कणों के साथ कर चुके हैं। पाजिट्रान की सर्वप्रथम खोज अन्तरिक्ष विकिरण सम्बन्धी प्रयोगों के समय हुई थी। उसके पश्चात् पाजिट्रान कृत्रिम तत्त्वातरण प्रयोगो मे भी देखे गये।

इसी वर्ष फ्रास के वैज्ञानिक जोलिये एव उनकी पत्नी इरीन क्यूरी (मैडम क्यूरी की पुत्री) ने अपने अनुसधानो द्वारा दिखाया कि कृत्रिम तत्त्वातरण प्रयोगों द्वारा ऐसे तत्वो का निर्माण हो सकता है जो स्वत. रेडियधर्मी थे। इन तत्वो को कृत्रिम रेडियधर्मी तत्त्व भी कहा जाता है। यह खोज इन वैज्ञानिकों ने बोरान तथा एल्युमिनियम पर अल्फा-कण से आक्रमण द्वारा की थी। इन प्रयोगो को निम्न सूत्रो द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है—

(अ) बोरान पर अल्फा-कण की क्रिया

${}_{५}\text{बोरान}^{१०}$ ${}_{२}\text{हीलियम}^{४} \rightarrow {}_{०}\text{न्यूट्रान}^{१} + {}_{७}\text{नाइट्रोजन}^{१३}$ (रेडियमधर्मी)

$${}_{5}B^{10} + {}_{2}He^{4} \rightarrow {}_{0}n^{1} + {}_{7}N^{13*}$$

${}_{७}\text{नाइट्रोजन}^{१३*}$ (रेडियधर्मी) $\rightarrow {}_{६}\text{कार्बन}^{१३} + {}_{१}\text{पाजिट्रान}^{०}$

$${}_{7}N^{13*} \rightarrow {}_{6}C^{13} + {}_{1}p^{0}$$

(आ) एल्यूमिनियम पर अल्फा कण की क्रिया

${}_{१३}\text{एल्यूमिनियम}^{२७}$ ${}_{२}\text{हीलियम}^{४} \rightarrow {}_{०}\text{न्यूट्रान}^{१} + {}_{१५}\text{फासफोरस}^{३०}$ (रेडियधर्मी)

$${}_{13}Al^{27} + {}_{2}He^{4} \rightarrow {}_{0}n^{1} + {}_{15}P^{30*}$$

${}_{१५}\text{फासफोरस}^{३०}$ (रेडियधर्मी) $\rightarrow {}_{१४}\text{सिलिकन}^{३०} + {}_{१}\text{पाजिट्रान}^{०}$

$${}_{15}P^{30*} \rightarrow {}_{14}Si^{30} + {}_{1}p^{0}$$

इसी प्रकार प्रत्येक कृत्रिम रेडियधर्मी तत्त्व की अर्धजीवन अवधि नियत रहती है। रेडियधर्मिता सम्बन्धी सब नियम कृत्रिम रेडियधर्मिता पर भी लागू होते है। इस क्रिया को किसी रासायनिक अथवा भौतिक प्रतिक्रिया द्वारा रोका अथवा बदला नही जा सकता।

जोलिये-क्यूरी की खोज के पश्चात् अन्य कृत्रिम रेडियधर्मी तत्त्वो की खोज की गयी। इन्हें बनाने के अनेक उपाय किये गये और इस कार्य में अनेक कणों का उपयोग किया गया तथा अनेक तत्त्वो के रेडियधर्मी समस्थानिक बनाये गये। इनमें सोडियम-२४ बडा उपयोगी सिद्ध हुआ है। इस समस्थानिक को पहले पहल सोडियम नाभिक पर ड्यूट्रान आक्रमण द्वारा बनाया गया था।
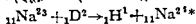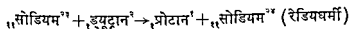
$_{11}$सोडियम^{23} + $_{1}$ड्यूट्रान^{2} → $_{1}$प्रोटान^{1} + $_{11}$सोडियम^{24} (रेडियधर्मी)

$$_{11}Na^{23} + {}_{1}D^{2} \rightarrow {}_{1}H^{1} + {}_{11}Na^{24*}$$

सोडियम-२४ रेडियधर्मी है। इसकी अर्धजीवन अवधि १५ घटे है। इसके विघटन से मैगनीशियम -२४ उत्पन्न होता है और एक इलेक्ट्रान स्वतंत्र होता है।

$_{11}$सोडियम^{24}* (रेडियधर्मी) → $_{12}$मैगनीसियम^{24} + $_{-1}$इलेक्ट्रान^{0}

$$_{11}Na^{24*} \rightarrow {}_{12}mg^{24} + {}_{-2}e^{0}$$
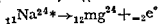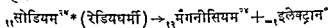
रेडियधर्मी तत्त्व कई विधियों से बनाया जा सकता है।

उदाहरणार्थ, सोडियम–२४ निम्नलिखित विधियो से बनाया जा सकता है।

१–एल्यूमिनियम पर न्यूट्रान के आक्रमण द्वारा

$_{13}$एल्यूमिनियम^{27} + $_{0}$न्यूट्रान^{1} → $_{2}$हीलियम^{4} + $_{11}$सोडियम^{24}

$$_{13}Al^{27} + {}_{0}n^{1} \rightarrow {}_{2}He^{4} + {}_{11}Na^{24*}$$

२–सोडियम पर न्यूट्रान की प्रतिक्रिया द्वारा

$_{11}$सोडियम^{23} + $_{0}$न्यूट्रान^{1} → $_{11}$सोडियम^{24}

$$_{11}Na^{23} + {}_{0}n^{1} \rightarrow {}_{11}Na^{24*}$$
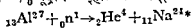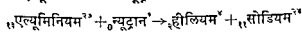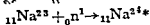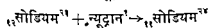
इन दोनों क्रियाओं के समीकरण में संकेतों के ऊपर दाहिनी ओर परमाणु-भार और नीचे बायीं ओर परमाणु-संख्या दी गयी है। दोनों क्रियाएं दो समीकरणो में विभाजित की गयी हैं।

उदाहरण के लिए हम पहली क्रिया को लें। इसमें बोरान परमाणु पर अल्फा-कण का आक्रमण किया गया है। इस आक्रमण द्वारा होने वाली क्रिया दो भागो में विभाजित है। पहले बोरान पर हीलियम नाभिक की टकराहट से नाइट्रोजन नाभिक बनता है और एक न्यूट्रान स्वतंत्र हो जाता है। इस नवजात नाइट्रोजन के नाभिक का परमाणु-भार १३ है और परमाणु-संख्या ७ है। यदि हम परमाणु-सारणी पर दृष्टि डालें तो हमें इस भार का स्थिर नाइट्रोजन समस्थानिक न मिलेगा? यह नाइट्रोजन नाभिक अस्थिर है।

यह अस्थिर नाइट्रोजन परमाणु रेडियधर्मी है और स्वतः तत्वांतरण क्रिया द्वारा कार्बन मे परिणत हो जाता है। इस क्रिया में एक पाजिट्रान स्वतंत्र हो जाता है। यह क्रिया दूसरे समीकरण के द्वारा दिखायी गयी है। पाजिट्रान का भार न्यून रहता है और उसपर धन आवेश १ मात्रा में स्थित रहता है। इस कारण इस कण के स्वतंत्र होने पर रेडियधर्मी नाइट्रोजन परमाणु संख्या १ मात्रा मे कम हो जाती है जबकि उसका भार उतना ही रहता है। इस क्रिया द्वारा उत्पन्न कार्बन परमाणु का भार १२ है। यह कार्बन-१२ का समस्थानिक है।

दूसरी क्रिया मे एल्यूमिनियम नाभिक पर अल्फ़ा-कण का आक्रमण किया गया है। इस प्रतिक्रिया से कृत्रिम रेडियधर्मी फ़ासफोरस उत्पन्न होता है जो स्वतः सिलिकन में परिणत हो जाता है।

पाठको को याद होगा कि रेडियधर्मी तत्त्व स्वतः तत्त्वांतरित होते रहते हैं। इनकी विघटन-गति एक नियम द्वारा संचालित है। जितने काल में किसी तत्त्व के आधे परमाणु विघटित होते हैं उसे उस तत्त्व की अर्धजीवन अवधि कहते हैं। हर रेडियधर्मी तत्व की अर्धजीवन अवधि नियत रहती है और इसके द्वारा उस तत्त्व को पहचाना जा सकता है।

इसी प्रकार प्रत्येक कृत्रिम रेडियधर्मी तत्त्व की अर्धजीवन अवधि नियत रहती है। रेडियधर्मिता सम्बन्धी सब नियम कृत्रिम रेडियधर्मिता पर भी लागू होते है। इस क्रिया को किसी रासायनिक अथवा भौतिक प्रतिक्रिया द्वारा रोका अथवा बदला नही जा सकता।

जोलिये-क्यूरी की खोज के पश्चात् अन्य कृत्रिम रेडियधर्मी तत्त्वों की खोज की गयी। इन्हे बनाने के अनेक उपाय किये गये और इस कार्य में अनेक कणों का उपयोग किया गया तथा अनेक तत्त्वो के रेडियधर्मी समस्थानिक बनाये गये। इनमें सोडियम-२४ वडा उपयोगी सिद्ध हुआ है। इस समस्थानिक को पहले पहल सोडियम नाभिक पर ड्यूट्रान आक्रमण द्वारा वनाया गया था।

${}_{११}$सोडियम^{२३} $+$ ${}_{१}$ड्यूट्रान^{२} $\rightarrow$ ${}_{१}$प्रोटान^{१} $+$ ${}_{११}$सोडियम^{२४} (रेडियधर्मी)

$${}_{11}Na^{23} + {}_{1}D^{2} \rightarrow {}_{1}H^{1} + {}_{11}Na^{24*}$$

सोडियम-२४ रेडियधर्मी है। इसकी अर्धजीवन अवधि १५ घटे है। इसके विघटन से मैंगनीशियम -२४ उत्पन्न होता है और एक इलेक्ट्रान स्वतंत्र होता है।

${}_{११}$सोडियम^{२४}* (रेडियधर्मी) $\rightarrow$ ${}_{१२}$मैंगनीसियम^{२४} $+$ ${}_{-१}$इलेक्ट्रान^{०}

$${}_{11}Na^{24*} \rightarrow {}_{12}mg^{24} + {}_{-2}e^{\circ}$$

रेडियधर्मी तत्त्व कई विधियों से बनाया जा सकता है।

उदाहरणार्थ, सोडियम–२४ निम्नलिखित विधियो से वनाया जा सकता है।

१–एल्यूमिनियम पर न्यूट्रान के आक्रमण द्वारा

${}_{१३}$एल्यूमिनियम^{२७} $+$ ${}_{0}$न्यूट्रान^{१} $\rightarrow$ ${}_{२}$हीलियम^{४} $+$ ${}_{११}$सोडियम^{२४}

$${}_{13}Al^{27} + {}_{0}n^{1} \rightarrow {}_{2}He^{4} + {}_{11}Na^{24*}$$

२–सोडियम पर न्यूट्रान की प्रतिक्रिया द्वारा

${}_{११}$सोडियम^{२३} $+$ ${}_{०}$न्यूट्रान^{१} $\rightarrow$ ${}_{११}$सोडियम^{२४}

$${}_{11}Na^{33} + {}_{0}n^{1} \rightarrow {}_{11}Na^{24*}$$

चित्र संख्या २२—रेडिय समस्थानिकों का निर्माण

३–मैगनीसियम पर न्यूट्रान के आक्रमण से

$_{12}$मैगनीसियम^{24} + $_{0}$न्यूट्रान^{1} → $_{1}$प्रोटान^{1} + $_{11}$सोडियम^{24}

$$_{12}mg^{24} + {}_{0}n^{1} \rightarrow {}_{1}H^{1} + {}_{11}Na^{24}$$

इन सारी क्रियाओं से उत्पन्न सोडियम–२४ के गुण समान होते है तथा उसके परमाणु एक ही विधि से विघटित होते है।

कृत्रिम रेडियधर्मिता में न्यूटान की उपयोगिता

अल्फाकण, प्रोटान और ड्यूट्रान हल्के तत्वो के रेडियधर्मी समस्थानिक बनाने मे उपयोगी हुए है। परन्तु वे माध्यमिक तथा भारी तत्वो के लिए उपयुक्त नही है। प्रसिद्ध वैज्ञानिक फर्मी ने यह विचार किया कि इन तत्त्वों के साथ न्यूट्रान बहुत उपयोगी हो सकता है। फर्मी तथा उसके साथियों के प्रयोगो मे स्पष्ट हो गया कि आवर्त-सारणी के लगभग सभी तत्वो के रेडियधर्मी समस्थानिक बन सकते है। न्यूट्रान आवेशरहित कण है। इस कारण उसे किसी परमाणु के नाभिक के बहुत निकट पहुचने मे कठिनाई नही होती और वह सरलता से क्रिया कर सकता है। विकर्षण के न रहने के कारण भारी तत्वो के रेडियधर्मी समस्थानिको का बनाना सरल हो गया है। वैज्ञानिको ने इन रेडियधर्मी तत्वो के बनने की पुष्टि रासायनिक विधियों द्वारा भी कर ली है जो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य है क्योकि ये बहुत न्यून मात्रा मे उत्पन्न होते हैं और इतनी कम मात्रा द्वारा रासायनिक प्रतिक्रियाए करना बड़ा कठिन कार्य था।

फर्मी के कुछ प्रयोगो से पता चला कि बहुत कम ऊर्जा वाले न्यूट्रान बड़े उपयोगी होते है। इन्हे हम मन्द न्यूट्रान कह सकते है। उसने न्यूट्रानों को उत्पन्न किया, तत्पश्चात् ऐसे माध्यम से प्रवाहित किया जिसमें वह अन्य कणो से टकरा कर मन्द पड़ जाये। साधारण अवस्था मे प्रोटान और न्यूट्रान की टकराहट से कोई नया समस्थानिक नही बनता। इस कारण ऐसा माध्यम जिसमे प्रोटान की मात्रा बहुत अधिक हो न्यूट्रान को मन्द करने में

कृत्रिम रेडियधर्मी समस्थानिक

नाम	परमाणुभार	अर्धजीवन अवधि	विकिरण उर्जा (लाख इ० वो० मे) इलेक्ट्रान	गामा-विकिरण
सोडियम	२४	१५.० घ०	१३९	१३८०, २७.५८
फासफोरस	३२	१४.३ दिन	१७१८	
सल्फर (गंधक)	३५	८७१ दिन	१६७	
केल्सियम	४५	१५२ दिन	२.५५	
लौह	५५	२.९१ वर्ष	K बंधन अथवा ग्रहण	
"	५९	४६.३ दिन	३६,४.६	११, १३
कोबल्ट	५६	८० दिन	१५० (पाजिट्रान)	८.५, १३, २६, ३३
"	६०	५.२६ दिन	३१	११.७, १३.३
सिल्वर (रजत)	११०	२७० दिन	०.८७,५३	८.८५, ९.३५, १.३९ १५.१६
"	१११	७.५ दिन	१०.६	
गोल्ड (स्वर्ण)	१९८	२.६९ दिन	९.८	४.११
"	१९९	३.३ दिन	३२	२.४

यूरेनियम-खण्डन की खोज के पश्चात् न्यूट्रान द्वारा कृत्रिम रेडियधर्मी तत्त्व बनाना बहुत सरल हो गया है। परमाणु-प्रतिकारी मन्द न्यूट्रान की एक सुगम और बृहत् मात्रा का स्रोत है। इसके द्वारा आजकल रेडियधर्मी तत्त्व बनाये जाते है। अब इस प्रतिकारी द्वारा बहुत-से ऐसे तत्त्व बनाना सम्भव हो गया है जो प्रकृति मे नही पाये जाते थे। इसके अतिरिक्त यूरेनियम से भारी तत्त्व भी जिन्हें पारयूरेनियम तत्त्व कहते हैं इसी भट्ठी द्वारा बनाये गये है। इनका विवरण यूरेनियम-खण्डन के पश्चात् दिया जायगा।

उपयुक्त हो सकता है। यदि इसमें न्यूट्रानों का प्रवाह किया जाय तो वे प्रोटान से टकरायेंगे। इस टकराहट से नाभिक क्रिया की संभावना बहुत कम है, भले ही न्यूट्रान अपनी गति-ऊर्जा खोकर मन्द हो जाते है।

मन्द न्यूट्रान किसी परमाणु के नाभिक के बहुत पास तक पहुँच जाते हैं और उनके कुछ समय तक वहाँ रहने की सम्भावना रहती है। कम गतिज ऊर्जा के कारण उनकी नाभिक से टकराहट मृदु होती है। इस टकराहट से नाभिक द्वारा कोई दूसरा कण मुक्त नही हो पाता। वरन् इसकी संभावना रहती है कि नाभिक मन्द न्यूट्रान को अपने अन्दर अवशोषित कर ले। न्यूट्रान के भार की मात्रा १ और आवेश की मात्रा शून्य है। इस कारण अवशोषण द्वारा उस परमाणु के नाभिक के भार में १ की वृद्धि हो जाती है, परन्तु उसका आवेश समान रहता है। आवेश की मात्रा बदलने के कारण तत्त्व नही बदलता, केवल उसका समस्थानिक बन जाता है जिसका भार प्रारम्भिक तत्त्व के परमाणु से १ इकाई अधिक होता है।

यह आवश्यक नही है कि नया समस्थानिक रेडियधर्मी हो, परन्तु अधिकांश तत्त्वों से बने समस्थानिक कृत्रिम रेडियधर्मी परमाणु होते हैं। बोरान, इट्रियम, इरीडियम ऐसे तत्त्वो मे से हैं जो मन्द न्यूट्रान के अवशोपण पर रेडियधर्मी समस्थानिक नहीं बनाते। कुछ उपयोगी कृत्रिम रेडियधर्मी समस्थानिकों की सूची नीचे दी जा रही है।

कृत्रिम रेडियधर्मी समस्थानिक

नाम	परमाणुभार	अर्धजीवन अवधि	विकिरण ऊर्जा (लाख इ० बो० में)	
			इलेक्ट्रान	गामा-विकिरण
आर्सेनिक	७६	२६.८ घं०	४,१४,२५ ६,३१.२	५.७, १२.५ १८, २१
आर्सेनिक	७७	४० घं०	७	
कार्बन	१४	५,७४० वर्ष	१.५५	

कृत्रिम रेडियधर्मी समस्थानिक

नाम	परमाणुभार	अर्धजीवन अवधि	विकिरण उर्जा (लाग इ० वो० में) इलेक्ट्रान	गामा-विकरण
सोडियम	२४	१५.० घ०	१३९	१३८०, २७५८
फासफोरस	३२	१४.३ दिन	१७१८	
सल्फर (गंधक)	३५	८७.१ दिन	१.६७	
कैल्सियम	४५	१५२ दिन	२.५५	
लौह	५५	२.९१ वर्ष	K बंधन अथवा ग्रहण	
"	५९	४६.३ दिन	३ ६,४.६	११, १३
कोवल्ट	५६	८० दिन	१५० (पाजिट्रान)	८.५, १३, २६, ३३
"	६०	५.२६ दिन	३१	११.७, १३.३
सिल्वर (रजत)	११०	२७० दिन	०.८७,५.३	८.८५, ९.३५, १३९ १५.१६
"	१११	७.५ दिन	१०.६	
गोल्ड (स्वर्ण)	१९८	२.६९ दिन	९.८	४.११
"	१९९	३.३ दिन	३.२	२.४

यूरेनियम-खण्डन की खोज के पश्चात् न्यूट्रान द्वारा कृत्रिम रेडियधर्मी तत्त्व बनाना बहुत सरल हो गया है। परमाणु-प्रतिकारी मन्द न्यूट्रान की एक सुगम और बृहत् मात्रा का स्रोत है। इसके द्वारा आजकल रेडियधर्मी तत्त्व बनाये जाते हैं। अब इस प्रतिकारी द्वारा बहुत-से ऐसे तत्त्व बनाना सम्भव हो गया है जो प्रकृति में नहीं पाये जाते थे। इसके अतिरिक्त यूरेनियम से भारी तत्त्व भी जिन्हें पारयूरेनियम तत्त्व कहते हैं इसी भट्टी द्वारा बनाये गये हैं। इनका विवरण यूरेनियम-खण्डन के पश्चात् दिया जायगा।

कार्बन-१४ की रेडियधर्मिता

कार्बन १४
कार्बन १४
नाइट्रोजन १४
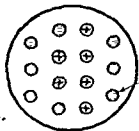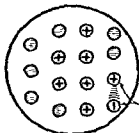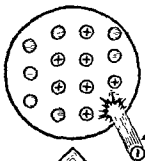
एक न्यूट्रान प्रोटान एवं इलेक्ट्रान में परिणत हो जाता है
इलेक्ट्रान की मुक्ति

प्रोटान ⊕
न्यूट्रान
इलेक्ट्रान ⊖

कार्बन १४—बीटा विकिरण सक्रियता
अर्धजीवन अवधि ५७४० वर्ष

चित्र संख्या २३—कार्बन-१४ की रेडिय धर्मिता

अध्याय १०

यूरेनियम-खण्डन

यूरेनियम-खण्डन मनुष्य की अभूतपूर्व उपलब्धि कही जा सकती है। इसकी खोज की कथा बडी विचित्र और रोमाचकारी है। विज्ञान की खोजो मे प्राय: ऐसा हुआ है कि कोई वैज्ञानिक लगा तो रहा किसी अन्य खोज मे और उसे मिली कोई दूसरी वस्तु। यूरेनियम-खण्डन के सम्बन्ध मे भी कुछ ऐसा ही हुआ।

१९३९ से पूर्व वैज्ञानिको का यह विचार था कि निकट भविष्यमे परमाणु ऊर्जा का उपयोग न हो सकेगा। परमाणु अनुसधान केवल कुछ वैज्ञानिकों का ही प्रिय विषय समझा जाता था। यह आशा न थी कि शीघ्र ही इसका आश्चर्यजनक उपयोग होगा।

१९३९ मे यूरेनियम-खण्डन की खोज के साथ ही परमाणु-ऊर्जा के उपयोग की सम्भाव्यता एकाएक सामने आ गयी। पाठको को यह जानना आवश्यक है कि केवल खण्डन से परमाणु-ऊर्जा का उपयोग सम्भव न था यद्यपि खण्डन क्रिया में ऊर्जा उदय होती है। परन्तु सबसे अनोखी बात यह थी कि खण्डन क्रिया न्यूट्रान द्वारा प्रेरित होती है और साथ मे न्यूट्रानो को स्वतत्र भी करती है। इस प्रकार जो क्रिया प्रारम्भ की गयी वह अपने अभिकर्मको द्वारा एक शृंखला मे चल सकती है क्योकि मुक्त न्युट्रान नवीन क्रिया प्रारम्भ कर सकते है। इसकी तुलना हम कोयले या लकडी की आग से कर सकते है जो एक बार आरम्भ होने पर स्वय जलती रहती है जबतक कि सारा ईंधन न समाप्त हो जाये।

यूरेनियम-खण्डन की खोज पारयूरेनियम तत्त्वों के बनाने के प्रयत्न द्वारा

हुई। प्रसिद्ध भौतिक शास्त्री फर्मी इस ओर कार्य कर रहे थे। १९३४ में उन्होंने अपने परिणाम प्रकाशित किये। आवर्त-सरिणी में सबसे भारी तत्त्व यूरेनियम माना जाता था। प्रकृति मे पाये जाने वाले तत्त्वों मे इसका परमाणु-भार सबसे अधिक है। फर्मी ने यूरेनियम पर मन्द न्यूट्रानों का आक्रमण किया। उनका लक्ष्य यूरेनियम से भारी तत्त्व बनाना था। उन्होंने यह देखा कि इस क्रिया द्वारा चार प्रकार की ऊर्जा वाले बीटा-विकिरण अथवा इलेक्ट्रान उत्पन्न होते थे। इनमे एक बीटा-विकिरण यूरेनियम के उस समस्थानिक का हो सकता था जो न्यूट्रान आक्रमण द्वारा बना हो—

$$_{९२}\text{यूरेनियम}^{२३८} \times {}_{०}\text{न्यूट्रान}^{१} \rightarrow {}_{९२}\text{यूरेनियम}^{२३९}$$
$$_{92}U^{238} + {}_{0}n^{1} \rightarrow {}_{92}U^{239}$$
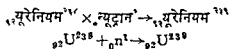
यह समस्थानिक प्राकृतिक अवस्था में नही पाया जाता है और सम्भवतः बीटा उत्सर्जन क्रिया द्वारा तत्त्वातरित हो जायगा। इस तत्त्वांतरण द्वारा नये तत्त्व का परमाणु भार २३९ होगा, परन्तु परमाणु संख्या ९३ हो जायगी।

$$_{९२}\text{यूरेनियम}^{२३९} \rightarrow {}_{९३}\text{नया तत्व}^{२३९}\ {}_{-१}\text{इलेक्ट्रान}^{०}$$
$$_{92}U^{239} \rightarrow {}_{93}X^{239} + {}_{-1}e^{0}$$
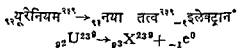
संभवतः नया तत्व (९३) भी बीटा-विकिरण उत्सर्जित कर दूसरा नया तत्त्व (परमाणु संख्या ९४) बनावे—

$$_{९३}\text{नया तत्त्व}^{२३९} \rightarrow {}_{९४}\text{नया तत्त्व}^{२३९} + {}_{-१}\text{इलेक्ट्रान}^{०}$$
$$_{93}X^{239} \rightarrow {}_{94}Y^{239} + {}_{-1}e^{0}$$
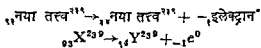
फर्मी का विचार था कि इसी प्रकार और ऊँची परमाणु संख्या के तत्त्व भी बनते हो। इन तत्त्वों को पारयूरेनियम तत्व के नाम से पुकारा गया।

कुछ वैज्ञानिकों ने इस विवेचन पर सन्देह किया। उनका कहना था कि यह दावा करने से पहले रासायनिक क्रिया द्वारा इसकी पुष्टि होनी चाहिए।

इसी समय जर्मनी के प्रसिद्ध वैज्ञानिक आटो हान[1] और उसके सहयोगी स्ट्रासमान् एव माइटनर ने इन अनुसधानो को दुहराया। इसी समय पेरिस में जोलियै-क्यूरी ने भी इन अनुसंधानो को दोहराया। उन्होने रासायनिक क्रिया द्वारा न्यूट्रान आक्रमण से उत्पन्न नये तत्वो को पृथक् करने का प्रयत्न किया। यह कार्य बड़ा कठिन था। यूरेनियम पर मन्द न्यूट्रान प्रतिक्रिया से उत्पन्न तत्व बड़ी सूक्ष्म मात्रा मे रहते है। उन्हे साधारण रासायनिक रीति से पृथक् करना असम्भव था। इस कार्य को सफल बनाने के लिए आटो-हान ने विशेष क्रिया का प्रयोग किया। इस क्रिया को संकेतक पद्धति[2] कहते है। इसके द्वारा अत्यन्त सूक्ष्म मात्रा का रेडियधर्मी तत्व दूसरे तत्व के साथ पृथक् किया जाता है। जो तत्व रेडियधर्मी तत्व को पृथक् करने में उपयुक्त होता है उसे वाहक तत्व[3] कहते है। इसके द्वारा यूरेनियम-न्यूट्रान प्रतिक्रिया का सही विवेचन किया गया।

हान के अनुसधानों द्वारा यह ज्ञात हुआ कि इस क्रिया मे १० से अधिक पृथक् ऊर्जा वाले विकिरण निकलते थे। हान ने रासायनिक क्रिया द्वारा अभिकर्मको को तीन भागों में विभक्त किया।

उनके द्वारा तीन प्रकार की प्रतिक्रियाओ द्वारा पारयूरेनियम तत्व[4] वन रहे थे। ये तीनों क्रियाए न्यूट्रान आक्रमण से आरम्भ होती थी। परन्तु इस विवेचना में यह अचम्भे की वात थी कि युरेनियम से आगे बनी शृंखला मे दो या तीन सोपान के बाद स्थिर तत्व पाये जायँ। यूरेनियम स्वत. अस्थिर तत्व है। उससे भारी किसी अन्य तत्व का स्थिर होना कठिन प्रतीत होता था।

इसी प्रकार पैरिस मे जोलियै-क्यूरी के अनुसंधानों द्वारा ज्ञात हुआ कि इस क्रिया में कुछ और नये विकिरण भी निकलते है जिनको पहले हान

1. Otto Hahn
2. Tracer technique
3. Carrier elements
4. Transuranium elements

पहचान न पाया था। इन अनुसंधानों को हान ने भी दोहराया और उसने उन्हें सही पाया। उन्होंने देखा कि रासायनिक क्रियाओं द्वारा पृथक् होने पर कुछ ऐसे रेडियधर्मी तत्त्व भी पाये गये जो लैंथेनम और उसके पास के तत्वों के गुण वाले थे। लैंथेनम एक हलका तत्त्व है। इसकी परमाणु-संख्या ५७ है। आवर्त-सारणी में यह यूरेनियम से बहुत दूर है। इस कारण लैंथेनम के गुण वाला तत्त्व मिलना बहुत अचंभे की बात थी। साथ ही साथ बेरियम के गुण वाला तत्त्व भी प्राप्त हुआ। बेरियम की परमाणु-संख्या ५६ है। यह तत्त्व आवर्त-सारणी में लेंथेनम से एक स्थान पहले स्थित है।

इन परिणामो को प्रकाशित करते हुए हान एव स्ट्रासमान् ने लिखा—

"रसायनज्ञ होने के नाते हमे यह निश्चित रूप से कहना पड रहा है "यूरेनियम द्वारा न्यूट्रान ग्रहण किये जाने के कारण बने नये पदार्थ रेडियम से भिन्न, परन्तु बेरियम के समान गुणयुक्त होते हैं।" उस समय की विचार-धारा में यह निरीक्षण किसी प्रकार भी ठीक न जंचता था। यूरेनियम पर प्रतिक्रिया करने से बेरियम-जैसा हलका तत्त्व बने, यह कैसे माना जा सकता था। परन्तु हान का निरीक्षण अचूक था। उस पर सन्देह नहीं हो सकता था। इस प्रकार समस्त वैज्ञानिक बड़े अचम्भे में पड़ गये।

लिज़े माइनटर ने इस समस्या का सही हल निकाला। माइटनर पहले हान की प्रयोगशाला मे काम करती थी, परन्तु हिटलर के अत्याचारों से तंग आकर उसे जर्मनी छोडना पड़ा। जर्मनी से भाग कर उसने तब डेनमार्क मे नियल बोर की अनुसंधानशाला में कार्य करना प्रारम्भ किया था। हान एवं स्ट्रासमान् का प्रकाशन देखने के पश्चात् उसने इंग्लैण्ड की प्रसिद्ध वैज्ञानिक अनुसंधान पत्रिका "नेचर" में छपने के लिए एक शोध पत्र भेजा। यह शोध पत्र उसके तथा एक अन्य वैज्ञानिक फ़िश[1] के नामो से लिखा गया था।

1. *Frisch*

इस पत्र में हान एव स्ट्रासमान के निरीक्षण का विवेचन दिया गया था। माइटनर-फ्रिश ने सर्वप्रथम यह कहने का साहस किया कि न्यूट्रान प्रतिक्रिया से यूरेनियम परमाणु दो भागो मे खण्डित हो जाता है। खण्डन[1] शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग इन्ही वैज्ञानिको ने किया था। खण्डन क्रिया से उत्पन्न ये दोनों भाग प्रायः समान आकार के होते है। यूरेनियम परमाणु का नाभिक स्वतः ही अस्थिर है। इसी कारण वह रेडियधर्मी है। एक न्यूट्रान और जुड जाने से उसकी अस्थिरता इतनी बढ जाती है कि उसका खण्डन हो जाता है। इसकी उपमा हम जल की बूंद से दे सकते है। जल की बूंद जब एक सीमा से बढती है तो उसे सँभालना कठिन हो जाता है और स्थिर होने के लिए वह दो बराबर भागो मे बंट जाती है।

उन्होंने लिखा कि हान एव स्ट्रासमान द्वारा प्राप्त लैंथेनम और बेरियम के रेडियधर्मी समस्थानिक यूरेनियम-खण्डन द्वारा उत्पन्न खण्ड थे।

उसी काल मे फ्रिश ने दूसरा शोध-पत्र प्रकाशित किया जिसमे खण्डन क्रिया की अपने प्रयोगो द्वारा पुष्टि की। उसने आयनीकरण का दोलन-लेखी द्वारा अध्ययन किया था। अल्फा-कण आयनीकरण कोष्ठक मे आयन उत्पन्न करते है। उनके द्वारा उत्पन्न आयनीकरण दोलन-लेखी द्वारा देखा जा सकता था, जिसमे इसकी मात्रा की माप हो जाती थी। फ्रिश ने यूरेनियम तथा मन्द न्यूट्रान की प्रतिक्रिया का अध्ययन दोलनलेखी द्वारा ही किया था।

यूरेनियम के खण्डन द्वारा बडी मात्रा मे ऊर्जा का उदय होना चाहिए, क्योंकि इस क्रिया द्वारा कुछ समात्रा ऊर्जा मे परिणत होगी। यह रूपान्तरण आइंस्टाइन के नियम द्वारा होगा। इसलिए यदि यूरेनियम खण्डित हो रहा है तो दोलन-लेखी मे बड़ा श्रृंग दिखाई देना चाहिए क्योंकि अधिक ऊर्जा से बडी मात्रा मे आयनीकरण होगा। हम यह ऊपर बता चुके है कि

1. Fission

दोलन-लेखी में अल्फा कणों द्वारा किया गया आयनीकरण देखा जा सकता है। अल्फा-कण द्वारा बने शृंगों से यूरेनियम-खण्डन के शृंग कहीं अधिक बड़े होंगे क्योंकि उनमें बड़ा शक्तिशाली आयनीकरण होगा।

फिश ने अपने दोलन-लेखी में कुछ बहुत उच्च शृंग देखे जो कि केवल यूरेनियम खण्डन द्वारा ही उत्पन्न हो सकते थे। इस प्रकार फिश के अनुसन्धान से हान एवं स्ट्रासमान के प्रयोगों की पुष्टि हुई। इन अनुसन्धानों के प्रकाशन से सारे वैज्ञानिक जगत में चेतनता आयी। संसार की विभिन्न अनुसन्धानशालाओं में इन प्रयोगों को दोहराया गया और सब स्थानों पर इनकी पुष्टि हुई। अमेरिका के कोलम्बिया विश्वविद्यालय, जान हाप्किन विश्वविद्यालय, कारनेगी इन्स्टीट्यूट और केलीफोर्निया विश्वविद्यालयों में इन प्रयोगों को सफलतापूर्वक दोहराया गया। पेरिस में फ्रेड्रिक-जोलियट-क्यूरी ने खण्डित यूरेनियम के खण्डों को पहचाना। डेनमार्क में माइटनर एवं फिश ने खण्डों को रासायनिक विधि द्वारा एकत्र किया। विभिन्न अनुसन्धानशालाओं में यूरेनियम खण्डन क्रिया से उत्पन्न खण्डों की सम्यक् रीति से जाँच हुई। इन प्रयोगों से ज्ञात हुआ कि इस क्रिया में लैंथेनम और बेरियम के अतिरिक्त कुछ अन्य तत्वों के रेडियधर्मी समस्थानिक पाये जाते हैं जिनमें ब्रोमीन, क्रिप्टान, स्ट्रॉशियम, मोलीब्डेनम्, रूबीडियम, एण्टीमनी, टेल्यूरियम, आयोडीन, जेनन और सीजियम उल्लेखनीय हैं। आश्चर्यजनक बात यह हुई कि यह सारे कार्य हान के अनुसन्धानों के प्रकाशन के तीन महीने बाद की अवधि में ही हुए। यूरेनियम खण्डन की नूतन धारणा शीघ्र ही सब जगह स्वीकार्य हुई।

यह उल्लेखनीय है कि ऑटो हान के अनुसन्धानों के पाँच वर्ष पूर्व यूरेनियम-खण्डन की सम्भाव्यता पर एक दूसरी जर्मन वैज्ञानिका श्रीमती नोडक् ने विचार किया था। परन्तु तब उस पर लोगों ने ध्यान नहीं दिया था। इडा नोडक[1] ने एक शोध पत्र में फर्मी के प्रयोगों पर विचार प्रकट किये

1. Frau Ida Noddack

थे। उस समय फर्मी की धारणा थी कि यूरेनियम पर न्यूट्रान के आक्रमण से पारयूरेनियम तत्त्व बनते हैं। नोडक ने इसकी आलोचना की। उन्होंने कहा कि यह सम्भावना ध्यान देने योग्य है कि न्यूट्रान-यूरेनियम प्रतिक्रिया द्वारा खण्डित होकर यूरेनियम परमाणु छोटे भार वाले परमाणुओं को जन्म देता हो। ये परमाणु कुछ हल्के तत्वों के समस्थानिक हो और यूरेनियम के निकट भारवाले परमाणु न हो। आश्चर्य तो यह है कि उस समय इतने मूलभूत विचारो का वैज्ञानिक जगत ने तिरस्कार कर दिया।

खण्डन-क्रिया के प्रकार

अभी हमने पाठको के समक्ष मन्द न्यूट्रान द्वारा यूरेनियम खण्डन-क्रिया का वर्णन किया है। सर्वप्रथम इसी क्रिया की खोज हुई, परन्तु शीघ्र ही अनुसन्धानो से ज्ञात हुआ कि दूसरे भारी तत्त्वों के नाभिक भी खण्डित किये जा सकते हैं तथा न्यूट्रान के अतिरिक्त दूसरे कण भी खण्डन क्रिया कर सकते हैं। प्रकृति मे यूरेनियम के तीन समस्थानिक पाये जाते है जिनमे यूरेनियम–२३८ ९९.३ प्रतिशत मात्रा मे और यूरेनियम–२३५ ०.७ प्रतिशत मात्रा मे वर्तमान है। तीसरा समस्थानिक यूरेनियम–२३४ अत्यन्त अल्प मात्रा मे पाया जाता है (लगभग ०.००६ प्रतिशत)। मन्द न्यूट्रान से केवल यूरेनियम–२३५ समस्थानिक का खण्डन होता है। तीव्र न्यूट्रान (दस लाख इवो० ऊर्जा से अधिक) द्वारा यूरेनियम २३८ एव २३५ दोनों समस्थानिक खण्डित हो जाते है।

थोरियम परमाणु के नाभिक का खण्डन भी सम्भव है। इसके लिए दस लाख इवो० (१०,००,००० इवो०) ऊर्जाशील न्यूट्रानों का उपयोग करना पड़ेगा। नब्बे लाख इवो० (९०,००,००० इवो०) ऊर्जाशील ड्यूट्रान से यूरेनियम तथा थोरियम दोनों का खण्डन हो सकता है। इन परमाणुओं का खण्डन तीन करोड़ बीस लाख इवो० ऊर्जाशील अल्फा-कण (३,२०,००,००० इवो०), सत्तर लाख इवो० ऊर्जाशील प्रोटान (७०,००,

००० इवो०) और तिरसठ लाख इवो० (६३,००,००० इवो०) ऊर्जाशील गामा-विकिरण द्वारा सम्भव है।

कुछ समय पश्चात् वैज्ञानिको ने नब्बे (९०) परमाणु संख्या से नीचे के तत्त्वो का खण्डन भी देखा। अब यह भली-भाँति ज्ञात है कि विस्मय, सीसा, थैलियम, पारद, स्वर्ण, प्लैटिनम और टैंटलम का खण्डन अल्फा-कण, ड्यूट्रान अथवा न्यूट्रान द्वारा सम्भव है। इन कणों को दस करोड़ इलेक्ट्रान वोल्ट (१०,००,००,००० इवो०) से अधिक ऊर्जाशील होना चाहिए।

साथ ही साथ यह भी ज्ञात हुआ कि कुछ कृत्रिम तत्त्व भी खण्डित हो सकते है। इनमे दो तत्त्वों का विशेष स्थान है, एक यूरेनियम का २३३ भार वाला समस्थानिक तथा दूसरा प्लूटोनियम-२३९ (परमाणु संख्या ९४)। यूरेनियम-२३३ थोरियम-२३२ पर मन्द न्यूट्रान के आक्रमण से बनता है। यूरेनियम-२३८ पर मन्द न्यूट्रान की प्रतिक्रिया द्वारा प्लूटोनियम-२३९ बनाया जाता है। दोनों तत्त्वो का खण्डन मन्द न्यूट्रान ही करते हैं। परमाणु ऊर्जा के उपयोगों मे दोनों का बहुमूल्य स्थान है। नेप्यूनियम-२३७ तीव्र न्यूट्रानों द्वारा खण्डित हो सकता है।

रूसी वैज्ञानिक फ्लेरोव[1] और पेट्रज़क[2] ने १९४० मे यूरेनियम के स्वतः खण्डन पर अनुसन्धान किया था। उनके प्रयोगों से ज्ञात हुआ कि यूरेनियम-२३५ समस्थानिक न्यूट्रान आक्रमण के बिना ही खण्डित हो सकता है। परन्तु इस खण्डन की सम्भाव्यता बहुत कम है। स्वतः खण्डन की अर्ध-जीवन अवधि दीर्घ है (लगभग $१०^{१४}$—$१०^{१५}$ वर्ष)। यदि एक ग्राम साधारण यूरेनियम लिया जाय तो एक मिनट में एक परमाणु खण्डित होगा। रेडियधर्मी प्रतिक्रिया की गति (जिसके द्वारा यूरेनियम परमाणु से अल्फा-कण निकलता है) इस खण्डन क्रिया से दस लाख गुनी अधिक है।

1. Flerov 2. Petrzhak

कुछ वैज्ञानिकों का अनुमान है कि यूरेनियम–२३८ समस्थानिक भी स्वतः खण्डन कर सकता है। इसकी गति २३५ समस्थानिक से भी अति न्यून है। इसकी अर्धजीवन अवधि का अनुमान $१०^{१७}$ वर्ष लगाया गया है।

खण्डन-क्रिया में ऊर्जा का उदय

हम पाठकों को बता चुके है कि यूरेनियम-खण्डन मे ऊर्जा स्वतन्त्र होती है। सर्वप्रथम इस ऊर्जा का अनुमान माइटनर एव फ्रिश ने किया था। इस अनुमान की पुष्टि प्रयोगो द्वारा हुई। उनके अनुसार यूरेनियम के एक परमाणु के खण्डन मे लगभग बीस करोड इलेक्ट्रान वोल्ट (२०,००,००,००० इवो०) ऊर्जा स्वतन्त्र होनी चाहिए। यह ऊर्जा समात्रा के क्षय से होती है। समात्रा के ऊर्जा मे परिणत होने के उदाहरण हम पहले भी देख चुके है। तत्त्वान्तरण के प्रयोगों के विषय मे बताते समय इसके कुछ परिगणन किये गये थे। वहाँ पर हमने देखा था कि तत्त्वान्तरण क्रियाओ में कुछ समात्रा ऊर्जा में परिणत हो सकती है। तत्त्वान्तरण प्रयोगो का एक उदाहरण नीचे दिया जाता है। प्रयोगो के समय यह क्रिया लीथियम पर तीव्र ड्यूट्रान के आक्रमण द्वारा होती है।

$$_{३}\text{लीथियम}^{६} + _{१}\text{ड्यूट्रान}^{२} \rightarrow _{२}\text{हीलियम}^{४}$$

$$_{3}Li^{6} + _{1}D^{2} \rightarrow _{2}He^{4}$$
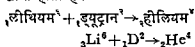
इस प्रतिक्रिया में दो करोड बाइस लाख इलेक्ट्रान वोल्ट (२,२२,००,००० इवो०) ऊर्जा स्वतन्त्र होती है जो तत्त्वान्तरण प्रयोगो मे उच्चकोटि की मानी जाती है।

यह ध्यान देने योग्य है कि खण्डन क्रिया मे इससे भी लगभग दस गुनी अधिक ऊर्जा उदित होगी। इसका कारण यह है कि इस प्रतिक्रिया मे अधिक समात्रा का क्षय होता है जिसके कारण से इतनी उच्च मात्रा मे ऊर्जा का उदय होता है।

इस ऊर्जा का अनुमान समात्रा के क्षय द्वारा लगाया जा सकता है। २३५ समस्थानिक यूरेनियम के परमाणु का भार २३५.११६ है। एक

न्यूट्रान का भार १.००९ है। इससे क्रिया में भाग लेने वाले कणों के भार का योग २३६.१२५ हुआ। खण्डन क्रिया कई रूपों में सम्भव है। उसमें से एक के द्वारा मॉलीब्डेनम[1]–९५ और लेंथेनम[2]–१३९ बनते रहते हैं। इसके साथ मे दो न्यूट्रान भी उत्पन्न होंगे। मॉलीब्डेनम–९५ का सम्यक् रीति से ज्ञात भार ९४.९४५ है और लेंथेनम–१३९ का भार १३८.९५५ है। इस क्रिया में उत्पन्न कणों के भारों का योग इस प्रकार होगा —

मॉलीब्डेनम	९४.९४५
लेंथेनम	१३८.९५५
दो न्यूट्रान	२.०१८
योग	२३५.९१८

क्रिया मे भाग लेने वाले और उत्पन्न कणों के भार का अन्तर २३६.१२५ –२३५.९१८ अर्थात् ०.२०७ संमात्रा मात्रक होगा। इस भार को आइंस्टाइन के समीकरण द्वारा ऊर्जा में परिणत करने पर उन्नीस करोड़ चालीस लाख इलेक्ट्रान वोल्ट (१९,४०,००,००० इवो०) प्राप्त होंगे। इस मात्रा की पुष्टि अन्य प्रयोगों द्वारा भी हो चुकी है।

खण्डन ऊर्जा कई स्थानों पर विभाजित रहती है। लगभग सोलह करोड़ बीस लाख इलेक्ट्रान वोल्ट की मात्रा (१६, २०,००,००० इवो०) दोनो खण्डित भागो को गतिज ऊर्जा देने के काम आती हैं। एक करोड़ बीस लाख इलेक्ट्रान वोल्ट (१,२०,००,००० इवो०) की मात्रा उत्पन्न न्यूट्रान तथा गामा-विकिरण के साथ व्यय होती है और दो करोड़ इलेक्ट्रान

1. Mo–९५ 2. La–१३९

वोल्ट (२,००,००,००० इवो०) खण्डन पदार्थ की रेडियधर्मिता में उपयुक्त होते हैं।

खण्डन से प्राप्त खण्ड

यूरेनियम-खण्डन से प्राप्त खण्डों के निरीक्षण से ज्ञात होता है कि इस क्रिया द्वारा अनेक प्रकार के पदार्थ उत्पन्न होते हैं। यद्यपि यूरेनियम का नाभिक दो भागों में बँट जाता है, परन्तु यह दो भाग बराबर नहीं होते। इनमें एक कुछ हलका और दूसरा उससे भारी होता है। साधारण रूप से एक भाग का भार लगभग ९५ तथा दूसरे का १३९ होता है। इसका यह अर्थ नहीं है कि इन्हीं दो भारों में ही यूरेनियम खण्डित होता है। खण्डन क्रिया के अनेक रूप सम्भव हैं। यूरेनियम के दो परमाणु भिन्न-भिन्न भारों में खण्डित हो सकते हैं और उन खण्डों में अनेक तत्त्व पाये जाते हैं।

खण्डन से उत्पन्न तत्त्व स्थिर नहीं होते। प्रत्येक तत्त्व रेडियधर्मी ज्ञात होता है। उदाहरण के लिए हम टेल्यूरियम को देखें। इस तत्त्व के अनेक समस्थानिक खण्डन क्रिया द्वारा पाये गये हैं। इन समस्थानिकों का भार १३१ से १३५ तक है। इनमें से प्रत्येक रेडियधर्मी है और बीटा कणों को स्वतन्त्र करता है। इसी प्रकार आयोडीन के १२९ से १३७ भार वाले समस्थानिक पाये जाते हैं जिनमें प्रत्येक रेडियधर्मी है। सामान्य रीति से निरीक्षण करने पर ज्ञात हुआ है कि ७२ से १६० भार संख्या वाले कण खण्डन क्रिया द्वारा प्राप्त होते हैं। इनमें सब कण समान मात्रा में नहीं मिलते। अधिकतर ९० से १०० मात्रा और १३५ से १४५ मात्रा वाले कण ही मिलते हैं। ११६ से १२० तक की भार संख्या वाले कण बहुत कम मात्रा में मिलते हैं। जिसका अर्थ यह है कि यूरेनियम परमाणु का बराबर भागों में बँटना असम्भव-सा है। ऐसा ज्ञात हुआ है कि यूरेनियम परमाणु ४० भिन्न प्रकारों से विभक्त हो सकता है। इनमें से ३० प्रकार प्रयोगों द्वारा ज्ञात भी हो चुके हैं।

यूरेनियम २३३ और प्लूटोनियम-२३९ परमाणुओं के खण्डन का

भी अध्ययन हो चुका है। उनमें भी इसी प्रकार के पदार्थ मिले हैं और उनके खण्डन के भी अनेक रूप हैं।

यह समस्त निरीक्षण मन्द न्यूट्रानों द्वारा उत्पन्न खण्डन द्वारा किये गये है। तीव्र या अधिक ऊर्जाशील न्यूट्रानो द्वारा किये गये खण्डनों का रूप भिन्न होता है। इस क्रिया द्वारा अधिक मात्रा मे न्यूट्रान स्वतन्त्र होते हैं। कभी-कभी तो दस (१०) न्यूट्रान तक एक प्रतिक्रिया मे उत्पन्न हो जाते हैं। बचा हुआ नाभिक लगभग बराबर भागो मे विभक्त हो जाता है।

अब हम खण्डन-क्रिया द्वारा उत्पन्न कणों के गुणो पर दृष्टि डालें। प्रथम गुण हमारे सामने रेडियधर्मिता का आता है।

यूरेनियम-खण्डन से दो तत्त्वो के नाभिक बनते है। इन दोनों नाभिको मे न्यूट्रान-प्रोटान का अनुपात लगभग वही होगा जो यूरेनियम के नाभिक मे रहता है। यदि हम आवर्त-सारणी के उन तत्त्वों के स्थिर समस्थानिकों पर दृष्टिपात करें जो यूरेनियम नाभिक के विभक्त होने से बनते हैं तो हम यह पायेंगे कि इन तत्त्वो के स्थिर समस्थानिकों में न्यूट्रान-प्रोटान अनुपात विभिन्न हैं। हलके तत्त्वो मे भारी तत्त्वो की अपेक्षा यह अनुपात कम रहता है। दूसरे शब्दों मे हम यह कह सकते हैं कि भारी तत्त्वों के नाभिक में न्यूट्रान का प्रतिशत हल्के तत्त्वो से अधिक रहता है। अभी हम ऊपर कह चुके है कि यूरेनियम खण्डन क्रिया से बने नाभिकों में न्यूट्रान का प्रतिशत लगभग यूरेनियम के समान होगा। इसी कारण यह नाभिक अस्थिर अवस्था मे उत्पन्न होते हैं। अस्थिर नाभिक दो मार्गों से स्थिर अवस्था में पहुँच सकते हैं। प्रथम मार्ग के अनुसरण से इन अस्थिर नाभिको मे से अधिक न्यूट्रान निकल आयेंगे। यह क्रिया ऊर्जा के विचार से कठिन मालूम होती है। इस कारण केवल इसी एक मार्ग द्वारा अस्थिर समस्थानिक स्थिर अवस्था नही प्राप्त कर सकते।

दूसरा मार्ग यह है कि अस्थिर नाभिकों के अन्दर कुछ न्यूट्रान प्रोटान में परिणत हो जायें। इस प्रकार न्यूट्रान प्रोटान अनुपात बदलकर स्थिर हो जायगे। यदि एक न्यूट्रान प्रोटान मे परिणत होगा तो उसके साथ एक

इलेक्ट्रान का स्वतन्त्र होना आवश्यक है। एक अस्थिर नाभिक को स्थिर अवस्था प्राप्त करने के लिए यह भी आवश्यक हो सकता है कि एक से अधिक न्यूट्रानो को प्रोटानो मे परिणत होना पडे। यदि यह हुआ तो इस श्रृखला मे एक से अधिक इलेक्ट्रान नाभिक द्वारा स्वतन्त्र होगे।

यूरेनियम नाभिक के विभक्त होने से उत्पन्न अस्थिर नाभिक लगभग इसी क्रिया द्वारा स्थिर अवस्था मे पहुँचते है। इससे उनकी परमाणु सख्या बढ जाती है और कुछ इलेक्ट्रान स्वतन्त्र हो जाते है। अधिकतर नाभिको को स्थिर करने के लिए पाँच या छ इलेक्ट्रानो को स्वतन्त्र करना आवश्यक हो जाता है। इस प्रकार यह नाभिक पाँच या छ तत्त्वो मे परिणत होते हुए स्थायी तत्त्व की अवस्था मे पहुँचते है। प्रत्येक सोपान मे एक इलेक्ट्रान स्वतन्त्र हो जाता है।

इनकी रेडियधर्मी श्रृखला पाँच या छ. सोपान की होती है। इसका एक उदाहरण क्रिप्टान–९७[1] है जिसकी परमाणु सख्या ३६ है। इसकी रेडियधर्मी श्रृंखला निम्न प्रकार है —

${}_{३६}$क्रिप्टान^{९७} $\xrightarrow{\text{बीटा}}$ ${}_{३७}$रुबीडियम^{९७} $\xrightarrow{\text{बीटा}}$ ${}_{३८}$स्ट्राशियम^{९७} $\xrightarrow{\text{बीटा}}$
${}_{३९}$इट्रियम^{९७} $\xrightarrow{\text{बीटा}}$ ${}_{४०}$जिरकोनियम^{९७} $\xrightarrow{\text{बीटा}}$ ${}_{४१}$नियोबियम^{९७} $\xrightarrow{\text{बीटा}}$
${}_{४२}$मॉलीब्डेनम^{९७}

$${}_{36}Kr^{97} \xrightarrow{\beta} {}_{37}Rb^{97} \xrightarrow{\beta} {}_{38}Sr^{97} \xrightarrow{\beta} {}_{37}Y^{97} \xrightarrow{\beta}$$
$${}_{40}Zr^{97} \xrightarrow{\beta} {}_{41}Nb^{97} \xrightarrow{\beta} {}_{42}Mo^{97}$$
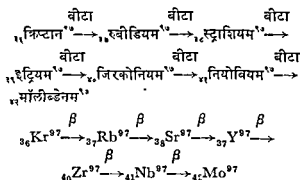
इन सारी क्रियाओ मे केवल बीटा-कण स्वतन्त्र होते है। इस कारण

1. Kr—97
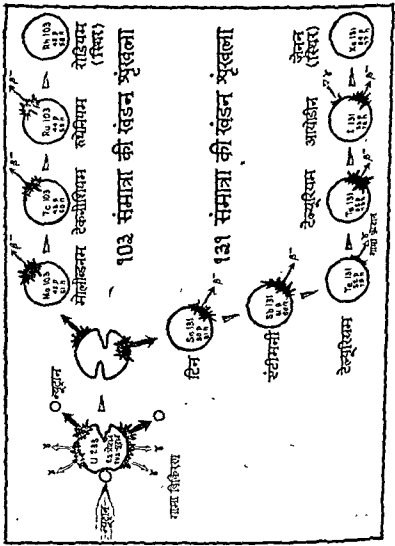
चित्र संख्या २४—यूरेनियम खण्डन और बीटा क्षय शृंखला

सब तत्त्वो की भार-संख्या ९७ ही रहती है। केवल परमाणु सख्या में अन्तर आता रहता है।

वहुत ही कम मात्रा मे कभी-कभी स्थिर समस्थानिक भी यूरेनियम-खण्डन से वन जाते है। इनके केवल तीन उदाहरण अभी तक ज्ञात है। यह रुबीडियम–८६,[1] सीज़ियम–१३६[2], और ब्रोमीन–८२[3] मात्र हैं। इनकी इस प्रतिक्रिया द्वारा उत्पन्न मात्रा भी बहुत न्यून है। इस कारण खण्डन-पदार्थो में इनका विशेष स्थान नही है।

खण्डन पदार्थो की रेडियधर्मिता मे लगभग दो करोड इलेक्ट्रान वोल्ट (२,००,००,००० इवो०) ऊर्जा का क्षय होता है। यह ऊर्जा, बीटा-कण, गामा-विकिरण तथा न्यूट्रिनो मे विभाजित रहती है। लगभग आधी ऊर्जा न्यूट्रिनो के स्वतन्त्र होने मे क्षय होती है। इस क्रिया में दो प्रकार के गामा-विकिरण स्वतन्त्र होते है। प्रथम है क्षिप्र गामा-विकिरण जो खण्डन क्रिया के साथ उदय हो जाते हैं तथा जिनमें लगभग पचास लाख इलेक्ट्रान (५०,००,००० इवो०) ऊर्जा का क्षय होता है। दूसरे प्रकार के गामा-विकिरण खण्डन-खण्डो से निकलते है जिनका उदय कुछ समय पश्चात् होता है।

खण्डन-खण्डों के गुण

यूरेनियम-खण्डन मे लगभग दो सौ प्रकार के खण्ड पहचाने गये है। इन खण्डो की ५० विभिन्न शृखलाएँ ज्ञात हैं। इन पदार्थो के क्षेत्र, रेडियधर्मिता, अर्धजीवन अवधि, आयनीकरण आदि की जाँच हुई है। परन्तु इन पर अव भी वहुत मात्रा मे कार्य हो रहा है जिससे और नये-नये समस्थानिको की खोज हुई है। इनमें से कुछ समस्थानिक निम्न सारिणी मे दिये गये है।

1. Rb—86 2. Cs—136 3. Br—82

यूरेनियम–खण्डन से प्राप्त कुछ दीर्घकालीन समस्थानिक

खण्डन समस्थानिक;	प्राप्त प्रतिशत	अर्धजीवन अवधि,	बीटाकण ऊर्जा (लाख इवो०)	गामा-विकिरण ऊर्जा (लाख इवो०)
स्ट्राशियम–८९	४ ६	५३ दिन	१४.६३	
स्ट्राशियम–९०	५.३	१९.९ वर्ष	६. १	
इट्रियम–९१	५.४	६१ दिन	१५. ३	१२; २.०
जिरकोनियम–९५	६.४	६५ दिन	८. ४ ३. ७	७.२
टेकनीशियम–९९	६.२	२.१×१०^{५} वर्ष	२. ९	
रूथेनियम–१०३	३ ७	३९.८ दिन	६. ९ २. १	४.९
आयोडीन–१३१	२.८	८.१ दिन	८. २ ६. १ ३. ४ २. ५	७.२; ६.४ ६.१; ३.६ २.८; ०.८
जेनान–१३३	६.०	५.३ दिन	३. ५	०.८
सीजियम–१३७	६ २	३३ वर्ष	५. २ १२.०	६.६
बेरियम–१४०	६.१	१२.८ दिन	१०.२ ४. ८	५.४; ३.० १.६; १.३; ०.३
सीजियम–१४१	६.०	३३.१ दिन	५. ८ ४. ४	१.५
प्रेजोडिमियम–१४३	६ ०	१३ ८ दिन	८. ३	
सीरियम–१४४	५.३	२८२ दिन	३. ० १. ७	०.३; ०.५ ०.८
प्रोमीथियम–१४७	२.६	२.६ वर्ष	२. २	

इस सारिणी मे दो ऐसे तत्त्व भी है जो प्रकृति मे नही पाये जाते। ये है टेकनीशियम[1]–९९ और दूसरा प्रोमीथियम[2]–१४७ । ये दोनो तत्त्व कृत्रिम तत्त्वातरण प्रयोगो द्वारा भी बनाये गये है।

खण्डन-पदार्थों से प्रत्येक तत्त्व को अलग करना बडा कठिन कार्य है। इन पदार्थों मे बहुत-से विरल मृदा तत्त्व भी है जिनके रासायनिक गुण प्राय समान होते है। इस कारण इनका रासायनिक विधि मे पृथक्करण और भी कठिन हो जाता है। इनको पृथक् करने के लिए आयन विनिमय रेजीन का उपयोग किया गया है। इस विधि द्वारा इनका परिष्करण सरल हो गया है।

आजकल परमाणु भट्ठियो द्वारा खण्डन-पदार्थ बडी मात्रा मे उत्पन्न होते हैं। इनमे से कुछ समस्थानिको का औद्योगिक तथा प्रयोगशालीय उपयोग होने लगा है। परन्तु शेष पदार्थों का उपयोग नही किया जा सकता। ये पदार्थ बड़ी मात्रा मे विकिरण उत्पन्न करते है, अत इनका स्पर्श करना या सँभालना बडा आपत्तिजनक है, क्योकि विकिरण मनुष्य के लिए अहितकारी है। इस कारण यह बहुत आवश्यक है कि इन्हे बडी सावधानी के साथ हटाया जाय। इनका हस्तान्तरण भी एक विकट समस्या है, क्योकि इन्हे बाहर फेंका नही जा सकता अन्यथा आसपास का वातावरण दूषित हो जायगा। नदी मे भी फेंका नही जा सकता, क्योकि उससे जल दूषित होगा। इस कारण कुछ पदार्थ समुद्र की गहराई मे बैठा दिये जाते है और कुछ भूमि को गहराई तक खोद कर उसमे गाड़ दिये जाते है। परन्तु अभी तक यह ठीक नही कहा जा सकता कि आगे चलकर इससे भी कोई हानि हो सकती है या नही।

खण्डन प्रक्रम

माइटनर और फिश ने सर्वप्रथम द्रव विन्दु प्रतिरूप के अनुसार खण्डन

1. Tc–99 2. Pm–147

क्रिया की विवेचना की। इसको समझने के पहले हम नाभिक की बनावट की ओर ध्यान दें और यह देखें कि उसमे किस प्रकार की शक्तियाँ कार्य करती हैं। नाभिक न्यूट्रान और प्रोटान से बना होता है। न्यूट्रान आवेश-रहित कण है इसलिए वह विद्युत् शक्ति में भाग नही ले सकता। प्रोटान धनावेशयुक्त कण हैं इस प्रकार उनमे आपस में प्रतिकर्पण होना चाहिए। इस विद्युत् शक्ति के कारण नाभिक का स्थिर होना असम्भव है।

नाभिक के स्थिर होने के लिए यह आवश्यक है कि उसके अन्दर उप-स्थित कणों के बीच एक प्रकार का आकर्पण हो। इस आकर्पण को आवेश-युक्त और आवेशरहित दोनों प्रकार के कणों को प्रभावित करना चाहिए। इस आकर्पण शक्ति को ससजन शक्ति[1] कहते हैं। इस प्रकार की शक्ति द्रव में कार्य करती है जिसके कारण उस द्रव की वूँद के परमाणु एक साथ वँधे रहते है, अलग नही हो जाते। इसी प्रकार परमाणु के नाभिक के अन्दर भी एक ससजन शक्ति कार्य करती है जो मूलभूत कणों को एक साथ रखती है और प्रोटानों के वीच के विद्युत् प्रतिकर्पण को रोकती है।

सर्वप्रथम अमेरिका-निवासी प्रसिद्ध भौतिकशास्त्री जॉर्ज गैमो[2] ने यह सिद्धान्त रखा कि नाभिक के कणों के बीच की शक्ति की तुलना द्रव की वूंद मे लगी शक्ति से की जा सकती है। जिस प्रकार द्रव की वूँद में पृष्ठ-तनाव रहता है उसी भाँति नाभिक में पृष्ठ-तनाव रहता है। एक द्रव की वूंद के मध्य के कणों पर चारो ओर बराबर शक्ति लगती है, परन्तु वाहरी पृष्ठ पर उपस्थित कण पर अन्तर्मुखी शक्ति लगती है। इस प्रकार उस पर चारो ओर से समान शक्ति नही लगती। इस कारण द्रव की बूँद गोलाकार धारण कर लेती है। एक आयतन के गोले का क्षेत्रफल किसी अन्य आकार के द्रव की अपेक्षा सबसे कम होता है। इस कारण एक गोलाकार बूंद का अपने आयतन में सबसे कम पृष्ठ-क्षेत्रफल होता है। उसकी

1. Cohesive forces 2. George Gamow

स्थिरता के लिए आवश्यक है कि उनका अपना पृष्ठ-क्षेत्रफल कम से कम हो।

इसी तुलना को लेते हुए गैमो ने कहा कि विभिन्न तत्त्वो के नाभिक ऐसे एक ही सर्वव्यापी नाभिक द्रव से बने है जिसका आयतन भिन्न-भिन्न होते हुए भी आकार गोलाकृति बूंद की भाँति रहता है। हमे यहाँ पर यह ध्यान अवश्य रखना चाहिए कि ये नाभिक द्रव साधारण द्रव से बहुत भिन्न हैं। जल का घनत्व एक माना जाता है, परन्तु इस द्रव का घनत्व उसी परमापक पर दो लाख चालीस सहस्र अरब (२४००००००००००००००) होगा। इसी प्रकार नाभिक द्रव का पृष्ठ तनाव पानी की अपेक्षा एक अरब (१,०००००००००००००००००) गुना अधिक होगा।

नाभिक द्रव की साधारण द्रव से तुलना करने पर एक और अन्तर दिखाई देगा। परमाणु नाभिको को हम द्रव की १ सूक्ष्म बूंदे समझ सकते है, परन्तु इन बूंदों मे विद्युत् आवेश स्थित है। यह आवेश प्रोटानों के कारण है, जो पारस्परिक प्रतिकर्षण के कारण नाभिक को खण्डित करने का प्रयत्न करते हैं। नाभिक बूंदो के इस दो या उनसे अधिक भागो मे खण्डित होने के प्रयत्न को पृष्ठ तनाव द्वारा रोका जाता है। इस तनाव के द्वारा नाभिक बूंदें गोलाकार रूप मे रहती है। इन दो विरोधी शक्तियो के कारण नाभिक मे अस्थिरता आ सकती है।

यदि पृष्ठ-तनाव की मात्रा प्रतिकर्षण की अपेक्षा अधिक होगी तो नाभिक स्वत खण्डित न हो सकेगा। इसके विपरीत यदि आवेश-प्रतिकर्षण पृष्ठ-तनाव की अपेक्षा बढ़ जायेगा तो नाभिक खण्डित होकर दो या उससे अधिक भागो मे बँट जायेगा।

पृष्ठ-तनाव और विद्युत् शक्ति के सन्तुलन का निरीक्षण वैज्ञानिको ने किया है। सर्वप्रथम इस पर १९३९ मे बोर एवं व्हीलर ने अनुसन्धान किया। उनके परिगणनो से ज्ञात हुआ कि आवर्त-सारणी मे उपस्थित तत्त्वों को हम दो प्रकारो मे बाँट सकते है। प्रथम प्रकार के तत्त्व वे है जो हाइड्रोजन तथा रजत के मध्य वर्तमान हैं। इन तत्त्वों में आवेश-प्रतिकर्षण

की अपेक्षा पृष्ठ-तनाव की मात्रा अधिक रहती है। इस कारण ये तत्व खण्डित नही हो सकते। इसके विपरीत रजत से भारी तत्त्व अस्थिर हैं। इनमें आवेश-प्रतिकर्षण की मात्रा अधिक है। यह अनुकूल अवस्था मे खण्डित हो सकते है। दूसरी ओर हलके तत्त्व के (यदि उनका भार रजत का आधा हो) दो नाभिको का संलग्न होना सम्भव होना चाहिए।

इस प्रकार सैद्धान्तिक रूप से हर भारी तत्त्व को स्वतः खण्डित होना चाहिए। परन्तु हम यह भी देख चुके हैं कि केवल यूरेनियम–२३५ का नाभिक स्वतः खण्डित होता है यद्यपि इसकी सम्भाव्यता कम है (अर्ध-जीवन अवधि $१०^{-१५}$ वर्ष) अन्य कोई भी नाभिक इस प्रकार खण्डित नहीं होता। कुछ भारी नाभिक न्यूट्रान के आक्रमण होने पर खण्डित होते हैं (जैसे यूरेनियम, थोरियम)। कुछ अन्य नाभिकों को खण्डित करने के लिए अति ऊर्जाशील कणो का प्रयोग करना पड़ता है। अभी तक टैंटेलम[1] –१८१ से हलके तत्त्व का खण्डन सम्भव नही हुआ है।

इन परीक्षणो से सिद्ध होता है कि भारी तत्त्वों का खण्डन और हलके तत्त्वों की संलग्नता साधारणतः नही हो सकती। इसको सम्भव बनाने के लिए हमे विशेष प्रयत्न करने होते हैं। खण्डन-क्रियाओं का वर्णन हम पहले कर चुके हैं। संलगन-क्रिया का वर्णन आगे किया जायेगा। खण्डन-क्रिया सम्भव करने के लिए हमे नाभिक को एक विशेष प्रकार का धक्का देना होगा जिससे उसमे वेगवान स्पन्दन उत्पन्न हो सके।

दोनो बातें पाठको को विरोधी लगेगी, परन्तु वास्तव में ऐसा नही है। हम इस क्रिया की उपमा कुछ दैनिक क्रियाओ से कर सकते हैं। यदि एक पहाड़ी के ऊपर बड़ा पत्थर का टुकड़ा रखा हो तो उसे स्वतः नीचे आ जाना चाहिए, परन्तु ऐसा नही होता। वह पत्थर उस स्थान से उस समय तक

1. (Ta–१८१)

नीचे नहीं आता जब तक उसे धक्का न दिया जाय। इसी प्रकार दियासलाई की तीलियाँ डिब्बे में बिना जले रखी रहती है यद्यपि उनमें उपस्थित यौगिकों को आपस में प्रतिक्रिया करनी चाहिए। यह प्रतिक्रिया उस समय तक प्रारम्भ नहीं होती जब तक उसे एक विशेष मसाले पर नहीं रगड़ा जाता। इसी प्रकार लकड़ी या अन्य ईंधन को वायु के आक्सीजन में प्रतिक्रिया करना चाहिए, क्योंकि सिद्धान्त रूप में ये यौगिक आक्सीजन में अस्थिर हैं। परन्तु हम देखते हैं कि ये वायु के आक्सीजन के मध्य में वर्षों तक रखे जा सकते हैं और उनमें कोई क्रिया नहीं होती।

रसायनज्ञ इस विधान से बहुत समय से परिचित है। वे जानते है कि हाइड्रोजन व आक्सीजन के प्रतिक्रिया करने से जल की उत्पत्ति होती है। क्रिया द्वारा कुछ ऊर्जा का उदय भी होता है। परन्तु हाइड्रोजन और आक्सीजन गैसों को साधारण अवस्था में मिला कर रख दिया जाय तो असंख्य वर्षों तक कोई क्रिया होती न दिखाई देगी। हां, यदि इनका ताप बढ़ाया जाय अथवा मिश्रण के बीच विद्युत्-विसर्जन किया जाय तो ये दोनों गैसें शीघ्र प्रतिक्रिया कर जल में परिणत हो जायेंगी।

रसायनज्ञ इसके विवेचन में कहते हैं कि प्रत्येक प्रतिक्रिया में भाग लेने वाले तत्त्वों अथवा परमाणुओं को भाग लेने से प्रथम सक्रिय ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है। इसको प्राप्त किये बिना वे प्रतिक्रिया नहीं कर सकते। इस ऊर्जा के अनेक स्वरूप हो सकते है। यह ताप के बढ़ने, दबाव के बढ़ने, विद्युत्-विसर्जन अथवा गतिज ऊर्जा आदि के रूप में प्राप्त हो सकती है।

इसी प्रकार परमाणुओं को खण्डित अथवा सगलित होने के पूर्व उन्हें सक्रिय ऊर्जा की आवश्यकता होगी। प्राय. इस ऊर्जा की आवश्यक मात्रा बहुत अधिक होती है और इन नाभिक प्रतिक्रियाओं को प्रारम्भ करना बड़ा कठिन कार्य है। अधिकतर नाभिक प्रतिक्रियाओं को प्रारम्भ करने के लिए इतने ऊँचे ताप की आवश्यकता होती है कि वह सरलता से उत्पन्न नहीं हो सकता। केवल सूर्य के मध्य में या अणु बम के मध्य स्थान में एक क्षण

के लिए ही यह ताप उपलब्ध हो सकता है। यह कठिनाई हमारे लिए बड़े सन्तोष का कारण है। हमें इस सम्भाव्यता से डरने की आवश्यकता नहीं है कि किसी दिन विश्व के भारी परमाणु खण्डित होकर और हल्के परमाणु संगलित होकर एक विस्फोट के द्वारा रज में परिवर्तित हो जायें।

यूरेनियम खण्डन की प्रतिक्रिया को समझाने के लिए माइटनर और फ़िश ने द्रव बिन्दु प्रतिरूप की सहायता ली। खण्डन प्रतिक्रिया को समझाने के लिए हमे सम्पूर्ण नाभिक के व्यवहार को देखना होगा। हम किसी एक न्यूट्रान अथवा प्रोटान के ऊपर सारी क्रिया का महत्त्व नही रख सकते। इसके लिए वैज्ञानिको ने नाभिक को एक गोल बूंद माना। इस बूंद का द्रव असपीड्य समझा गया। सारे नाभिक में प्रोटान का समान घनत्व माना गया अथवा हम यह कह सकते हैं कि उनका विभाजन समान है। यूरेनियम के नाभिक का आकार उसके द्रव के पृष्ठ तनाव के कारण गोलाकार होगा।

यदि इस बूंद पर किसी प्रकार का प्रभाव डाला जाय तो उसका आकार उसी प्रकार बदल सकता है जैसे जल की बूंद का आकार उसे हिलाने से बदल जाता है। उसमे उसी प्रकार के स्पन्दन उत्पन्न हो सकते हैं। यदि जल की एक बूंद को हम धक्का दें तो उसमें कुछ हलचल पैदा होगी जिसके कारण कुछ स्पन्दन उत्पन्न होगे। यदि यह धक्का हलका होगा तो कुछ समय पश्चात् बूंद अपने पुराने आकार पर आ जायगी। कभी-कभी ऐसा भी सम्भव हो सकता है कि पुराने आकार में लौटने के बीच में उससे एक हलकी छीट या कण बाहर ही रह जाय या दूर जाकर गिर जाये।

परन्तु यदि हम अधिक वेग से धक्का दें तो उस बूंद का आकार बहुत बदल सकता है। बहुत सम्भव है कि वह लम्बी होकर चित्र मे दिये आकार (ई) की तरह हो जाय और इस अवस्था के पश्चात् अधिक हलचल के कारण दो भागों में विभक्त हो जाय।

अब हम यह जानने का प्रयत्न करें कि मन्द न्यूट्रान की प्रतिक्रिया के कारण यूरेनियम--२३५ नाभिक की क्या दशा होगी। इस प्रतिक्रिया के

पूर्व हमने यूरेनियम नाभिक को गोलाकार माना था। इस गोलाकार नाभिक में एक न्यूट्रान के योग होने के कारण उत्तेजन ऊर्जा उत्पन्न होगी। यह ऊर्जा सारे नाभिक पर बराबर फैल जायगी। अब गोलाकार नाभिक मे कम्पन उत्पन्न होंगे जिसके कारण गोले के रूप मे परिवर्तन आ जायेंगे। दूसरे शब्दों मे हम यह कह सकते हैं कि वह गोला विकृत हो जायेगा। इसका अनुमान चित्र द्वारा सरलता से हो सकता है।
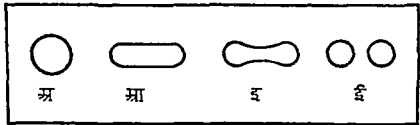
चित्र संख्या २५—नाभिक की विकृति

इस विकृति के कारण विद्युत् आवेश का विभाजन असमान हो जायगा। यदि नाभिक मे उत्तेजन ऊर्जा पर्याप्त मात्रा में होगी तो नाभिक की विकृति बढती जायेगी जैसा कि चित्र मे दिखाया गया है और विकृति एक चरम अवस्था को पार कर जायगी। ऐसा होने पर नाभिक का अपनी पुरानी अवस्था मे आना सम्भव न होगा। तब नाभिक का आकार ई की भाँति हो जायगा और वह एक झटके के साथ दो भागो मे विभक्त हो जायगा। चित्र मे दिखायीं गयी सारी प्रतिक्रिया क्षणिक होगी। वैज्ञानिको ने अनुमान लगाया है कि खण्डन क्रिया को पूर्ण होने मे लगभग $१०^{-१२}$ सेकेण्ड लगते है।

द्रव बूंद के सिद्धान्त के अनुसार यह आवश्यक नही है कि नाभिक केवल दो भागों मे विभक्त हो। यह खण्डन दो से अधिक भागो मे भी हो

सकता है। वैज्ञानिक सैन-त्स्यांग[1] ने अपने अनुसन्धानोंमें देखा कि यूरेनियम नाभिक कभी-कभी तीन भागो मे विभक्त होता है, परन्तु विरली दशाओं में चार भागों में भी विभक्त हो जाता है। उनके अनुसार एक हजार (१०००) द्वितीय खण्डन क्रियाओ के साथ तीन (३) तृतीयक खण्डन होते है। चतुर्थ खण्डन क्रिया इससे दस गुनी विरल है। परन्तु इन आकारों की पुष्टि नही हुई है। दूसरे वैज्ञानिकों ने तृतीयक खण्डन और चतुर्थक-खडन क्रियाओं को अधिक विरल माना है।

न्यूट्रानों की उत्पत्ति

यह पहले बताया जा चुका है कि खण्डन-क्रिया में कुछ न्यूट्रान मुक्त हो जाते हैं। यह स्वाभाविक भी है, परन्तु यह जानना आवश्यक है कि ये किस रीति से मुक्त होते है। पाठको को यह ज्ञात हो चुका है कि खण्डन क्रिया से बने खण्डों मे न्यूट्रानो की बहुतायत रहती है। इसी कारण ये खण्ड अस्थिर होते है और रेडियधर्मिता द्वारा स्थिर नाभिकों में परिणत होते हैं। इस क्रिया से अनेक इलेक्ट्रान मुक्त होते है जो हमें यह ज्ञात कराते हैं कि खण्डों में कुछ न्यूट्रान प्रोटान मे परिणत हो रहे है।

परन्तु पाठकों के सामने यह प्रश्न आ सकता है कि क्या खण्डन-क्रिया द्वारा उत्पन्न अस्थिर नाभिक इसी मार्ग द्वारा स्थिरता की ओर चलता है। क्या यह सम्भव नही है कि अस्थिर नाभिक में से कुछ न्यूट्रान भी स्वतन्त्र हो जायें ? अनुसन्धानो द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि ऐसा भी सम्भव हो सकता है कि इन नाभिकों से कुछ न्यूट्रान स्वतन्त्र हो जायें। ये अनुसन्धान यूरेनियम पर न्यूट्रान के आक्रमण द्वारा किये गये। कुछ आक्रमण प्रयोगों मे देखा गया कि यदि यूरेनियम पर न्यूट्रान आक्रमण करने के पश्चात् न्यूट्रान का स्रोत हटा लिया जाय तो कुछ समय पश्चात् तक कुछ न्यूट्रान मुक्त होते रहते हैं।

1. San-Tsiang

खण्डन-क्रिया द्वारा उत्पन्न न्यूट्रानों के लगभग ०.६ प्रतिशत न्यूट्रान क्रिया के ०.१ सेकेण्ड बाद उत्पन्न होते है और ० १ प्रतिशत एक मिनट तक उत्पन्न होते रहते हैं। इतने समय के पश्चात् भी अल्प मात्रा मे न्यूट्रान उत्पन्न होते रहते है। इनकी उत्पत्ति रेडियधर्मी नियमों के अनुसार होती है और इनकी भी नियत अर्धजीवन अवधि होती है। कुछ आधुनिक अनुसन्धानों मे १२५ मिनट अर्धजीवन अवधि के न्यूट्रान भी मिले है, यद्यपि इनकी मात्रा अत्यन्त अल्प है।

इस प्रकार खण्डन-क्रिया मे हमे दो रूपो के न्यूट्रान मिलते है। एक वे न्यूट्रान जो खण्डन-क्रिया के साथ-साथ उत्पन्न होते हे। इन्हे क्षिप्र न्यूट्रान कहा जाता है। दूसरे न्यूट्रान वे है जो खण्डो की रेडियधर्मिता से उत्पन्न होते है। उन्हे विलम्बित न्यूट्रान कहते हैं। ये विलम्बित न्यूट्रान उन उत्पन्न नाभिको से निकलते है जिनमे इतनी अधिक ऊर्जा उपस्थित रहती है कि उससे एक न्यूट्रान स्वतन्त्र हो जाये। खण्डन-क्रिया से उत्पन्न नाभिक बहुत ऊर्जाशील होते है। कभी-कभी बीटा-कण या इलेक्ट्रान निकलने के कारण नाभिक वेग से प्रतिक्षेप करता है। यदि यह प्रतिक्षेप ऊर्जा इतनी अधिक हुई कि न्यूट्रान स्वतन्त्र हो सके तो यह मार्ग सम्भव हो जाता है। अन्यथा कुछ गामा विकिरणों का उदय हो जाता है। कभी-कभी एक ही नाभिक दो मार्गों द्वारा विच्छेदित हो सकता है। इसका निम्न उदाहरण दिया जा रहा है जिसमें आयोडीन-१३७ नाभिक प्रतिक्रिया करता है।

$$_{५३}\text{आयोडीन}^{१३७} \xrightarrow[\text{कण}]{\text{बीटा}} {}_{५४}\text{जेनन}^{१३७}$$

$$_{53}I^{137} \xrightarrow{\beta} {}_{54}Xe^{137}$$
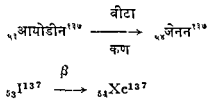
इस प्रतिक्रिया द्वारा जेनन-१३७ का निर्माण होता है।

जेनन-१३७ अस्थिर समस्थानिक है। इस कण का विच्छेदन दो

मार्गों द्वारा सम्भव होता है। अधिक ऊर्जाशील कण तो निम्न भाँति से क्षय होते है—

$$_{५४}\text{ज़ेनन}^{१३७} \longrightarrow {}_{५४}\text{ज़ेनन}^{१३६} + {}_{०}\text{न्यूट्रान}^{१}$$

$$_{54}Xe^{137} \longrightarrow {}_{54}Xe^{136} + {}_{0}n^{1}$$
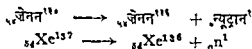
इस क्रिया से एक न्यूट्रान स्वतन्त्र होने के साथ ऊर्जा का क्षय होता है। स्वाभाविक है कि ये न्यूट्रान खण्डन-क्रिया के कुछ समय पश्चात् उत्पन्न होंगे। इस कारण इन्हें विलम्बित न्यूट्रान कहना ठीक होगा। अनुसन्धानों से ज्ञात हुआ है कि ज़ेनन-१३७ के कणों का विच्छेदित सात प्रतिशत भाग (७%) इस मार्ग द्वारा विच्छेदित होता है। शेष तिरानवे प्रतिशत (९३%) कण बीटा-कण तथा गामा-विकिरण स्वतन्त्र करते है।

$$_{५४}\text{ज़ेनन}^{१३७} \xrightarrow[\text{कण}]{\text{बीटा}} {}_{५५}\text{सीज़ियम}^{१३७} + \text{गामा विकिरण}$$

$$_{54}Xe^{137} \xrightarrow{\beta} {}_{55}Cs^{137} + \gamma \text{ rays}$$
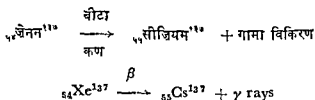
यह बडे सौभाग्य का विषय है कि यूरेनियम खण्डन में कुछ विलम्बित न्यूट्रान उत्पन्न होते हैं। इन न्यूट्रानों के बिना परमाणु भट्ठी का नियन्त्रण असम्भव था। यदि सारे न्यूट्रान क्षिप्त अवस्था में ही निकलते तो परमाणु भट्ठी मे एक साथ इतनी बड़ी संख्या में न्यूट्रान उत्पन्न हो जाते कि यान्त्रिक नियन्त्रण उनकी देखरेख करने मे असमर्थ रहते। परन्तु भाग्यवश ०.७५ प्रतिशत न्यूट्रान विलम्बित रहते है जिनके कारण यान्त्रिक नियन्त्रण सम्भव हो सका है।

अध्याय ११

नाभिकीय शृंखला प्रतिक्रिया

यूरेनियम खण्डन प्रतिक्रिया शृखला का अनुमान १९३९ मे लगाया गया था। उसी वर्ष मार्च मे वान हाल्बन[1] फ्रेड्रिक जोलिये और कोवर्सकी[2] ने इस समस्या पर फ्रास मे विचार किया। उसी समय अमेरिका मे एनरिको फर्मी भी इस ओर अनुसधान-कार्य कर रहे थे कि यदि यह शृखला क्रिया सम्भव हो सके तो परमाणु ऊर्जा का उपयोग सरलता से हो जाय। पर इसी क्रिया के अल्पकाल मे पूर्ण होने पर उससे भयानक विस्फोट होने की आशका भी वैज्ञानिको के मस्तिष्क मे घूम रही थी।

नाभिक खण्डन-क्रिया के दो गुण वैज्ञानिको के समक्ष थे। प्रथम गुण के अनुसार प्रत्येक परमाणु-खण्डन-क्रिया के साथ बीस करोड इलेक्ट्रान-वोल्ट (२०,००,००,००० इवो०) ऊर्जा उदय होती थी। दूसरे गुण के कारण प्रत्येक खण्डन-क्रिया द्वारा एक से अधिक न्यूट्रान स्वतन्त्र होते थे।

इस दूसरे गुण के कारण शृंखला बनाने की सम्भाव्यता वैज्ञानिकों के समक्ष आयी। अनुसन्धानों से ज्ञात हुआ कि प्रत्येक यूरेनियम–२३५ खण्डन क्रिया मे औसतन २.५ न्यूट्रान स्वतन्त्र होते है।

हम थोड़े समय के लिए मान लें कि प्रत्येक खण्डन प्रतिक्रिया [illegible] दो न्यूट्रान स्वतन्त्र होंगे। हम यह भी मान लें कि प्रत्येक न्यूट्रान एक [illegible] नाभिक को खण्डन करने में सफल होगा।

1. Van Halben 2. Ko[illegible]

ऐसी अवस्था मे जब एक न्यूट्रान यूरेनियम के नाभिक में प्रवेश करता है तो उसके प्रवेश के कारण नाभिक का खण्डन होकर दो न्यूट्रान स्वतन्त्र होंगे। अब ये दो न्यूट्रान दो नये नाभिको में प्रवेश करेंगे और उनका खण्डन कर देंगे और इस क्रिया द्वारा चार नये न्यूट्रान स्वतन्त्र होंगे। हर नये चरण में पिछली क्रिया से दूनी सख्या मे न्यूट्रान उत्पन्न होते रहेंगे। चौथी मे सोलह (१६), पाँचवी मे बत्तीस (३२), छठी में चौंसठ (६४), आदि न्यूट्रान उत्पन्न हो जायेंगे। इस प्रकार यह प्रतिक्रिया शृंखला रूप मे बढ़ती जायेगी। अस्सीवी दशा तक $१०^{२४}$ न्यूट्रान उत्पन्न हो जायेंगे। यदि हम आरम्भ में ही २४० ग्राम यूरेनियम से कार्य प्रारम्भ करते तो इस अवस्था में उसमे उपस्थित सारे परमाणुओं का खण्डन हो जाता। इसके साथ उत्पन्न ऊर्जा का अनुमान लगाना कठिन है। यह ऊर्जा यदि विद्युत् मे परिवर्तित की जा सके तो पचास लाख यूनिट (५०,००,०००) के बराबर होगी। अचम्भे की वात यह है कि सारा कार्य केवल एक न्यूट्रान से प्रारम्भ हुआ। खण्डन-क्रिया मे बहुत कम समय लगता है। यह सारी क्रिया एक सेकेंड के दस लाखवें भाग मे पूर्ण हो सकती है। यदि इस क्रिया को अनियन्त्रित अवस्था में होने दिया जाय तो इतने कम समय मे इतनी अधिक ऊर्जा उत्पन्न होने के कारण भयानक विस्फोट होगा।

ऊपर बताये हुए सारे वर्णन आदर्श अवस्था के हैं। वास्तविक परिस्थिति मे अनेक कठिनाइयाँ सामने आयेंगी। जिनमे कुछ नीचे दी जा रही हैं—

प्रथम कठिनाई यह है कि यूरेनियम नाभिक में प्रवेश करने वाला प्रत्येक न्यूट्रान उसका खण्डन नही करता। यूरेनियम–२३८ समस्थानिक केवल अधिक ऊर्जाशील न्यूट्रान द्वारा खण्डित हो सकता है। उसके लिए कम से कम दस लाख इलेक्ट्रान वोल्ट (१०,००,००० इवो०) ऊर्जा वाले न्यूट्रान आवश्यक होंगे। इससे कम ऊर्जावाला न्यूट्रान यूरेनियम–२३८ द्वारा केवल अवशोषित हो जायेगा। यूरेनियम का दूसरा समस्थानिक (यूरेनियम–२३५) मन्द तथा ऊर्जाशील दोनों न्यूट्रानो से खण्डित हो सकता है। परन्तु इसकी प्रतिशत मात्रा साधारण यूरेनियम में बहुत कम है (केवल

०.७%)। इसके अतिरिक्त यूरेनियम–२३५ समस्थानिक न्यूट्रान आक्रमण से शत प्रतिशत खण्डित नहीं होतो। यह खण्डन केवल ८५ प्रतिशत क्रियाओं मे सफल होता है। बचे हुए १५ प्रतिशत परमाणु बिना न्यूट्रान स्वतन्त्र किये तत्त्वांतरित हो जाते है।

एक अन्य कठिनाई यह है कि सारे न्यूट्रान जो खण्डन-क्रिया मे स्वतन्त्र होते है अन्य यूरेनियम नाभिक द्वारा अवशोपित नही होते। अवशोपित होने का गुण न्यूट्रान मे कम मात्रा मे होता है। वह बडी मात्रा मे द्रव्य को पार कर सकता है। यदि वह ऊर्जाशील हुआ तब तो अवशोपित होने की सम्भावना और भी कम हो जाती है। इस प्रकार कुछ न्यूट्रान यूरेनियम की समात्रा के बाहर निकल सकते है। इस प्रकार से निकले हुए न्यूट्रान बेकार होते है।

अंत मे एक यह कठिनाई सामने आती है कि यूरेनियम मे सूक्ष्म मात्रा मे अशुद्धियाँ उपस्थित रहती है। ये अशुद्धियाँ न्यूट्रान को बडी मात्रा मे अवशोपित कर लेगी और खण्डन-क्रिया की क्षति करेंगी।

१९३९ मे बहुत-से वैज्ञानिको को यह आशंका थी कि इन सब कठिनाइयों के कारण शृखला क्रिया सफल न हो सकेगी। परन्तु कुछ वैज्ञानिकों को यह विश्वास था कि यदि न्यूट्रान की हानि कम की जा सके तो शृखला क्रिया सम्भव हो जायेगी। उनके विचार के अनुसार खण्डन-क्रिया मे वास्तविक उपयोग मन्द न्यूट्रानो का होगा। यदि कोई ऐसी विधि निकल आये जिससे तीव्र ऊर्जाशील न्यूट्रान मन्द किये जा सकें तो खण्डन की सम्भाव्यता बढ जायेगी क्योकि न्यूट्रान की हानि कम हो जायेगी और उनके अवशोपण का अवसर बढ जायेगा। साथ में यह सुझाव रखा गया कि नियत्रित शृखला को सफल बनाने के लिए यह आवश्यक होगा कि यदि क्रिया मे आवश्यकता मे अधिक न्यूट्रान बने तो उन्हें किसी रूप से क्रिया की परिधि के बाहर कर दिया जाय। इसके लिए किसी-किसी अवशोपक का उपयोग किया जाना लाभकर होगा। अवशोपक वह वस्तु है जो न्यूट्रानो का बिना किसी उत्पन्न क्रिया के अवशोपण कर सके। इस कार्य मे केडमियम तत्त्व का सर्वप्रथम उपयोग

किया गया था। इसका भी ध्यान रखा गया कि आवश्यकता से अधिक न्यूट्रान अवशोषित न हों अन्यथा शृंखला समाप्त हो जायेगी।

इन सब विचारों की पुष्टि के लिए प्रयोग करना आवश्यक था। १९४० तक वैज्ञानिकों को विश्वास हो गया था कि यूरेनिय मखण्डन-क्रिया की शृंखला बनायी जा सकती है। यह शृखला नियमित रूप में, जिसे नियन्त्रित खण्डन कहते हैं, भी चल सकती है। यदि अवस्था अनुकूल हुई तो अनियंत्रित खण्डन भी सम्भव है। इसके द्वारा एक अत्यन्त विनाशकारी बम बनाया जा सकता है जिसका उस समय तक मानव जाति को अनुमान भी न था।

इसी काल मे यह भी ज्ञात हुआ कि यूरेनियम पर मन्द न्यूट्रान की प्रतिक्रिया से प्लूटोनियम-२३९ नामक तत्त्व बनता है। इस तत्त्व की परमाणु संख्या ९४ है और इसके भी वही खण्डन गुण हैं जो यूरेनियम-२३५ के। इस प्रकार वैज्ञानिकों को यह अनुमान हुआ कि खण्डन प्रतिक्रिया में जो यूरेनियम-२३५ व्यय होता है उसके बदले में दूसरा तत्त्व भी मिल सकता है जिसमे उतने ही उपयोगी गुण हैं।

खण्डन-क्रिया का विस्फोट मे उपयोग करने के लिए यह आवश्यक था कि विशुद्ध यूरेनियम-२३५ समस्थानिक अथवा प्लूटोनियम-२३९ का उपयोग किया जाय। यूरेनियम-२३५ को साधारण यूरेनियम से अलग करना बड़ा कठिन कार्य था। यह किसी रासायनिक क्रिया से सम्भव न था। इसके लिए विद्युत्-चुम्बकीय पृथक्करण, वायव्य विसरण आदि भौतिक क्रियाओ का उपयोग करना पड़ा। ये बड़ी लम्बी, समय लेने वाली तथा महँगी क्रियाएँ हैं।

प्लूटोनियम, यूरेनियम खण्डन क्रिया द्वारा उत्पन्न होता है। यह यूरेनियम से भिन्न तत्त्व है। इस कारण इसको यूरेनियम से रासायनिक क्रियाओं द्वारा अलग किया जा सकता है। हम आगे देखेंगे कि परमाणु ऊर्जा के लिए इन दोनों तत्त्वो का उपयोग हुआ है।

द्वितीय महायुद्धकाल मे मित्र राष्ट्रों के अनेक वैज्ञानिक अमेरिका में जमा होकर इस दिशा में कार्य कर रहे थे। उनके अनुसन्धानों के फलस्वरूप

सन् १९४२ में सर्वप्रथम नियन्त्रित शृंखला क्रिया सफल हुई। इस संघटन को परमाणु पुंज[1] का नाम दिया गया। आजकल इसे प्रतिकारी[2] कहते है। नियन्त्रित शृंखला क्रिया सफल होने के कारण प्लूटोनियम तत्व का निर्माण भी सम्भव हो गया और इस प्रकार उनके हाथो में खण्डन-क्रिया के हेतु दो तत्व आ गये। आगे नियन्त्रित शृंखला क्रिया का विवरण दिया जायगा। उसके पश्चात् अनियन्त्रित क्रिया का वर्णन होगा जिसके द्वारा परमाणु बम बना।

नियन्त्रित शृंखला-क्रिया-प्रणाली

परमाणु भट्ठी का विवरण देने से पहले यह आवश्यक है कि उसके सिद्धान्त की ओर ध्यान दिया जाय और यह ज्ञात किया जाय कि उसके लिए किन दशाओ और वस्तुओं की आवश्यकता होती है।

साधारण यूरेनियम मे, २३८ समस्थानिक, २३५ की अपेक्षा १४० अधिक रहता है। यदि न्यूट्रान ऐसे यूरेनियम मे प्रवेश करेंगे तो यह अधिक सम्भव है कि वह २३८ समस्थानिक द्वारा अवशोषित हो जायँ। खण्डन-क्रिया-शृंखला बनने के लिए यह आवश्यक है कि जितने न्यूट्रान खण्डन मे उपयोजित हों, कम से कम उतने ही फिर खण्डन-क्रिया के लिए स्वतन्त्र हो जाये। परन्तु यूरेनियम २३८ की मात्रा अधिक होने के कारण अधिक संख्यक न्यूट्रान इस समस्थानिक के बन्धन में आ जायेंगे और बहुत कम २३५ समस्थानिकों को खण्डित करेंगे।

इस कठिनाई को वैज्ञानिकों ने बडी सुन्दरता से पार किया। यूरेनियम २३८ के द्वारा न्यूट्रान अवशोषण का बहुत अध्ययन हुआ जिससे यह ज्ञात हुआ कि भिन्न-भिन्न वेग वाले न्यूट्रान भिन्न-भिन्न मात्रा में यूरेनियम -२३८ द्वारा अवशोषित होते है। यह समस्थानिक कम ऊर्जा वाले न्यूट्रानों को

1. Atomic pile 2. Reactor

शीघ्रता से अवशोषण करता है। यदि न्यूट्रानों की ऊर्जा पाँच इलेक्ट्रान वोल्ट (५ इवो०) के लगभग हों तो वे बड़ी मात्रा मे यूरेनियम द्वारा अवशोषित होते हैं। इससे कम ऊर्जा वाले न्यूट्रान बहुत कम मात्रा मे यूरेनियम २३८ द्वारा अवशोषित होते हैं। इस कारण यदि न्यूट्रानो को शीघ्रता से पाँच इलेक्ट्रान वोल्ट ऊर्जा मे कम ऊर्जा मे लाया जाय तो वह २३८ समस्थानिक की पकड़ से बच जायेंगे और २३५ समस्थानिक को खण्डित कर सकेंगे। इस सतर्कता द्वारा न्यूट्रान पुनरुत्पादक गुणक (खण्डन क्रिया द्वारा स्वतन्त्र क्रिया मे भाग लेने वाले न्यूट्रानो का अनुपात) प्राकृतिक यूरेनियम के प्रयोगों में १ से अधिक हो सकता है। जब यह गुणांक १ या उससे अधिक होगा तभी शृंखला चलेगी, अन्यथा समाप्त हो जायगी।

इसमे एक कठिन समस्या और थी। खण्डन-क्रिया द्वारा स्वतन्त्र हुए न्यूट्रान बहुत वेगवान् होते है। उनमे बहुत अधिक ऊर्जा रहती है। शृंखला क्रिया को सफल करने के लिए मन्द न्यूट्रानों की आवश्यकता है जिनका वेग २.५ × १०⁵ सेन्टीमीटर प्रति सेकेंड से अधिक न हो अन्यथा वह २३८ समस्थानिक की पकड मे आ जायेंगे। २०° सेन्टीग्रेड ताप पर स्वत. चलने वाले न्यूट्रानो का लगभग यही वेग रहता है। फर्मी ने तीव्र न्यूट्रानों को मन्द करने का उपाय १९३५ में निकाला था। उसने देखा था कि यदि न्यूट्रानो को हल्के तत्वो के बीच से पार कराया जाय तो वह उन तत्वो के नाभिकों से टकराकर मन्द गति मे आ जायेंगे। इस मन्द गति करने वाली विधि को सयत्रण कहते है। और जिस वस्तु द्वारा न्यूट्रानों को मन्द किया जाता है उसे सयन्त्रक कहते है।

तीव्र न्यूट्रानो को मन्द करते समय एक और बात का ध्यान रखना आवश्यक है। जिस समय न्यूट्रानों की गति कम की जायगी उस प्रक्रम मे एक क्षण के लिए वे न्यूट्रान उस गति को भी प्राप्त करेंगे जिसमे वे यूरेनियम २३८ द्वारा सरलता से अवशोषित होते है। उस क्षण वे २३८ समस्थानिक की पकड़ मे आ जायेंगे और खण्डन-कार्य न करेंगे। जिस वेग की अवस्था में न्यूट्रान यूरेनियम—२३८ द्वारा बृहत् मात्रा मे गृहीत होने

हैं उसे अनुनाद पट्ट कहते हैं। इस अनुनादी ग्रहण से न्यूट्रानो को बचाना अत्यावश्यक है।

इस अनुनादी ग्रहण को कम करने के लिए एक विशिष्ट योजना बनायी गयी। इसके द्वारा सारे यूरेनियम को एक स्थान मे न रखा गया। परन्तु यूरेनियम के छोटे छोटे-ढेलों को सयत्र के मध्य मे स्थायी प्रबन्ध द्वारा रखा गया। इस प्रबन्ध के अनेक लाभ थे। सबसे बड़ा लाभ यह था कि खण्डन-क्रिया से उत्पन्न तीव्र न्यूट्रान एक क्षण मे यूरेनियम ढेले से निकल कर सयत्र मे पहुँच जाते है। वहाँ पर वे सयत्र के नाभिकों से टकराकर मन्द हो जाते हैं। इस मन्द होने की सारी क्रिया मे वे यूरेनियम के स्पर्श मे नही आते और २३८ समस्थानिक की पकड मे बच जाते है। तत्पश्चात् मन्द न्यूट्रान इधर-उधर धक्के खाकर किसी यूरेनियम ढेले मे प्रवेश कर खण्डन-क्रिया करते है और नये तीव्र न्यूट्रान स्वतन्त्र हो जाते है। ये तीव्र न्यूट्रान फिर यूरेनियम से निकल कर सयंत्रक द्वारा मन्द हो जाते है और न्यूट्रान चक्र चलता रहता है।

यूरेनियम को सयत्रक के मध्य रखने की कला पर बहुत प्रयोग किये गये है। इन ढेलो को विशेष प्रकार से रखा जाता है और इनकी दूरी भी नापकर ठीक बराबर रखी जाती है। इसको कम या अधिक करने से हानि की सम्भावना रहती है। यदि दूरी कम कर दी जायगी तो न्यूट्रान पूर्णतया मन्द होने से पहले ही यूरेनियम ढेले मे फिर प्रवेश कर सकता है और इस प्रकार २३८ समस्थानिक द्वारा अवशोषित हो जायगा। यदि यह दूरी आवश्यकता से अधिक हुई तो न्यूट्रान बहुत काल तक सयत्रक के नाभिको से टकराता रहेगा और मन्द होने के पश्चात् यूरेनियम ढेले में प्रवेश न करेगा। बहुत काल तक संयत्रक के बीच मे रहने से उसका अवशोषण भी उसी यत्र द्वारा हो सकता है। अन्यथा न्यूट्रान का अनावश्यक क्षय होगा।

साधारण जल अच्छा सयत्रक है। वह तीव्र न्यूट्रानो को शीघ्रता से मन्द कर देता है। परन्तु उसके उपयोग मे कठिनाई यह है कि हाइड्रोजन स्वयं मन्द न्यूट्रानों को समुचित मात्रा में अवशोषित करता है, अत: प्राकृतिक यूरेनियम के साथ साधारण जल का उपयोग नही हो सकता। इसके

विपरीत ड्यूटिरियम जल अथवा भारी जल मन्द न्यूट्रानों को बहुत कम अवशोषित करता है। वह एक अच्छा संयंत्रक सिद्ध हुआ है। इसका उपयोग प्राकृतिक यूरेनियम के साथ सम्भव है और किया भी गया है।

ग्रेफाइट के रूप मे कार्बन का संयंत्रण-कार्य में उपयोग हुआ है। यद्यपि ड्यूटीरियम के बराबर अच्छे गुणवाला नहीं है, परन्तु सस्ता और आसानी से उपलब्ध होने के कारण अधिकतर उपयोगी पाया गया है। अभी तक प्राकृतिक यूरेनियम के जितने प्रतिकारी बने हैं उनमें से ग्रेफाइट का सब से अधिक उपयोग होता रहा है।

प्रतिकारी के उपयोग मे कुछ समय पश्चात् यह देखना आवश्यक हो जाता है कि खण्डन-संख्या एक सीमा से आगे न बढ़े और प्रतिकारी भी उसी गति से चले। समान गति से चलने के लिए यह आवश्यक है कि न्यूट्रानों की सख्या समान रहे। इसका अर्थ यह है कि जितने न्यूट्रान खण्डन-क्रिया करें उतने ही न्यूट्रान अगली शृंखला के लिए तैयार हो जायें। इस कारण उस अवस्था में पुनरुत्पादन गुणक को १ होना चाहिए, न तो इससे कम और न अधिक। यदि उस समय यह गगक १ से कम हो गया तो कुछ समय पश्चात् प्रतिकारी क्रिया रहित हो जायेगा और यदि यह गुणक १ से अधिक हुआ तो प्रतिकारी नियत्रण मे न रहेगा।

इस नियत्रण को सफल करने का उपाय इस प्रकार है। कुछ ऐसे तत्त्व है जो मन्द न्यूट्रानों को बड़ी मात्रा मे अवशोषित करते हैं। इनमें बोरान और कैडियम का विशेष महत्त्व है। यदि इनके दण्ड बनाये जायें और इन्हे प्रतिकारी मे प्रविष्ट किया जा सके तो यह सरलता से न्यूट्रान अवशोषित कर लेंगे। यदि प्रतिक्रिया मे आवश्यकता से अधिक न्यूट्रान जन्म ले रहे है तो दण्डो को प्रतिकारी में हलके से डाला जाय। इनके प्रवेश की मात्रा को घटाया या बढ़ाया जा सकता है जिससे आवश्यकतानुसार न्यूट्रानो को अवशोषित किया जाय। इस प्रकार प्रतिकारी न्यूट्रानो की सख्या पर नियत्रण रखा जाता है। इन दण्डो की प्रतिकारी मे प्रवेश करने की मात्रा को हलकी मशीन द्वारा नियंत्रित किया जाता है। सारे दण्डों को पूरी प्रकार

प्रतिकारी में प्रविष्ट करने पर इतने अधिक न्यूट्रान अवशोषित हो जाते है कि उसकी क्रिया समाप्त हो जाती है। इसलिए इस उपकरण द्वारा प्रतिकारी को बन्द कर सकते हैं।

परमाणु पुंज अथवा प्रतिकारी मे न्यूट्रानो का क्षय हो सकता है जो कभी-कभी हानिकारक सिद्ध हो सकता है। यदि प्रतिकारी को उचित क्षमता से चलाना है तो इन हानियों की मात्रा कम से कम होनी चाहिए। प्रतिकारी मे न्यूट्रान टकराहट करते है। अपने तीव्र वेग और इन टकराहटों के कारण ये प्रतिकारी के बाहर निकल सकते है। इस प्रकार निकले हुए न्यूट्रान फिर काम मे नही आ सकते। इस प्रकार से होने वाले क्षय का बहुत कम किया जाना आवश्यक है। इसके लिए प्रतिकारी क्रियाशील अंग को प्रत्यावर्तक से घेरना चाहिए। इस प्रत्यावर्तक का यह कार्य होगा कि वह बाहर निकलने वाले न्यूट्रानों से टकराकर उन्हे अन्दर की ओर लौटा दे। जो न्यूट्रान बाहर की दिशा को अग्रसर हो रहे थे वे अन्दर लौट जायेंगे और खण्डन-क्रिया मे भाग ले सकेंगे। प्रत्यावर्तक के उपयोग से प्रतिकारी के क्रियाशील अंगो मे बचत हो सकती है और यूरेनियम की आवश्यक मात्रा मे कमी हो सकती है। मन्द न्यूट्रानों के प्रतिकार मे ग्रेफाइट रूपी कार्बन का प्रत्यावर्तक के रूप मे सफलता से उपयोग हुआ है।

प्रत्यावर्तक का एक दूसरा आवश्यक उपयोग भी है। परमाणु भट्ठी से प्रचुर मात्रा मे न्यूट्रान एवं गामा-विकिरण स्वतन्त्र होते है। ये दोनों ही मनुष्य तथा अन्य जीवो के लिए अत्यन्त हानिकारक है। परमाणु-विज्ञान के कार्यकर्ताओं के लिए इनसे बचना बहुत आवश्यक है। प्रत्यावर्तक द्वारा न्यूट्रान और गामा-विकिरण की बाहर निकलने की मात्रा मे बहुत कमी हो जाती है। ये मनुष्य को हानिकारक विकिरणो से बचाते हैं।

संसार की सर्वप्रथम परमाणु भट्ठी

सर्वप्रथम बनी परमाणु भट्ठी में प्राकृतिक यूरेनियम का ऊर्जा पदार्थ के रूप में उपयोग किया गया था। इस उपकरण को फर्मी के नेतृत्व मे

दिसम्बर, १९४२ मे बनाया गया और उसने इसका नामकरण भी किया। उसी के अनुसार इसको परमाणु पुज कहा गया। यह भट्ठी शिकागो विश्वविद्यालय मे बनायी गयी थी और इसमे ,छ. टन विशुद्ध यूरेनियम का उपयोग किया गया था।

इतना यूरेनियम पूरी भट्ठी के लिए पर्याप्त न था। इस कारण इसके साथ कुछ और यूरेनियम आक्साइड का भी उपयोग किया गया था। प्राकृतिक यूरेनियम मे यूरेनियम –२३५ की मात्रा केवल ०.७ प्रतिशत है। बचे २३८ समस्थानिक द्वारा न्यूट्रान अवशोषित हो जाते हैं, यह पाठक पहले ही जान चुके हैं। अतएव इस भट्ठी को सफल बनाने के लिए न्यूट्रानों का क्षय सब ओर से रोकना आवश्यक था, अन्यथा पुनरुत्पादन गुणक १ से कम हो जाने की आशंका थी। इस अवस्था में प्रतिक्रिया की शृंखला न बन सकती थी। शिकागो विश्वविद्यालय मे हुए प्रयोगों से पहले १९४१ में अमेरिका के कोलंबिया विश्वविद्यालय में खण्डन सम्बन्धी कुछ प्रयोग किये गये थे और भट्ठी बनाने का प्रयत्न हुआ था। परन्तु उन प्रयोगों में पुनरुत्पादक गुणक एक से कम (०.८७) आया जिसके कारण भट्ठी असफल रही।

कोलबिया प्रयोगों की असफलता के कारणों पर विचार किया गया। यह पता चला कि उसमे उपयुक्त हुए यूरेनियम और ग्रेफाइट दोनो अशुद्ध थे। यद्यपि उन दोनों वस्तुओ मे उपस्थित अशुद्धियां अधिक मात्रा में न थी, पर बहुत-सी अशुद्धियां ऐसी होती हैं कि वे बहुत न्यूनमात्रा मे भी हानिकारक हो सकती हैं। कुछ ऐसी वस्तुएँ हैं कि जिनका एक भाग भी यदि यूरेनियम अथवा ग्रेफाइट के दस लाख भाग मे मिला हो तो वह इतने न्यूट्रान अवशोषित कर लेगी कि भट्ठी ही असफल हो जाय।

अतएव सफल परमाणु भट्ठी बनाने के लिए अत्यधिक शुद्ध वस्तुओ का प्रयोग करना चाहिए था। पर इतना शुद्ध यूरेनियम उस समय तक प्राप्य न था। विशेष प्रयोगशालाओ मे नयी विधियों द्वारा पूर्णतया शुद्ध प्रायोगिक वस्तुएँ बनायी गयी जिसके फलस्वरूप दिसम्बर १९४२ में सफल परमाणु भट्ठी का निर्माण हो सका।

इस भट्टी में ग्रेफाइट की बडी बड़ी ईंटे बनायी गयी और इन ईटो की पर्तें एक के ऊपर एक करके रखी गयीं। एकान्तर पर्तो के बीच मे यूरेनियम अथवा यूरेनियम आक्साइड के टुकड़े जमा किये गये। सारी सरचना पर्तो को एक दूसरे के ऊपर रखकर बनी थी। इस कारण इनको पुज कहा गया। वैज्ञानिको को ऐसा विश्वास था कि जिस समय पुज बडा होकर क्रातिक आकार का हो जायगा उसी समय वह छिन्न न्यूट्रानों आदि से स्वतः आरम्भ हो जायगा और खण्डन शृखला बन जायगी। इस कारण इस पुंज को प्रारम्भ से नियत्रण मे रखा गया था जिससे स्वत प्रतिक्रिया शृखला न बन पाये। इस नियत्रण के लिए केडमियम के कुछ दण्ड पुज के अन्दर प्रारम्भ से ही पूरी प्रकार प्रविष्ट कर दिये गये थे। यह सावधानी बडी लाभकारी रही क्योंकि पुज का सक्रान्तिक आकार वैज्ञानिको के अनुमान से पहले ही पहुँच गया। यदि केडमियम के दण्ड पूरी प्रकार प्रविष्ट न होते तो प्रतिक्रिया शृखला अनुमान से पहले बन जाती और उस समय उसका नियत्रण न हो पाता।

पूरे सरचन के बनने मे ग्रेफाइट की छप्पन (५६) पर्तें लगी थी। तत्पश्चात् केडमियम दण्डों को धीरे-धीरे बाहर निकाला गया। इसके द्वारा न्यूट्रान धीरे-धीरे अधिक मात्रा मे केडमियम की पकड से बचने लगे और खण्डन-क्रिया मे भाग लेने लगे। न्यूट्रान की मात्रा का अनुमान विशेष गणको द्वारा किया गया था। दिनांक २ दिसम्बर, १९४२ को शिकागो विश्वविद्यालय मे फुटबाल मैदान के पाताल खण्ड मे बनाया हुआ पुज क्रान्तिक हो गया। इसका अर्थ हुआ कि उस उपकरण मे खण्डन शृखला सचरित हो रही थी। यह पहला अवसर था जब मानव ने स्वचालित खण्डन शृखला क्रिया का सूत्रपात किया।

इस पुज को पहले ०.५ वाट की शक्ति पर चलाया गया था, परन्तु शीघ्र ही उसे २०० वाट की शक्ति पर लाया गया। इस संरचना का गुणक १ ०००६ था जो एक से अधिक होने के कारण खण्डन शृखला प्रतिक्रिया को चला सकता था। परन्तु यह गुणक उस समय था जब सारे केडमियम

दण्ड पूर्णतया निकाल दिये जाते और न्यूट्रान लेशमात्र भी अवशोषित न किये जाते। परन्तु दण्ड का आंशिक वेधन कर गुणक को १.०००० पर रखा गया था।

पुंज की शक्ति और भी बढ़ायी जा सकती थी, परन्तु ऐसा करने से विकिरण द्वारा कार्यकर्ताओं को हानि पहुँच सकती थी। १९४३ में इस पुंज को उखाड़ कर शिकागो शहर के बाहर आर्गान राष्ट्रीय प्रयोगशाला में जमाया गया और साथ में कार्यकर्ताओं को विकिरण से बचाने का समुचित प्रबन्ध भी किया गया।

इसके पश्चात् अमेरिका के टेनेस्सी प्रदेश के ओकरिज नगर में बड़ी परमाणु भट्ठी बनायी गयी। इसके बनाने के दो उद्देश्य थे। एक तो खण्डन-क्रिया में उपयोग और दूसरा प्लूटोनियम (परमाणु संख्या ९४) तत्व का कृत्रिम निर्माण। ओकरिज के प्रतिकारी में ग्रेफाइट ईंटों को घन के रूप में सजाया गया। पाठकों को इस प्रतिकारी के आकार-प्रकार का अनुमान चित्र २६ में हो सकता है। ग्रेफाइट ईंटों से बने घन की एक भुजा २४ फुट है। न्यूट्रानों को अन्दर वापस करने के लिए ग्रेफाइट के प्रत्यावर्तक का उपयोग किया गया था। ग्रेफाइट घन में नियत स्थानों पर गोल छिद्र खोदे गये जिनमें यूरेनियम के दण्ड अन्दर डाले जा सकते थे। यूरेनियम को आक्सीकरण से बचाने के लिए उनके दण्डों को एल्युमिनियम के खोल पहना दिये गये थे। ग्रेफाइट घन में बनाये हुए छिद्रों का व्यास यूरेनियम के दण्डों के व्यास से थोड़ा-सा बड़ा रखा गया था। इन दोनों के बीच के स्थान में होकर वायु का आदान-प्रदान किया जा सकता था। वायु का प्रवाह प्रतिकारी के लिए आवश्यक था। इसका कारण यह था कि प्रतिकारी के क्रियाशील होने पर उसके अन्दर बड़ी मात्रा में ऊष्मा का उदय होता है। यदि इस ऊष्मा को निकालने का प्रबन्ध न किया जाय तो वह यूरेनियम दण्डों को पिघला कर धारा तक बना देगी। इन छिद्रों के बीच से वायु को धौंकने का प्रबन्ध रहता है जिससे यूरेनियम दण्डों का ताप २४५° से नीचे रहे।

इस शृंखला प्रतिक्रिया का नियंत्रण बोरान के दण्डों द्वारा होता है।
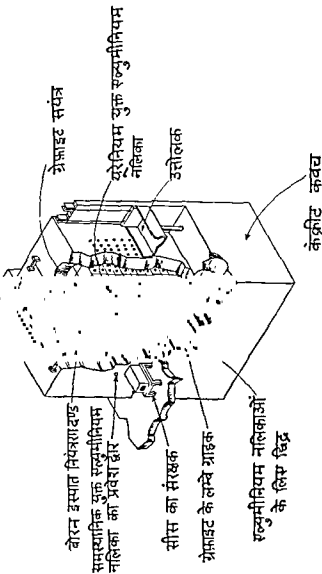
चित्र संख्या २६—परमाणविक प्रतिकारी

साथ में कुछ और दण्ड लगे रहते हैं जो दुर्घटना या अन्य आवश्यकता पड़ने पर स्वतः प्रतिकारी मे प्रवेश कर जाते हैं जिससे वह तुरन्त क्रिया रहित हो सकता है। कार्यकर्ताओ को हानि से बचाने के लिए सात फुट मोटे कंकरीट कवच से प्रतिकारी को घेरा गया है जिससे हानिकारक विकिरण उनके पास तक न पहुँच सके।

ओकरिज का प्रतिकारी सत्रह वर्षो से सफलतापूर्वक कार्य करता चला आ रहा है। आजकल उसका उपयोग मूलभूत अनुसन्धान के लिए और कृत्रिम रेडियधर्मी तत्वों के बनाने के लिए होता है। इसकी शीतन-पद्धति बहुत अच्छी है जिसके कारण यह अड़तीस सौ किलोवाट (३८०० किवा०) की शक्ति तक कार्य कर सकता है।

प्रतिकारी के कुछ समय कार्य करने के पश्चात् यूरेनियम दण्डों को बदलना पड़ता है। यूरेनियम-२३५ खण्डन के फलस्वरूप खण्डन पदार्थ जमा होते रहते हैं। कुछ समय पश्चात् इनकी मात्रा इतनी अधिक हो जाती है कि ये खण्डन-क्रिया में रोक डालते हैं और यह आवश्यक हो जाता है कि इन यूरेनियम दण्डों को निकाल कर बदला जाय। निकाले हुए दण्डो पर रासायनिक क्रिया की जाती है जिससे उसमें से निर्मित प्लूटोनियम निकाल लिया जाय। साथ में खण्डन-क्रिया द्वारा उत्पन्न तत्वों को अलग करके बचे शुद्ध यूरेनियम को आगे के लिए रख लिया जाता है।

भिन्न-भिन्न तत्वों को अलग करने की रासायनिक विधियाँ सरल हैं, परन्तु खण्डन-क्रिया द्वारा उत्पन्न तत्त्व रेडियधर्मी होते हैं। इनकी रेडियधर्मिता कार्यकर्ताओं के लिए बडी हानिकारक है। इस कारण अपने बचाव के लिए ये सारी रासायनिक क्रियाएँ दूरस्थ नियन्त्रण द्वारा दूसरे कमरों से की जाती हैं। कार्यकर्ता दूर अलग कमरे मे रहते हैं और दूरस्थ नियन्त्रण से क्रियाओं का नियन्त्रण करते रहते हैं। वह उन पदार्थों के सामने नही आते और मोटे पारदर्शी काच अथवा प्रत्यावर्ती दर्पणो द्वारा क्रियाओं की दशाएँ देखते रहते हैं।

अनियन्त्रित शृंखला प्रतिक्रिया

परमाणु भट्ठी में शृखला प्रतिक्रिया नियमित रूप से चलती है। उसमे न्यूट्रान की मात्रा को एक सीमा पर रखते है। उस सीमा पर उनका गुणक १ रखा जाता है। परन्तु शृखला प्रतिक्रिया के कई रूप हो सकते है। प्रतिक्रिया-प्रणाली उसकी सरचना और उसके उपयोग पर निर्भर है।

परमाणु बम मे इस प्रतिक्रिया को अनियमित रखा जाता है। इस कारण उसका रूप, बनावट आदि प्रतिकारी से बिलकुल भिन्न है। युद्ध का अस्त्र होने के नाते उसके द्वारा बड़े से बड़ा विस्फोट करना आवश्यक था जिसके कारण उसमे बहुत कम समय मे ऊर्जा उदय होना चाहिए। यह परमाणु भट्ठी के बिलकुल विपरीत है।

किसी विस्फोट के लिए यह आवश्यक है कि बहुत कम समय में बड़ी मात्रा में ऊर्जा स्वतन्त्र हो। जितने कम समय और स्थान मे जितनी अधिक ऊर्जा उत्पन्न होगी उतना ही बड़ा विस्फोट होगा। खण्डनीय वस्तुओ के द्वारा विस्फोट उत्पन्न करने के लिए कुछ बाते आवश्यक है। हम यह पहले जान चुके है कि यूरेनियम–२३५ खण्डनीय पदार्थ है। यूरेनियम–२३३ भी खण्डन-क्रिया मे उपयोगी है, परन्तु यह समस्थानिक प्राकृतिक अवस्था में नही पाया जाता। यह कृत्रिम क्रियाओ द्वारा थोरियम–२३२ से बन सकता है। इसी प्रकार प्लूटोनियम–२३९ यूरेनियम–२३८ से बनता है और यह भी एक ऊर्जा तत्व है। इसलिए तीन पदार्थो (यूरेनियम–२३५, यूरेनियम–२३३ और प्लूटोनियम–२३९) का परमाणु बम मे उपयोग हो सकता है और कदाचित् हुआ भी है। किसी शृखला प्रतिक्रिया को चलाने के लिए ऊर्जा तत्त्व की एक विशेष संमात्रा की आवश्यकता होती है। उस समात्रा से कम तत्त्व द्वारा शृखला प्रतिक्रिया का चलना असम्भव है। इस विशेष समात्रा को सक्रान्तिक समात्रा कहते है। सक्रान्तिक समात्रा का ज्ञान परमाणु भट्टी और परमाणु बम दोनो के लिए आवश्यक है। इस संमात्रा से अधिक मात्रा को पार सक्रान्तिक संमात्रा कहते है। ज्योही खण्डन तत्त्व की संक्रान्तिक संमात्रा हो जायेगी उसी समय शृंखला प्रतिक्रिया प्रारम्भ

हो जायगी। उससे कम मात्रा में शृंखला न चल पायेगी। इसी कारण परमाणु बम में यूरेनियम–२३५ अथवा २३३ या प्लूटोनियम–२३९ की विमा संक्रान्तिक संमात्रा से अधिक होनी चाहिए।

परमाणु भट्ठी मे मन्द न्यूट्रानों का उपयोग होता है, क्योंकि उसमे क्रिया को नियमित रूप से चलाना होता है। परमाणु बम मे अनियमित खण्डन होता है। इस अनियमित खण्डन का एक सेकेण्ड के बहुत ही छोटे अंश मे पूर्ण होना आवश्यक है। इस कारण उसमे मन्द न्यूट्रान अनावश्यक होंगे और तीव्र न्यूट्रान उपयोगी रहेगे। मन्द न्यूट्रानो द्वारा हुआ विस्फोट बहुत हलका होगा। उस क्रिया से ऊष्मा उत्पन्न होगी जिसके कारण यूरेनियम छोटे-छोटे टुकड़ों मे शीघ्र टूट जायगा। ये टुकड़े उप-संक्रान्तिक आकार के होंगे और खण्डन शृंखला को चलाने में असमर्थ होंगे। यदि यह प्रतिक्रिया बन्द स्थान में हुई तो अधिक से अधिक एक हलका विस्फोट जन्मेगा।

परमाणु बम मे तीव्र न्यूट्रानो के द्वारा शृंखला का निर्वाह होगा। इस कारण उसमें कोई ऐसी वस्तु न होनी चाहिए जो न्यूट्रानों के वेग को घटाये। संयन्त्र की परमाणु बम मे कोई आवश्यकता नहीं रहती और इस कारण खण्डन तत्त्व शुद्ध अवस्था में रहता है। उसमें कोई न्यूट्रान को अवशोषण करनेवाली अशुद्धियाँ न होगी और इसके फलस्वरूप खण्डन से उत्पन्न सारे न्यूट्रान खण्डन प्रतिक्रिया में फिर काम आयेगे। इस प्रकार गुणक १ से अधिक रहेगा।

वायुमण्डल में छिन्न न्यूट्रान सदा उपस्थित रहते हैं क्योंकि अन्तरिक्ष विकिरणों के द्वारा कुछ न्यूट्रान सर्वदा उत्पन्न होते रहते है। इस कारण संक्रान्तिक संमात्रा से अधिक मात्रा के खण्डनीय तत्त्व मे शृंखला प्रतिक्रिया को रोका नही जा सकता। परमाणु बम में औपयोगिक खण्डनीय तत्त्व को पहले से पारसक्रान्तिक संमात्रा में इसी कारण नही रखते। विस्फोट होने के पहले उसे दो या उससे अधिक भागों में रखते है। प्रत्येक भाग संक्रान्तिक समात्रा से छोटा होता है। विस्फोट उत्पन्न करने के समय प्रत्येक भाग बड़ी तीव्रता से एक साथ लाया जाता है। इस कार्य में अतितीव्रता होनी चाहिए अन्यथा हल्का विस्फोट उत्पन्न होगा। कारण यह है कि अच्छा विस्फोट

तभी होगा जब सारे भागों के सट जाने पर प्रतिक्रिया प्रारम्भ हो। यदि ये शीघ्रता से न सटेंगे तो छिन्न न्यूट्रान द्वारा प्रतिक्रिया इनके सटने से पूर्व आरम्भ हो जायगी और उत्पन्न विस्फोट द्वारा सारे भाग दूर-दूर टूटकर गिर जायेंगे। इस प्रकार का विस्फोट असामयिक और हल्का ही रहेगा।

भागों के सटाने के अनेक उपाय निकाले गये है। इनकी विस्तृत सूचना तो गुप्त रखी गयी है, परन्तु ऐसा ज्ञान होता है कि एक भाग को रासायनिक विस्फोट द्वारा दूसरे भाग पर लक्ष्य किया जाता है जिससे बहुत अल्प समय मे वे जुड जायँ।

परमाणु बम मे प्रत्यावर्तक का भी उपयोग होता है। इनके प्रयोग से न्यूट्रानो को बाहर निकलने से रोका जाता है। प्रत्यावर्तक को न तो स्वय न्यूट्रान अवशोषण करना चाहिए और न उनको मन्द बनाना चाहिए। इस कारण परमाणु बम मे भारी तत्त्व प्रत्यावर्तक के लिए उपयुक्त होते हैं। ऊँचे परमाणु-भार और घनत्व वाले तत्त्व न तो अधिक मात्रा मे न्यूट्रान अवशोषण करते हैं और न उन्हे मन्द करते हैं। प्रत्यावर्तक के रूप मे भारी तत्त्व के प्रयोग का एक और लाभ है। उनके ऊँचे घनत्व के कारण विस्फोट पदार्थ के फैलने मे कठिनाई होती है और विस्फोट कुछ समय के लिए बन्द रहता है जिसके कारण उनकी उत्तेजना बढ जाती है।

परमाणु बम मे सक्रान्तिक आकार से कम यूरेनियम अथवा प्लूटोनियम का उपयोग नही हो सकता। इस कारण एक छोटा बम बनाना सम्भव नही है। प्रथम परमाणु बम का विस्फोट अमेरिका के न्यू मेक्सिको प्रदेश मे हुआ था। उसके पश्चात् दो बम जापान के हिरोशिमा और नागासाकी नगरो पर गिराये गये। इन बमो का तेज बीस सहस्र (२०,०००) ट्राइ नाइट्रो टालूइन अथवा टी० एन० टी० (T N T) के समान था। तत्पश्चात् कुछ बमो का प्रयोग हवाई विस्फोट, सामुद्रिक विस्फोट और अन्तस्थलीय विस्फोट मे हुआ है।

अध्याय १२

परमाणु ऊर्जा के उपयोग—१

प्रतिकारी

पिछले अध्याय में परमाणु भट्ठी का वर्णन किया गया है। यह प्रथम प्रकार का प्रतिकारी था जिसमे प्राकृतिक यूरेनियम का उपयोग हुआ था। इसके बाद शीघ्र ही अनेक प्रकार के प्रतिकारी बन गये और बनते जा रहे हैं। इन प्रतिकारियो का अनेक प्रकार से वर्गीकरण किया जा सकता है। एक तो हम उनके ईंधन की भौतिक अवस्था के आधार पर उनका वर्गीकरण कर सकते हैं। इस वर्गीकरण मे दो प्रकार के प्रतिकारी है—(१) विषमाग प्रतिकारी तथा (२) समाग प्रतिकारी। फर्मी का परमाणु पुंज और ओकरिज की परमाणु भट्ठी विषमांग रूप की है। इस प्रकार के प्रतिकारी में ईंधन, सयंत्र आदि अलग-अलग रहते हैं। (२) समांग प्रतिकारी में ईंधन विलयन रूप में रहता है।

दूसरा वर्गीकरण, जो सयत्र पर निर्भर है, ओकरिज मे ग्रेफाइट सयत्र प्रतिकारी है। प्रतिकारी मे भारी जल का भी उपयोग होता है। ऐसे प्रतिकारियों को हम ड्यूरीयम आक्साइड सयत्र प्रतिकारी कह सकते हैं। तीसरे प्रकार के प्रतिकारी में साधारणतः जल सयंत्रक के रूप में काम आता है। इसे हम जल संयत्र प्रतिकारी कह सकते हैं।

तीसरे प्रकार का वर्गीकरण न्यूट्रान की दशा पर निर्भर होता है। इसके अनुसार तीन प्रकार के प्रतिकारी होते हैं। एक वे जो मन्द न्यूट्रान का प्रयोग करते हैं। दूसरे प्रकार के प्रतिकारी मध्यम वेग के न्यूट्रान का

उपयोग करते है। तीसरी श्रेणी के प्रतिकारी तीव्र न्यूट्रानो का उपयोग करते हैं।

चौथे प्रकार का वर्गीकरण प्रतिकारियो की उपयोगिता पर किया जाता है। इसी वर्गीकरण के अनुसार इस अध्याय मे प्रतिकारी का वर्णन किया जायगा। इनके अनुसार तीन मुख्य रूप के प्रतिकारी होते है। जो निम्न हैं—

१. अनुसन्धान और विकास प्रतिकारी।
२. खण्डनीय पदार्थ उत्पादक प्रतिकारी।
३. ऊर्जा उपयोगी प्रतिकारी।

अनुसंधान और विकास प्रतिकारी

अनुसन्धान-कार्य के प्रतिकारी न्यूट्रान के बडे उपयोगी स्रोत होते है। इन न्यूट्रानो का भौतिक विज्ञान के प्रयोगो आदि मे बडा उपयोग हुआ है। प्रतिकारी द्वारा विकिरणो के गुणों की देखभाल की जाती है। इसके साथ-साथ इनके द्वारा प्रतिकारी के सिद्धान्त, न्यूट्रानों का वितरण, न्यूट्रानो का द्रव पर प्रभाव और कवच पदार्थो का अध्ययन भी होता है। आवश्यकता पडने पर न्यूट्रान का दण्ड प्रतिकारी उपकरण के बाहर निकाल कर उसके द्वारा और अनुसन्धान किये जाते है। ये न्यूट्रान आवश्यकतानुसार तीव्र अथवा मन्द स्थिति मे लिये जाते है। न्यूट्रान के दण्ड द्वारा अनेक जीव-वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसन्धान सम्भव हो सके है।

अनुसन्धान प्रतिकारी द्वारा अनेक रेडियधर्मी समस्थानिक बनाये जा सकते है। आजकल इसी विधि द्वारा अधिकतर स्थिर तत्वों के अस्थिर रेडियधर्मी समस्थानिक बनते है। यह समस्थानिक स्थिर तत्वों पर न्यूट्रान के आक्रमण के फलस्वरूप तैयार किये गये है। न्यूट्रानों का प्रतिकारी से अधिक घना कोई स्रोत नही ज्ञात है। इसी कारण तत्वातरण प्रतिक्रियाओं में इन प्रतिकारियो का महत्वपूर्ण हाथ है। इस क्रिया द्वारा बने समस्थानिक

चित्र संख्या २७—परमाणु-प्रतिकारी द्वारा रेडिय समस्थानिकों का निर्माण
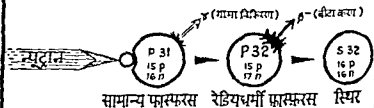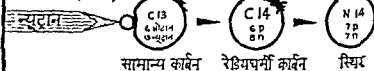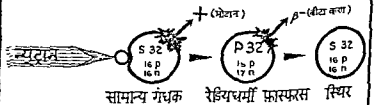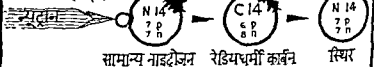
औद्योगिक, चिकित्सा-सम्बन्धी वैज्ञानिक तथा कृषि-प्रयोगों में अति सफलता-पूर्वक काम आये हैं।

मुख्यतः अनुसंधान प्रतिकारी को हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं। पहले प्रकार के प्रतिकारी प्राकृतिक यूरेनियम का ईंधन के रूप में उपयोग करते हैं। दूसरे प्रकार के प्रतिकारी में यूरेनियम जिसमें U–२३५ समस्थानिक का प्रतिशत अधिक होता है (समृद्ध यूरेनियम) काम में आता है। इसके पश्चात् इसके और भी विभाजन हो सकते हैं। सयत्रक के अनुसार इनके चार उपविभाग किये गये हैं।

१. ग्रेफाइट प्रतिकारी जिनमें ग्रेफाइट द्वारा सयत्रण होता है।

२. ड्यूटीरियम जल अथवा भारी जल प्रतिकारी जिनमें ड्यूटीरियम आक्साइड का उपयोग होता है।

३. सामान्य जल जिनमें साधारण जल का सयत्रक के रूप में उपयोग होता है।

४. समाग प्रतिकारी जिनमें ईंधन सयत्रक में विलयित रहता है।

ग्रेफाइट प्रतिकारी

इनमें ग्रेफाइट द्वारा न्यूट्रानों को मन्द किया जाता है। शिकागो विश्वविद्यालय में फर्मी द्वारा निर्मित प्रतिकारी तथा ओकरिज का परमाणु प्रतिकारी इसी श्रेणी में आते है। ब्रुकहेवन राष्ट्रीय प्रयोगशाला में एक और इसी प्रकार का विशाल प्रतिकारी बना है। सोवियत सघ तथा ग्रेट ब्रिटेन में भी ऐसे प्रतिकारी बनाये गये हैं। इस श्रेणी के प्रतिकारी का वर्णन पिछले अध्याय में किया जा चुका है।

ग्रेफाइट के प्राकृतिक यूरेनियम प्रतिकारी का आकार बड़ा होता है। इस कारण इसमें लागत भी अधिक होती है। इसमें लगभग पचास (५०) टन यूरेनियम और पाँच सौ (५००) टन ग्रेफाइट लगता है। इस प्रतिकारी में उदित ऊष्मा को वायु के प्रवाह द्वारा बाहर निकाला जाता है।

बड़े आकार के प्रतिकारी के कुछ लाभ भी है। इसके द्वारा अधिक

अनुसधान-कार्य सम्भव हो जाते हैं। परन्तु आजकल समृद्ध यूरेनियम प्राप्त होने के कारण ऐसे छोटे प्रतिकारी बनाना सम्भव हो गया है जिनमें लागत कम लगती है।

१९५९ के फरवरी मास में एक नये प्रकार का ग्रेफाइट प्रतिकारी तैयार हुआ जो अमेरिका के इडाहो राज्य में अनुसधान और परीक्षण-कार्य करने के लिए उपयोग मे आ रहा है। यह छोटे आकार का प्रतिकारी है जिसमे थोड़े समय मे ही अधिक परमाणु खण्डित होते हैं। इसके अन्दर उच्च ऊष्मा का उदय होता है और इस ऊष्मा के फलस्वरूप वस्तुएँ द्रव्य मे परिणत की जा सकती हैं। इस प्रकार उनकी जाँच भी भली-भाँति हो सकती है। इस उपकरण के अन्दर ३३७१ यूरेनियम आक्साइड के टुकड़े ग्रेफाइट के अन्दर समान रीति से फैले रहते हैं।

ड्यूटीरियम जल के प्रतिकारी

सर्वप्रथम ड्यूटीरियम जल का सयंत्रक के रूप में प्रयोग १९४४ मे अमेरिका की ओरेगन राष्ट्रीय प्रयोगशाला में हुआ था। इस प्रतिकारी में भी प्रथम ग्रेफाइट पुज की भाँति प्राकृतिक यूरेनियम का उपयोग हुआ था। प्रतिकारी को ठडा करने का प्रबन्ध ड्यूटीरियम जल द्वारा किया गया था। ड्यूटीरियम जल को प्रतिकारी के बाहर वृत्ताकार मे प्रवाहित किया गया जहाँ उसको ठडा किया जाता था। कुछ समय पश्चात् इस प्रतिकारी को अपदस्थ कर दिया गया और इसके स्थान पर दूसरे नये प्रतिकारी की स्थापना हुई।

नये प्रतिकारी ने १९५४ मे कार्य करना प्रारम्भ किया। इसमें प्राकृतिक यूरेनियम के स्थान पर समृद्ध यूरेनियम (जिसमे यूरेनियम–२३५ की मात्रा प्राकृतिक यूरेनियम से अधिक रहती है) का उपयोग हुआ। इसमें संयंत्रण और प्रशीतन दोनो ही कार्य ड्यूटीरियम जल अथवा भारी जल द्वारा होते हैं।

ईंधन के स्थान पर यूरेनियम एल्यूमीनियम संकर की पट्टिकाओं को

जोड़कर एक आयताकार नली के अन्दर रखते है। ऐसी अनेक नलियां प्रतिकारी के मध्य भाग में व्यवस्थित रखी जाती है जिनके कारण मध्य भाग का आकार एक ऐसे वेलन की भाँति हो जाता है जिसका व्यास दो फुट और ऊँचाई भी दो फुट हो। प्रत्येक नली को पृथक् रखा तथा निकाला जाता है, क्योंकि इससे उनके विस्थापन मे सुविधा रहती है। प्रतिकारी मे ऐसी बारह नलियाँ रखी जाने का प्रवन्ध है। ये पाँच समानान्तर पक्तियो मे रखी जाती है। इन पक्तियो के मध्य मे चार नियंत्रण दण्ड रखे रहते हैं। ये दण्ड वड़ी मात्रा में न्यूट्रान का अवशोपण कर सकते हैं। इस कारण इन्हे सुरक्षा-दण्ड भी कहते है। एक पाँचवाँ दण्ड ईंधन संगठन के वाहर, परन्तु निकट, लगाया गया है जो बहुत सूक्ष्म इकाई मात्रा में निकाला या डाला जा सकता है। इसे नियामक दण्ड भी कहते है।

प्रत्येक नली के अन्दर भारी जल नीचे की ओर से प्रवेश कर ऊपर के मार्ग से निकल जाता है। यह ईंधन सघट्टन को ठडा करने के लिए उपयोगी होता है। इसके साथ ही यह सघट्टन भारी जल को टकी में डूवा रहता है। इस प्रकार १५ प्रतिशत जल हूर ईंधन नली के अन्दर घूमता है और बाकी टंकी में रहता है। भारी जल की टकी के नीचे की ओर से एक नली द्वारा बाहर निकालने का प्रवन्ध रहता है जिससे वह प्राप्त ऊष्मा बाहर के सामान्य जल को दे सके।

भारी जल के भाग मे अनेक नलियाँ प्रवेश करती है। इन नलियों द्वारा अनेक वस्तुएँ मध्य भाग के अन्दर प्रयोगो के लिए रखी जा सकती हैं। इस भाग मे प्रचुर मात्रा में न्यूट्रानों की उपलब्धि होती है। भारी जल की टकी के चारो ओर २ फुट मोटी ग्रेफाइट की तह रहती है। इस स्थान को भी अनुसंधान-कार्य मे उपयोजित करते है। ग्रेफाइट के चारो ओर भीमकाय कवच द्वारा न्यूट्रान और गामा-विकिरण अवशोषित होते है। इस कवच मे प्रथम वोरान कार्वाइड की तह और तत्पश्चात् सीसे की तह लगायी जाती है। वोरान कार्वाइड द्वारा न्यूट्रान और सीसे द्वारा गामा

विकिरण अवशोषित होते हैं। सीसे की तह के पश्चात् ५६ इंच मोटा विशेष कंक्रीट का कवच लगा रहता है। इस प्रकार पूरे कवच की मोटाई ५ फुट होती है। बाहर से प्रतिकारी का आकार ऐसे अष्टमुखी प्रिज्म की भाँति होता है जो बीस फुट चौड़ा और साढ़े तेरह फुट ऊँचा हो।

भारी जल को ठंडा करने का विशाल प्रबन्ध है। पहले इस जल को अकलुष इस्पात की बनी नली द्वारा पाताल खण्ड में ले जाते हैं। सात सहस्र (७०००) किलोग्राम से अधिक भारी जल इसी नली द्वारा जाता है। इस जल की नली को ठंडे जल के बीच से प्रवाहित किया जाता है। साथ में आयन विनिमय रेजिन द्वारा इसकी शुद्धि की जाती है। यह शुद्धि आवश्यक है क्योंकि खण्डन-प्रतिक्रिया में अनेक वेगवान् कण इस जल में प्रवेश करते रहते हैं।

ड्यूटीरियम प्रतिकारी ग्रेफाइट भट्ठी द्वारा नियंत्रणार्थ सुलभ एवं उत्तम होते हैं। हाँ, इनको बन्द करने मे ग्रेफाइट प्रतिकारी की अपेक्षा समय अधिक लगता है। इसका कारण यह है कि ड्यूटीरियम तथा प्रबल गामा-विकिरण की प्रतिक्रिया के कारण कुछ गौण न्यूट्रान उत्पन्न हो जाते हैं जो खण्डनक्रिया बन्द होने के कुछ समय पश्चात् तक उठते रहते हैं।

न्यूट्रान ग्रेफाइट की अपेक्षा भारी जल में एक चौथाई समय में ही मन्द हो जाते हैं। इस कारण ड्यूटीरियम आक्साइड संयंत्र की बहुत कम मात्रा में आवश्यकता पड़ती है। इसीलिए समान शक्ति वाले प्रतिकारी का आकार ग्रेफाइट पुंज की अपेक्षा छोटा होता है।

कनाडा में चाक रिवर पर भारी जल के दो प्रतिकारी कार्य कर रहे हैं जिनमें प्राकृतिक यूरेनियम का उपयोग होता है। फ्रांस में भी इसी प्रकार का एक प्रतिकारी कार्य कर रहा है। भारत में प्रथम परमाणु भट्ठी १९५६ में चालू हुई थी। इसका नाम "अप्सरा" रखा गया। इसमें यूरेनियम-एल्यूमीनियम की मिश्र धातु का ईंधन के रूप में उपयोग हुआ है। दूसरी कनाडा-इंडिया प्रतिकारी परमाणु भट्ठी कनाडा की सहायता से १० जुलाई, १९६० में चालू हो गयी है। इसका रूप कनाडा की चाक रिवर पर कार्य करने वाले

एन० आर० एक्स' प्रतिकारी के समान है। यह ऐसा अत्यन्त वेगवान् उपकरण है जिसके द्वारा अनेक प्रकार के रेडियधर्मी समस्थानिक बनाये जा सकेंगे। तीसरा प्रतिकारी जरीलीना' शीघ्र ही तैयार होने वाला है। इसमे १५ टन भारी पानी की आवश्यकता होगी जो अमेरिका परमाणु ऊर्जा आयोग से प्राप्त होगा।

सामान्य जल प्रतिकारी

सामान्य जल परमाणु प्रतिकारी मे साधारण जल का सयमक एव शीतलक के रूप मे उपयोग करते है। यही जल कवच का भी कार्य करता है। इसका वाह्य सचरण वहुत सरल होता है जैसा चित्र २८ द्वारा देखा जा सकता है। इसमें ईंधन के सघट्टन को पानी की टकी मे डुबो कर रखते है। इस प्रकार के प्रतिकारी का नाम जलाशय प्रतिकारी भी है। यह सस्ता एव सुरक्षित है और सरलता से चलाया जा सकता है।

इस प्रकार का प्रतिकारी सर्वप्रथम दिसम्बर, १९५० मे ओकरिज, अमेरिका मे बनाया गया था। इसी का एक परिवर्द्धित रूप १९५५ मे 'परमाणु शक्ति के शातिपूर्ण उपयोगो की जेनीवा कान्फ्रेंस' मे अमेरिका की ओर से रखा गया था। इसका नाम सतरित जलाशय प्रतिकारी' रखा गया। जन-साधारण मे उसी समय से इसकी ख्याति है। इसी के आधार पर बने प्रतिकारी इस समय अनेक विश्वविद्यालयो, औद्योगिक कार्यालयो तथा अनुसन्धानशालाओं मे कार्य कर रहे हैं। भारत का सर्वप्रथम परमाणु प्रतिकारी इसी नियम के आधार पर बना है। इस प्रतिकारी के प्रत्येक अंग

1. N. R. X. 2. Zero Energy Reactor for Lattice Investigations and Neutron Analysis
3. Swimming pool reaction

तक सरलता से पहुँचा जा सकता है। इस कारण इसके द्वारा अनेक प्रकार के अनुसधान-कार्य जो अन्य परमाणु भट्ठियों द्वारा सम्भव न थे, अब सम्भव
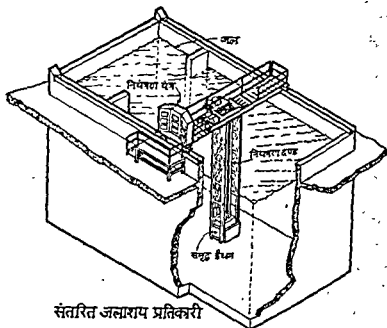
चित्र संख्या २८—संतरित जलाशय प्रतिकारी

हो सकते हैं। इसके द्वारा अनेक जीवों मे होने वाली प्रतिक्रियाओं की खोज हुई है। विकिरणों के हानिपूर्ण प्रभावों पर भी सरलता से अनुसन्धान हो सकते हैं। यदि पानी में एक लम्बी नली डाली जाय तो उसके मध्य से न्यूट्रान दण्ड मिल जायगा। इतनी सरलता से अन्य प्रतिकारी से न्यूट्रान दण्ड नही मिल सकता। इस दण्ड के द्वारा न्यूट्रान-वर्तन-प्रयोग भी सम्भव हो सके हैं।

इसके द्वारा विशेषकर अल्प अर्घजीवन अवधि के रेडियधर्मी समस्थानिक तैयार हो सके हैं।

इस प्रतिकारी में समृद्ध यूरेनियम का ईंधन के रूप मे प्रयोग होता है। यूरेनियम की प्लेटो पर दोनो ओर एल्यूमीनियम का मुलम्मा चढा दिया जाता है। इस प्रकार की अनेक प्लेटो को जमा कर रखते है। इन प्लेटो के बीच मे थोडा रिक्त स्थान छोड देते है। इन प्लेटो के बडल को जल की टकी मे गहरा डुबो देने पर प्लेटो के मध्य रिक्त स्थानो मे जल चक्कर लगाता है। इस प्रकार जल यूरेनियम प्लेटो को शीतल रखता है और साथ में मयत्रक का भी कार्य करता है। जल, कवच एव प्रत्यावर्तक के रूप मे भी उपयोगी होता है। ईंधन के निकट नियत्रण दण्ड लगे रहते है।

यूरेनियम प्लेटो के बडल की लम्बाई-चौडाई लगभग ३८ से०मी० एव ४६ से०मी० होती है और ऊँचाई ६० से०मी०। यह निश्चित माप नही है। प्लेटो की व्यवस्था बदलने पर इनमे अन्तर आ सकता है। इस बडल को प्रतिकारी टकी में एक दिशा मे आगे-पीछे हटा सकते है। इसके सस्ते होने का एक और कारण यह है कि इसमे बाहर से ठडा करने का कोई प्रबन्ध नही होता। ऊष्मा, जल द्वारा सवाहित होकर स्वतः हटती रहती है। जल के उपयोग करने से सारा उपकरण दृश्य रहता है। इससे विद्यार्थियो एव वैज्ञानिको को उसका कार्य समझने मे सरलता रहती है। विखण्डन पदार्थ यूरेनियम प्लेटों मे लगे रहते है और जल पर उनका कोई प्रभाव नही पडता।

जलाशय लगभग १२ मीटर लम्बा, ६ मीटर चौड़ा और ६ मीटर गहरा होता है। इसके आधार मे कक्रीट के बड़े-बड़े टुकड़े लगे रहते है जिन्हे बाहर निकाला जा सकता है।

यूरेनियम के बडल एक फ्रेम द्वारा जल में लटकाये जाते है। यह फ्रेम एक रेल द्वारा सरकाया जा सकता है। प्रतिकारी मे दो सुरक्षा-दण्ड लगे रहते है जिन्हे ऊपर या नीचे किया जा सकता है। सीस और बोरान कार्बाइड के मिश्रण को एल्यूमीनियम की नली मे भरकर इनका नियत्रण दडों के रूप में किया जाता है।

जेनीवा कान्फ्रेन्स मे दिखाया गया सतरित-जलाशय प्रतिकारी इसी

का एक परिवर्द्धित रूप था। इसमें छोटी टंकी लगायी गयी थी। प्रतिकारी को टकी के मध्य में एक स्थान पर जमाया गया था और उसको हटाने का कोई प्रबन्ध नही था। यूरेनियम प्लेटो, नियत्रण दण्डों आदि को आधार से साध कर रखा गया था। उन्हे ऊपर से नही लटकाया गया। इसके अतिरिक्त सारे सिद्धान्त वही थे जो ऊपर बताये गये हैं।

सामान्य जल का पदार्थ परीक्षक प्रतिकारी

सर्वप्रथम यह प्रतिकारी अमेरिका के इडाहो राज्य में विशेष कार्यों के लिए बना। इसके द्वारा नमूने पर परमाणु आक्रमण का प्रभाव देखा जा सकता है। इन प्रयोगो द्वारा अनेक उपयोगी बातें ज्ञात हुई हैं। परमाणु ऊर्जा मे काम आने वाली वस्तुओं की बनावट, विकिरण कवच आदि के बारे मे आवश्यक सूचनाएं इस प्रतिकारी द्वारा मिली हैं। इस प्रतिकारी द्वारा धातुओ से लेकर, खाद्य वस्तुओ तथा छोटे-छोटे जीवाणुओं पर होने वाला विकिरण प्रभाव देखा गया है।

जलाशय प्रतिकारी की भाँति इस प्रतिकारी मे भी समृद्ध यूरेनियम का उपयोग होता है। इसमें बेरीलियम धातु का प्रत्यावर्तक रहता है जो यूरेनियम को चारों ओर से ढके रहता है। यूरेनियम तथा बेरीलियम जल की गोल टकी मे डूबे रहते हैं। यह टंकी गोल और ऊँची होती है जिसे दोनो ओर से सीसे की डाट द्वारा बन्द रखा जाता है। विभिन्न स्थानों पर १०० से अधिक छिद्र बने रहते है जिनके द्वारा वस्तुएँ प्रयोगों के निमित्त डाली जा सकती हैं।

इस उपकरण द्वारा तीव्र तथा मन्द दोनो प्रकार के न्यूट्रान प्रयोग के लिए मिलते हैं। परमाणु अनुसंधानो के लिए दोनो प्रकार के न्यूट्रानों की आवश्यकता पडती है। बहुत-से ऐसे विरल समस्थानिक जिनका बनना अन्य प्रतिकारियों द्वारा सम्भव न था, इस प्रतिकारी द्वारा बन सके। यह उपकरण अनेक मूलभूत अनुसन्धानो में काम आया है और इस समय भी आ रहा है।

समांग प्रतिकारी

समृद्ध यूरेनियम का सर्वप्रथम उपयोग इसी प्रकार के प्रतिकारियों में हुआ था। इन्हे सामान्यत. जल-वाष्पित्र कहते है। इनमे यूरेनियम सल्फेट या नाइट्रेट के जल-विलयन का ईंधन के रूप मे प्रयोग होता है। इस उपकरण मे सयत्रक तथा विलायक दोनो का कार्य जल ही करता है। यूरेनियम–२३५ के खण्डन से ऊष्मा का उदय होने के कारण जल का ताप बढ़ जाता है। इसी कारण इसको जल-वाष्पित्र कहते है।

निष्कलंक इस्पात का लगभग ३० से०मी० का गोला प्रतिकारी के सक्रिय भाग का कार्य करता है। इस गोले मे यूरेनियम विलयन रखा जाता
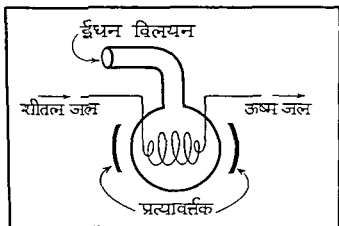
चित्र संख्या २९—प्रशीतन कुंडली द्वारा ऊष्मा को बाहर ले जाते हैं

है। खण्डन द्वारा उत्पन्न ऊष्मा को एक प्रशीतन कुडली द्वारा बाहर ले जाते हैं। चित्र द्वारा पाठको को इसका अनुमान हो सकता है। यह कुंडली गोले के अन्दर सर्पिल मार्ग से होती हुई जाती है जिसमें होकर जल का प्रवाह होता है। शीघ्रता से प्रवाह करने पर ऊष्मा को अधिक मात्रा मे बाहर भेजा जा सकता है। समांग प्रतिकारी मे प्लूटोनियम–२३९ के विलयन का

उपयोग भी सम्भव है। और बहुत स्थानों में उसका प्रयोग किया जा रहा है।

बेरीलियम या कोई अन्य वस्तु (जैसे ग्रेफाइट) प्रत्यावर्तक के रूप में गोले को चारों ओर से घेरे रहती है जिससे उत्पन्न होने वाले न्यूट्रान बाहर न जाने पायें। अन्य प्रतिकारी की भाँति इसमें भी कंक्रीट कवच, नियंत्रण-दण्ड आदि यथास्थान लगे रहते हैं। समाग प्रतिकारी को तीव्र न्यूट्रान द्वारा भी चलाया जा सकता है। उस अवस्था में यह तीव्र न्यूट्रानों के तीव्र दण्ड उत्पन्न करता है जो अनुसन्धानों में प्रयुक्त किये जाते हैं। कुछ प्रतिकारियों में सर्पिल नली द्वारा जल के स्थान पर अन्य द्रव (जैसे द्रव धातु) को प्रवाहित करते हैं जिसमें उन्हें ऊंचे ताप पर चलाया जा सके।

आजकल अनेक देशों में समाग प्रतिकारी कार्य कर रहे हैं। अमेरिका के अलावा टोकियो, जापान में तथा फ्रैंकफर्ट और पश्चिमी बर्लिन, जर्मनी में इसी प्रकार के प्रतिकारी लगे हैं।

१९६० के प्रारम्भ में अमेरिका की राजधानी वाशिंगटन में वाल्टर रीड अस्पताल में इसी प्रकार के प्रतिकारी ने कार्य आरम्भ कर दिया है। इस प्रतिकारी का सक्रिय भाग निष्कलंक इस्पात का बना है जो ४० सें०मी० व्यास का गोला है। इसमें समृद्ध यूरेनियम (यूरेनियम–२३५ समस्थानिक) सल्फेट के विलयन का प्रयोग हुआ है। सक्रिय भाग के चारों ओर ग्रेफाइट की ईंटें उसे घेरे हैं जो प्रत्यावर्तक का कार्य करती हैं। गोले के अन्दर निष्कलंक इस्पात की अत्यन्त लम्बी सर्पिल नली घूमती है जिसमें शीतल शुद्ध जल का प्रवाह होता है। इस जल द्वारा सक्रिय भाग की ऊष्मा बाहर स्थानान्तरित होती है। इस प्रतिकारी में तीव्र वेग के विकिरण प्राप्त होंगे। इसमें १ सहस्र अरब ($१०^{१२}$) मन्द न्यूट्रान प्रति वर्ग सें० मी० प्रति सेकेंड प्राप्त हो सकेंगे। न्यूट्रान रहित शक्तिशाली गामा-विकिरण (१ लाख रंटजन प्रति घंटा) भी इसके द्वारा उपलब्ध हो गये हैं। इतने शक्तिशाली प्रतिकारी द्वारा चिकित्सा-कार्य करने के लिए रेडियधर्मी समस्थानिक सरलता से मिलने लगे है।

बहुत-से औद्योगिक निगम आजकल इसी प्रकार के छोटे प्रतिकारी बना रहे है जो विद्यालयों तथा अस्पतालो में बिना कठिनाई के लगाये गये है। ऐसी आशा की जाती है कि शीघ्र ही समाग प्रतिकारी ससार के कोने कोने मे फैल जायेगे।

संप्रजनक प्रतिकारी

खण्डनीय पदार्थ उत्पादक प्रतिकारी

उत्पादक प्रतिकारी के द्वारा खण्डनीय पदार्थ उत्पन्न होता है। साधारण यूरेनियम मे केवल ० ७ प्रतिशत २३५ समस्थानिक रहता है। केवल यही समस्थानिक प्रतिक्रिया शृखला को चला सकता है। यद्यपि यूरेनियम–२३८ समस्थानिक अति तीव्र न्यूट्रान द्वारा खण्डित हो जाता है, परन्तु वह साधारण अवस्था मे शृखला नही चला सकता।

यूरेनियम–२३८ से प्लूटोनियम–२३९ बन सकता है जो स्वय खण्डनीय पदार्थ है। इस कारण यूरेनियम–२३८ स्वय ईधन न होकर प्रतिकारी मे ईधन का निर्माण कर सकता है। ऐसी वस्तु को उपजाऊ पदार्थ कहा जायगा।

इसी प्रकार थोरियम–२३२ को प्रतिकारी में रखने पर उससे यूरेनियम–२३२ का निर्माण होता है। थोरियम–२३२ को भी हम उपजाऊ वस्तु कह सकते हैं।

साधारण प्रतिकारी में कुछ न्यूट्रानो द्वारा यूरेनियम–२३८ से प्लूटोनियम–२३९ का निर्माण हो जाता है। इस प्रकार यूरेनियम–२३५ खण्डित होकर अपने स्थान पर कुछ मात्रा में और खण्डनीय पदार्थ उत्पन्न कर देता है। साधारणतया प्लूटोनियम बनने की मात्रा यूरेनियम–२३५ के क्षय की मात्रा से कम होती है जिससे विखण्डनीय तत्व कम हो जाता है।

यदि किसी प्रतिक्रिया मे उत्पन्न प्लूटोनियम की मात्रा क्षय होने वाले यूरेनियम से अधिक हो तो उसे सप्रजनक प्रतिकारी कहा जायगा। इस प्रतिक्रिया द्वारा खण्डनीय पदार्थ की मात्रा बढायी जा सकती है। यह प्रति-

क्रिया दो रूपों में सम्भव हो सकती है, एक यूरेनियम २३८ द्वारा और दूसरी थोरियम–२३२ द्वारा। दोनों के द्वारा खण्डनीय पदार्थ बनना सम्भव है।

अनेक सैद्धान्तिक अनुसन्धानों के पश्चात् अमेरिका के परमाणु ऊर्जा अनुदान ने १९५२ में एक सम्प्रजनक प्रतिकारी का निर्माण कराया। उस पर एक वर्ष अनुसंधान करने के पश्चात् सिद्ध हो गया कि संप्रजनक प्रतिक्रिया सम्भव है। इसमे यूरेनियम–२३५ को ईंधन के रूप में लिया गया जिसे साधारण यूरेनियम द्वारा चारो ओर से घेर लिया गया। द्रव धातु द्वारा (सोडियम–पोटैशियम सकर) प्रतिकारी की ऊष्मा को बाहर ले जाने का प्रबन्ध किया गया। खण्डन-क्रिया द्वारा उत्पन्न न्यूट्रान घेरे हुए यूरेनियम –२३८ पर आक्रमण कर उसे प्लूटोनियम में परिणत करते हैं। इसको रासायनिक क्रिया द्वारा अलग किया जा सकता है। इसी प्रकार थोरियम द्वारा ईंधन को घेरने से यूरेनियम–२३३ का निर्माण होगा।

संप्रजनक प्रतिकारी पर अभी और अनुसंधान हो रहे हैं जिनके फल पूर्णतया जन-साधारण को ज्ञात नहीं हैं। यदि यह क्रिया पूर्णतया सम्भव हो सकी तो मनुष्य को प्राप्त ऊर्जा का भण्डार सैंकडों गुना बढ़ जायगा। यूरेनियम के एक छोटे भाग (०.७ प्रतिशत यूरेनियम–२३५) के स्थान पर मनुष्य समूचे यूरेनियम और थोरियम को उपयोग में ला सकेगा।

शक्ति प्रतिकारी

हम यह देख चुके हैं कि परमाणु-खण्डन क्रियाओं द्वारा विकिरण एवं ऊर्जा दोनों स्वतन्त्र होते हैं। लोगों का विचार है कि भविष्य मे परमाणु ऊर्जा का सबसे बडा उपयोग ऊर्जा-उत्पत्ति में ही होगा।

हम परमाणु द्वारा ऊर्जा-उत्पादन क्यो चाहते हैं? इसका कारण यह है कि परमाणु द्वारा ऊष्मा बड़ी सान्द्र अवस्था में स्वतन्त्र होती है। वैज्ञानिको ने परिगणन किया है कि एक किलोग्राम यूरेनियम द्वारा उतनी ही ऊर्जा उत्पन्न होगी जितनी तीस लाख किलोग्राम कोयले को जलाने

में तैयार होती है। इस कारण इस ओर बड़ी तीव्र गति से कार्य हो रहा है।

परमाणु-ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोगों के सम्बन्ध में प्रथम सम्मेलन १९५५ में जेनीवा में हुआ। इसमें लगभग ८० देशों ने भाग लिया। उस समय तक विश्व में केवल एक परमाणु-ऊर्जा द्वारा चलित विद्युत-घर कार्य कर रहा था। यह विद्युत-घर सोवियत संघ में मास्को से कुछ दूर मेलोयारो-स्लेवेट्स नामक स्थान के निकट स्थित है। इसके द्वारा जून २७, १९५४ में पाँच हजार किलोवाट (५,००० किवो०) विद्युत् मिलने लगी। इसी काल के लगभग संयुक्तराष्ट्र अमेरिका में भी ऊर्जा उत्पादन पर कार्य हो रहा था। ओकरिज राष्ट्रीय अनुसन्धानशाला में प्रयोगात्मक रूप से १९५३ में विद्युत् उत्पादन हुआ था।

तीन वर्ष पश्चात् जेनीवा के द्वितीय सम्मेलन के समय तक इस ओर आशातीत उन्नति हुई। इस तीन वर्ष के काल में ग्रेट ब्रिटेन में संसार का सबसे बड़ा परमाणु-ऊर्जा द्वारा चालित विद्युत-घर कैल्डर हाल कार्य करने लगा। द्वितीय सम्मेलन में यह ज्ञात हुआ कि उस समय तक २४ स्थानों में परमाणु भट्ठी द्वारा विद्युत् उत्पादन हो चुका था और १२ देशों में ४६ अन्य विद्युत्-घर बनाये जा रहे हैं।

परमाणु-खण्डन से उत्पन्न ऊर्जा विद्युत् के उत्पादन के अतिरिक्त अन्य उपयोगों में भी आ रही है। इसके द्वारा अनेक पनडुब्बी नावें विश्व का चक्कर लगा चुकी है। शीघ्र ही बड़े-बड़े जहाज परमाणु ऊर्जा द्वारा चलेंगे और भविष्य में रेलें, वायुयान, मोटरें आदि परमाणु ऊर्जा द्वारा चालित होंगी।

इन सब कार्यों के लिए परमाणु खण्डन द्वारा उत्पन्न ऊष्मा का उपयोग हुआ करता है। इस ऊष्मा को काम में लाने के लिए विशेष प्रकार की परमाणु भट्ठियों की आवश्यकता होती है। इन भट्ठियों अथवा प्रतिकारियों को शक्ति-प्रतिकारी कहा जाता है। ये भट्ठियाँ अनेक श्रेणियों में रखी जाती है जिनमें मुख्य निम्नलिखित हैं।

गैस शीतलीकृत प्रतिकारी

इस प्रतिकारी का सर्वप्रथम उपयोग केल्डर हाल के विद्युत्-घर मे हुआ था। इसके नीचे चार परमाणु भट्टियाँ है। दो भट्ठियाँ केल्डर हाल ए(A) और दो भट्टियाँ केल्डर हाल बी(B) के नाम से प्रसिद्ध है। ए(A) की दोनो भट्ठियो ने १९५६ से कार्यारम्भ कर दिया है और बी(B) की भट्ठियो को १९५८ के अन्त मे तैयार किया गया था। इस प्रकार इस समय केल्डर हाल पावर हाउस में चार परमाणु भट्ठियाँ अथवा प्रतिकारी कार्य कर रहे है। स्काटलैण्ड मे चैपल क्रास नामक शक्ति-घर परमाणु-ऊर्जा से चल रहा है। इसकी दो परमाणु भट्ठियाँ १९५९ से कार्य कर रही है। दो अन्य भट्ठियाँ शीघ्र ही तैयार हो जायेगी। कुछ और स्थानो मे भी शीघ्र ही परमाणु ऊर्जा द्वारा विद्युत् मिलेगी।

इन सब भट्ठियो मे गैस-शीतलीकृत प्रतिकारियो का ही उपयोग हो रहा है। इस प्रतिकारी मे प्राकृतिक यूरेनियम ही काम आता है। इसमे यूरेनियम के दण्डो को मेगनीशियम की पर्त से ढककर काम में लाया जाता है। और ग्रेफाइट द्वारा न्यूट्रानो का सयत्रण करते है। प्रतिकारी मन्द न्यूट्रानो द्वारा चालित होते हैं तथा बोरान-इस्पात के नियत्रण दण्ड काम आते हैं। परमाणु खण्डन द्वारा उत्पन्न ऊष्मा को कार्बन डाइआक्साइड गैस द्वारा बाहर लाते है। प्रतिकारी के नीचे से १४०° सेन्टीग्रेड पर कार्बन डाइआक्साइड उसमे प्रवेश करती है और ऊपर की ओर से ३३६° से० पर बाहर निकलती है। यह गैस ऊष्मा विनिमायक द्वारा घूमकर फिर नीचे की ओर प्रतिकारी मे प्रवेश करती है। ऊष्मा विनिमायक द्वारा कार्बन डी-आक्साइड की ऊष्मा जल मे प्रवेश कर उसको वाष्प मे परिणत करती है। यह वाष्प टरबाइन द्वारा विद्युत् उत्पादन के काम आती है। प्रतिकारी द्वारा बानवे सहस्र किलोवाट (९२,००० किवा०) विद्युत् उत्पन्न करने का प्रबन्ध है यद्यपि केवल पचहत्तर सहस्र (७५,०००) किलोवाट विद्युत् उत्पन्न हो रही है। इस प्रकार चार प्रतिकारी एक लाख पचास सहस्र (१,५०,०००) किलोवाट विद्युत् उत्पन्न कर रहे है।

१. गैस शीतलीकृत प्रतिकारी[1]
२. दाबित जल प्रतिकारी[2]
३. जल-वाष्पित्र प्रतिकारी[3]
४. कार्बनिक शीतलीकृत प्रतिकारी[4]
५. सोडियम शीतलीकृत प्रतिकारी[5]
६ द्रव ईंधन अथवा समाग प्रतिकारी[6]
७ प्रत्यक्ष परिवर्तक प्रतिकारी[7]
८ तीव्र सप्रजनक प्रतिकारी[8]

कुछ अन्य प्रतिकारियों पर भी अनुसन्धान-कार्य हो रहा है और ये कई स्थानों पर कार्य भी कर रहे है। उनमे ऊपर बतायी हुई श्रेणियों से कुछ हेरफेर है। उनका यथास्थान वर्णन किया जायगा। ऊपर बताये प्रत्येक प्रकार के प्रतिकारी द्वारा प्रायोगिक रूप से ऊर्जा प्राप्त हो चुकी है तथा कुछ का उपयोग विद्युत्-घरो मे हो रहा है। इस समय ग्रेट ब्रिटेन परमाणु द्वारा विद्युत् प्राप्त करने मे ससार में सबसे आगे है यद्यपि अमेरिका तथा सोवियत रूस में भी तीव्रता से कार्य हो रहा है। ब्रिटेन का केल्डर हाल विद्युत्-घर गैस शीतलीकृत प्रतिकारी का उपयोग कर रहा है जिसका वर्णन नीचे दिया जा रहा है।

1. Gas cooled reactor
2. Pressurized water reactor
3. Water boiler reactor
4. Organic cooled reactor
5. Sodium cooled reactor
6. Liquid fuel or homogeneous reactor
7. Direct conversion reactor
8. Fast breeder reactor

गैस शीतलीकृत प्रतिकारी

इस प्रतिकारी का सर्वप्रथम उपयोग केल्डर हाल के विद्युत्-घर मे हुआ था। इसके नीचे चार परमाणु भट्टियाँ है। दो भट्ठियाँ केल्डर हाल ए(A) और दो भट्ठियाँ केल्डर हाल बी(B) के नाम से प्रसिद्ध है। ए(A) की दोनो भट्ठियो ने १९५६ मे कार्यारम्भ कर दिया है और बी(B) की भट्ठियो को १९५८ के अन्त मे तैयार किया गया था। इस प्रकार इस समय केल्डर हाल पावर हाउस मे चार परमाणु भट्ठियाँ अथवा प्रतिकारी कार्य कर रहे है। स्काट-लैण्ड मे चैपल क्रास नामक शक्ति-घर परमाणु-ऊर्जा से चल रहा है। इसकी दो परमाणु भट्ठियाँ १९५९ मे कार्य कर रही है। दो अन्य भट्ठियाँ शीघ्र ही तैयार हो जायेगी। कुछ और स्थानो मे भी शीघ्र ही परमाणु ऊर्जा द्वारा विद्युत् मिलेगी।

इन सब भट्ठियो मे गैस-शीतलीकृत प्रतिकारियो का ही उपयोग हो रहा है। इस प्रतिकारी मे प्राकृतिक यूरेनियम ही काम आता है। इसमे यूरेनियम के दण्डो को मेगनीशियम की पर्त से ढककर काम मे लाया जाता है। और ग्रेफाइट द्वारा न्यूट्रानो का सयत्रण करते है। प्रतिकारी मन्द न्यूट्रानो द्वारा चालित होते है तथा बोरान-इस्पात के नियत्रण दण्ड काम आते है। परमाणु खण्डन द्वारा उत्पन्न ऊष्मा को कार्बन डाइआक्साइड गैस द्वारा बाहर लाते है। प्रतिकारी के नीचे से १४०° सेन्टीग्रेड पर कार्बन डाइआक्साइड उसमे प्रवेश करती है और ऊपर की ओर से ३३६° से० पर बाहर निकलती है। यह गैस ऊष्मा विनिमायक द्वारा घूमकर फिर नीचे की ओर प्रतिकारी मे प्रवेश करती है। ऊष्मा विनिमायक द्वारा कार्बन डी-आक्सा-इड की ऊष्मा जल में प्रवेश कर उसको वाष्प मे परिणत करती है। यह वाष्प टरबाइन द्वारा विद्युत् उत्पादन के काम आती है। प्रतिकारी द्वारा बानवे सहस्र किलोवाट (९२,००० किवा०) विद्युत् उत्पन्न करने का प्रबन्ध है यद्यपि केवल पचहत्तर सहस्र (७५,०००) किलोवाट विद्युत् उत्पन्न हो रही है। इस प्रकार चार प्रतिकारी एक लाख पचास सहस्र (१,५०,०००) किलोवाट विद्युत् उत्पन्न कर रहे हैं।

इस प्रतिकारी द्वारा एक यूरेनियम–२३५ परमाणु के खण्डन के फलस्वरूप ०.८ प्लूटोनियम परमाणु उत्पन्न होते हैं। इस कारण यह ऊष्मा व्यय करने के साथ कुछ नया ईंधन भी बनाता है।

फ्रांस मे प्रथम विद्युत् ऊर्जा प्रतिकारी ने जनवरी, १९५६ से कार्यारम्भ कर दिया है। यह प्रतिकारी ब्रिटेन की भाँति गैस-शीतलीकृत विधि से विद्युत् उत्पन्न कर रहा है। जुलाई, १९५८ से इसी प्रकार का द्वितीय प्रतिकारी ऊर्जा उत्पन्न कर रहा है। १९५९ मे दो और प्रतिकारी विद्युत् उत्पन्न करने लग गये है। इस प्रकार फ्रांस भी परमाणु ऊर्जा-उत्पादन की ओर तेजी से अग्रसर हो रहा है।

दावित जल प्रतिकारी

दाबित जल परमाणु भट्ठी का अमेरिका में सविस्तर उपयोग हुआ है। १९५१ में इस प्रकार के प्रतिकारी पर कार्यारम्भ हुआ। उस समय यह कार्य पनडुब्बी नावों को बनाने के हेतु हो रहा था। मई, १९५३ मे इस प्रतिकारी ने सर्वप्रथम ऊर्जा उत्पन्न की थी। तत्पश्चात् इसी रूप का प्रतिकारी अमेरिका मे नाटिलस[1] और स्केट[2] नामक पनडुब्बियों पर लगाया गया जिसके द्वारा उन्होंने लाखों मील की समुद्र यात्रा की है। जनवरी १९५५ मे नाटिलस ने अपनी सर्वप्रथम यात्रा प्रारम्भ की थी।

दावित जल प्रतिकारी अमेरिका के सर्वप्रथम परमाणु-ऊर्जा द्वारा चालित जहाज 'सेवानाह' मे लगाया जा रहा है। सोवियत रूस मे बना सर्वप्रथम परमाणु-ऊर्जा-चालित पोत 'लेनिन' हिमभंजक में तीन दावित जल प्रतिकारी लगे हैं। इस प्रतिकारी का ऊर्जा-उत्पादन हेतु मुख्य उपयोग अमेरिका के पेंसिलवेनिया राज्य में शिपिंगपोर्ट नामक स्थान में किया गया है। इसके पहले से ही वर्जीनिया राज्य मे एक छोटा प्रतिकारी इसी उद्देश्य

1. Nautilus 2. Skate

से कार्य कर रहा है। वर्जीनिया का प्रतिकारी मई १९५७ मे तैयार हुआ था और शिपिंगपोर्ट का दिसम्वर, १९५७ मे, यद्यपि इसका समारम्भ उत्सव मई १९५८ में हुआ।

दाबित जल प्रतिकारी के दो भाग होते है। एक भाग को हम मुख्य भाग कह सकते है जिसमें परमाणु भट्ठी स्थित रहती है। इस भट्ठी द्वारा ऊष्मा का उत्पादन होता है। दूसरे को जिस पर ऊष्मा-स्थानान्तरण होता है, गौण भाग कहा जा सकता है। यह स्थानान्तरित ऊष्मा वाष्प टरबाइन को चलाने के उपयोग मे आती है जिससे विद्युत्-उत्पादन होता है। प्राथमिक प्रणाली पर जल को पम्प से नालियों द्वारा भेजते हैं। ये जल की नालियाँ परमाणु भट्ठी के ईंधन के अन्दर और चारो ओर फैली रहती है। इनके द्वारा जल के प्रवाहित होने से भट्ठी की ऊष्मा जल में आती है जिसके पश्चात् भट्ठी से बाहर जाने वाला जल द्वितीयक प्रणाली मे जाकर इस प्रणाली मे प्रवाहित जल को ऊष्मा प्रदान कर देता है।

इस उपकरण में एक विशेपता है। इसकी प्राथमिक प्रणाली को अत्यन्त ऊँचे दबाव पर रखा जाता है। इस दबाव के कारण जल उबलने
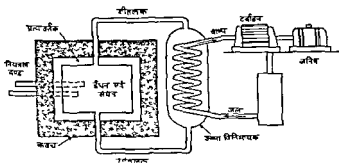
चित्र संख्या ३०—दाबित जल प्रतिकारी

नहीं पाता और ऊँचे ताप पर प्रवाहित होता है। द्वितीयक प्रणाली को हलके दबाव पर रखते है। जिस समय द्वितीयक जल ऊष्मा ग्रहण करता है,

यह हलके दबाव के कारण वाष्प बन कर टरबाइन को चालित कर देता है।

प्राथमिक जल का द्वितीयक जल में संमिश्रण नहीं हो सकता। यदि परमाणु भट्ठी के द्वारा कुछ रेडियमर्मिता प्रारम्भिक जल तक पहुँच जाय तो वह द्वितीयक जल में न जाने पायेगी। इस प्रकार वातावरण शुद्ध रहेगा।

दाबित जल के दो काम हैं। यह भट्ठी की ऊष्मा को ग्रहण तो करता ही है, किन्तु साथ मे न्यूट्रानो को मन्द करने का कार्य भी इसी के द्वारा होता है। यही कारण है कि इस जल को वाष्पित नही होने दिया जाता। यदि प्राथमिक जल मे वाष्प बनेगी तो वह न्यूट्रानो को मन्द न कर सकेगी।

इस उपकरण मे एक और विशेषता रहती है जिसके कारण प्रतिकारी समान स्तर की ऊर्जा उत्पादित करने की क्षमता रखता है। यदि किसी कारणवश भट्ठी में प्रवेश करने वाले जल का ताप घट जाय तो भट्ठी से उत्पादित ऊष्मा स्वत. बढ़ जायगी जिससे उससे निकलते समय जल का ताप फिर ठीक स्तर पर आ जायगा।

शिपिंगपोर्ट विद्युत्-स्टेशन मे हेफनियम तत्व के नियंत्रण दण्ड लगाये गये हैं जिन्हे आवश्यकतानुसार बाहर या अन्दर किया जा सकता है। स्वीडन मे दो विद्युत-स्टेशन बन रहे हैं जिनमे जल के स्थान पर दाबित ड्यूटीरियम जल अथवा भारी जल का उपयोग होगा।

जल-वाष्पित्र प्रतिकारी

जल-वाष्पित्र प्रतिकारी पर कुछ वर्षों से अमेरिका में बहुत अनुसधान एव कार्य हुआ है। १९५४ मे इस दिशा में कार्य आरम्भ हुआ था। १९५७ मे एक छोटा विद्युत्-स्टेशन शिकागो नगर के निकट आर्गान राष्ट्रीय प्रयोग-शाला मे बनाया गया जिसके द्वारा पांच सहस्र (५०००) किलोवाट विद्युत् का उत्पादन हो सकता था। इसकी सफलता से उत्साहित होकर एक दूसरे विशाल परमाणु ऊर्जा द्वारा चालित विद्युत्-स्टेशन की योजना बनायी गयी। विद्युत् स्टेशन शिकागो नगर से ५० मील दूर ड्रेस्डन पर बनाया

गया है। इस स्टेशन द्वारा एक लाख अस्सी सहस्र (१,८०,०००) किलोवाट विद्युत् ऊर्जा प्राप्त हो सकेगी।

जिस समय ड्रेस्डन विद्युत् स्टेशन बनाने की योजना की स्वीकृति हुई थी उसी समय यह भी निर्णय हुआ कि एक अन्य उसी नमूने का छोटा विद्युत्-स्टेशन बनाया जाय जिससे उसकी सारी कठिनाइयों एवं लाभों का अनुभव हो सके। जून, १९५६ मे केलीफोर्निया राज्य मे प्लेजेन्टन नामक स्थान पर वेलीसिटोस् जल-वाष्पित्र प्रतिकारी[1] पर कार्यारम्भ हुआ और एक वर्ष मे सारा कार्य समाप्त भी हो गया। अक्टूबर, १९५७ मे यह परमाणु भट्ठी विद्युत् देने लगी। योजना के अनुसार इस भट्ठी के द्वारा चार सहस्र पाँच सौ (४,५००) किलोवाट विद्युत् ऊर्जा का उत्पादन होना था, परन्तु बनने के पश्चात् इससे छः सहस्र पाँच सौ (६,५००) किलोवाट विद्युत् उत्पादित हो सकती थी यद्यपि केवल पाँच सहस्र दो सौ (५,२००) किलोवाट का ही उत्पादन किया गया।

जल-वाष्पित्र परमाणु भट्ठी के ईंधन (समृद्ध यूरेनियम) की प्लेटों को सामान्य जल मे डुबोते है। खण्डन-प्रतिक्रिया द्वारा उत्पन्न ऊष्मा, जल को गर्म करती है। जल न्यूट्रानो को मन्द करता है तथा परमाणु भट्ठी द्वारा उत्पन्न ऊष्मा को अवशोषित करता है। इस जल को प्रवाहित करने का प्रबन्ध रहता है। प्रवाहित गर्म जल तथा वाष्प का समिश्रण प्रतिकारी के बाहर निकलता है, जिसको एक पूर्ववर्ती बेलनाकार बर्तन मे ले जाते हैं और वाष्प को निकाल कर टरबाइन चलाने के कार्य मे लाते है। बर्तन के बचे जल को द्वितीयक वाष्प-उत्पादकों द्वारा नलियों से प्रविष्ट कराते हैं, जिससे इन उत्पादकों मे उपस्थित द्वितीयक जल वाष्प बन जाये। इस उत्पन्न वाष्प को भी टरबाइन चलाने के काम लाया जाता है। प्राथमिक जल वाष्प-उत्पादकों से होता हुआ प्रतिकारी मे फिर लौट जाता है।

1. Vallecitos Boiling Water Reactor

ड्रेसडन विद्युत्-स्टेशन की परमाणु भट्ठी का व्यास ३.८ मीटर और ऊचाई १३ मीटर है। भट्ठी का बाहरी ढांचा कार्बन इस्पात का बना है। ईंधन के लिए ६५ टन यूरेनियम का उपयोग होगा। ऐसी आशा की जाती है कि यह ईंधन ३½ वर्ष चलेगा। प्रतिकारी द्वारा लगभग नब्बे सहस्र (९०,०००) गैलन जल सर्वदा प्रवाहित होता रहेगा। ड्रेसडन परमाणु भट्ठी से एक लाख अस्सी सहस्र (१,८०,०००) किलोवाट विद्युत् उत्पादन की योजना है। इतनी विद्युत् तैयार करने के लिए एक सहस्र सात सौ (१,७००) टन कोयले की रोज आवश्यकता पड़ती।

ड्रेसडन परमाणु भट्ठी १५ अक्टूबर, १९५९ से कार्य करने लगी है। आशा है कि इससे विद्युत् ऊर्जा का उत्पादन शीघ्र ही होने लगेगा।

१९५९ से नार्वे मे जल-वाष्पित्र प्रतिकारी सफलतापूर्वक कार्य कर रहा है। इसके द्वारा लगभग पाँच सहस्र (५,०००) किलोवाट विद्युत् बनती है।

इसी प्रकार एक अन्य प्रतिकारी पश्चिमी जर्मनी मे बन रहा है जो पन्द्रह सहस्र (१५,०००) किलोवाट विद्युत् उत्पन्न करेगा।

कार्बनिक शीतलीकृत प्रतिकारी

इस प्रकार की परमाणु भट्ठी मे कार्बनिक द्रवो का उपयोग होता है। कार्बनिक द्रव प्रतिकारी की ऊष्मा ग्रहण करते हैं, न्यूट्रानों को मन्द करते हैं और हानिकारक विकिरणों को बाहर जाने से रोकते हैं। यही द्रव न्यूट्रानों को प्रत्यावर्तित भी करते हैं जिससे वे बाहर न जाने पायें।

कार्बनिक प्रतिकारी द्वारा ऊंचे दबाव पर वाष्प सरलता से बनाया जा सकता है। कार्बनिक द्रव अधिक संक्षरण उत्पन्न नही करते। इनके ये दो मुख्य लाभ हैं जिनके कारण इन प्रतिकारियों को बनाने का कार्य द्रुतगति से हो रहा है। इन विचारो की पुष्टि करने के लिए प्रायोगिक रूप से एक कार्बनिक प्रतिकारी अमेरिका के इडाहो राज्य मे १९५७ से कार्य कर रहा

है। इस प्रतिकारी मे टेट्राफिनाइल द्रव[1] का उपयोग होता है। इस सफल प्रयोग के कारण बड़े परमाणु विद्युत् घर बनाने की एक योजना बनायी गयी है जिसके अनुसार अमेरिका के ओहियो राज्य मे पिका[2] नामक स्थान पर कार्बनिक शीतलीकृत प्रतिकारी बनेगा।

कार्बनिक शीतलीकृत प्रतिकारी एक बेलनाकार टकी मे बन्द रहते है। इस टकी मे ईंधन (यूरेनियम), नियत्रण दड, न्यूट्रान स्रोत तथा कार्बनिक द्रव (हाइड्रो-कार्बन) स्थित रहते है। कार्बनिक द्रव परमाणु भट्ठी से उत्पन्न ऊष्मा लेता है। इस द्रव को पंप द्वारा बाहर जाने तथा अन्दर आने का प्रबन्ध किया जाता है। बाहर जाने के लिए अनेक छोटे-छोटे फदे बने रहते है। प्रत्येक फदे मे एक पम्प के द्वारा द्रव बाहर खीचते है और वाष्प उत्पादन विभाग मे ले जाते हैं। अन्त मे ठडा कार्बनिक द्रव प्रतिकारी मे लौट जाता है।

प्रतिकारी के अन्दर कार्बनिक द्रव का कुछ बहुलीकरण होने की सम्भावना होती है। इस कारण द्रव की एक पतली धार शीतलक प्रणाली से निकाल कर बाहर ले जाते हैं। इस निकले हुए द्रव से बहुलीकृत अश अलग करने पर स्वच्छ हाइड्रोकार्बन फिर प्रतिकारी मे लौट जाता है। इस क्रिया से कुछ हाइड्रोकार्बन का व्यय होने के कारण नवीन द्रव को आवश्यकतानुसार प्रतिकारी मे डाला जाता है।

औद्योगिक प्रयोगो से ज्ञात हुआ है कि कार्बनिक शीतलीकृत प्रतिकारी भारी तैल ले जाने वाले जहाज मे प्रयुक्त होगा। पश्चिमी जर्मनी में इस पर प्रयोग हो रहे है। आशा है कि कुछ समय पश्चात् चालीस सहस्र (४०,०००) टन भार का टैंकर इस परमाणु भट्ठी द्वारा चलेगा। इस प्रतिकारी के द्वारा जहाज चलाने के लिए दस सहस्र (१०,०००) अश्व शक्ति (हार्स पावर) ऊर्जा उत्पादित होगी। साथ मे यही प्रतिकारी जहाज के सारे कार्यों के लिए विद्युत् तथा वाष्प भी उत्पन्न करेगा।

1. Tetraphenyl   2. Picqua

सोडियम शीतलीकृत प्रतिकारी

इस प्रतिकारी मे द्रव सोडियम का शीतलक के रूप में प्रयोग किया गया है। सोडियम ऊष्मा को बहुत शीघ्र ग्रहण करता और दान देता है। इसी गुण के कारण इसके प्रयोग सफल रहे हैं।

इस प्रतिकारी के साथ ड्यूटीरियम जल का संयंत्रक के रूप में उपयोग होगा। ड्यूटीरियम बहुत उत्तम सयंत्रक है और न्यूट्रानों का बहुत न्यून मात्रा में अवशोषण करता है। इस कारण इन दोनो के संयोग से उत्तम गुण वाले प्रतिकारी बन सकते हैं जो प्राकृतिक यूरेनियम से चालित होंगे।

प्रारम्भिक प्रयोगो द्वारा ज्ञात हुआ है कि सोडियम और जल को अलग रखा जा सकता है। यदि सावधानी बरती जाये तो वे आपस मे प्रतिक्रिया नही कर सकेंगे। इस प्रतिकारी मे मन्द तथा तीव्र दोनो प्रकार के न्यूट्रान उपयोगी हो जायँगे। सोडियम प्रतिकारी का प्रयोग एक अमेरिकन पनडुब्बी नाव सीवुल्फ पर हो चुका है। सोडियम ड्यूटीरियम प्रतिकारी के प्रयोगो के निरीक्षणों से यह सिद्ध हो गया है कि इस प्रकार की परमाणु भट्ठी अल्प व्यय से चालित हो सकती है।

अमेरिका की जेनरल इलेक्ट्रिक क० ने दूसरे रूप के सोडियम प्रतिकारी बनाने में उन्नति की है। उनके प्रयोगों में बेरीलियम-ग्रैफाइट द्वारा न्यूट्रानों को मन्द किया गया है। उन्होने थोरियम-यूरेनियम—२३२ मिश्रण का सफलता से प्रयोग किया है। ऐसी आशा है कि इस रूप की परमाणु भट्ठी भी भविष्य में विद्युत्-उत्पादन मे उपयोगी हो सकेगी।

द्रव ईंधन अथवा समांग प्रतिकारी

इस प्रतिकारी मे यूरेनियम के यौगिक का द्रव रूप में प्रयोग होगा। इस रूप की परमाणु भट्ठी पर प्रयोग किये गये हैं। इन प्रयोगों से सिद्ध हो चुका है कि यह अति स्थिर भट्ठी है जिसमें नियंत्रण दंडो के बिना भी काम चल सकता है।

इसमें यूरेनियम सल्फेट तथा फास्फेट का ईंधन के रूप में उपयोग हो

तीव्र संप्रजनक

इस प्रतिकारी की बनावट अन्य प्रतिकारी से भिन्न होगी क्योंकि इसमे तीव्र न्यूट्रानों का उपयोग किया जायगा। इसीलिए इस प्रतिकारी में सयत्र की आवश्यकता न होगी। साथ मे इस परमाणु भट्ठी मे एक नये ईंधन प्लूटोनियम-२३९ की भी समुचित मात्रा में उत्पत्ति होती रहेगी। ईंधन की समाप्ति के वाद प्रतिकारी को वन्द कर उसमे नया ईंधन बदल कर रखा जाता है। इस अवस्था मे पुराने ईंधन से रासायनिक क्रियाओं द्वारा प्लूटोनियम निकाला जा सकेगा। प्लूटोनियम स्वयं एक विखण्डनीय पदार्थ है। उपर्युक्त प्रयोगो के बाद उसका ईंधन के रूप मे प्रयोग हो सकेगा। इसी कारण इस प्रतिकारी को संप्रजनक कहते है क्योंकि उसमे ईंधन का व्यय होने के साथ-साथ समुचित मात्रा मे नया ईंधन बनता रहता है।

संप्रजनक प्रतिकारी में थोरियम का प्रयोग करने की वैज्ञानिकों की योजना है। थोरियम २३२ पर न्यूट्रान प्रतिक्रिया के फलस्वरूप यूरेनियम २३३ बनेगा जो स्वय एक विखण्डनीय पदार्थ है और आगे ईंधन के काम आयेगा।

इस सिद्धान्त का उपयोग कर एक विशाल सप्रजनक प्रतिकारी विद्युत्-स्टेशन अमेरिका के मिशिगन राज्य में बन रहा है। ऐसी आशा थी कि इस पर निर्माण कार्य १९६० के लगभग समाप्त हो जायगा और १९६१ में इस स्टेशन द्वारा विद्युत् मिल सकेगी। इस प्रतिकारी को प्रसिद्ध परमाणु वैज्ञानिक स्वर्गीय एनूरिको फर्मी के नाम से पुकारा जायगा। विद्युत्-स्टेशन डेट्रायट शहर से ३५ मील दक्षिण-पूर्व की दिशा में लैंगूना वीच नामक स्थान पर स्थित है। इसके द्वारा एक लाख (१,००,०००) किलोवाट विद्युत् का निर्माण होगा। साथ मे प्रचुर मात्रा मे नया ईंधन भी बनेगा।

सोवियत संघ में ऊर्जा प्रतिकारी पर कार्य

यह हम पहले बता चुके हैं कि संसार का सर्वप्रथम परमाणु ऊर्जा से चालित विद्युत्-स्टेशन सोवियत सघ में बना। यह स्टेशन मास्को से कुछ दूर

मेलोयारोस्लावेट्स शहर के निकट ओवनिस्क नामक स्थान पर स्थित है। इस स्टेशन ने २७ जून, १९५४ मे कार्य करना प्रारम्भ किया।

इसकी परमाणु भट्ठी मे यूरेनियम-खण्डन से उत्पन्न न्यूट्रान कार्बन द्वारा मन्द किये जाते है। खण्डन-क्रिया द्वारा उदित ऊष्मा से भट्ठी गर्म होती है। इसको सामान्य जल के चक्रण द्वारा ठडा करते है। जल के चक्रित होने के कारण भट्ठी की ऊष्मा बाहर उपयोग मे आती है। खण्डन प्रतिक्रिया द्वारा बड़ी मात्रा मे न्यूट्रान स्वतत्र होते है। क्रिया को नियंत्रण मे रखने के हेतु बोरान कार्बाइड के नियत्रण दड काम मे लाये गये है।

भट्ठी को ठडा करने वाला जल एक बन्द परिपथ मे घूमता है। इस परिपथ के दूसरी ओर एक ऊष्मा विनिमायक है जो भट्ठी से आये जल की ऊष्मा ग्रहण कर अपने अन्दर के जल से वाष्प उत्पन्न करता है। यही वाष्प टरबाइन द्वारा विद्युत् बनाती है। कार्यकर्त्ताओ को हानिकारक विकिरणों से बचाने के लिए प्रतिकारी को इस्पात के बेलन मे बन्द रखा गया है। इसके चारों ओर एक मीटर जल की मोटी तह है और उसके चारो ओर तीन मीटर मोटी कंक्रीट की तह लगायी गयी है।

सोवियत यूनियन की विज्ञप्तियो से ज्ञात हुआ है कि सितम्बर, १९५८ में एक लाख (१,००,०००) किलोवाट् विद्युत् ऊर्जा के स्टेशन ने कार्य आरम्भ कर दिया। यह स्टेशन साइबेरिया के किसी स्थान पर कार्य कर रहा है, स्थान का नाम सोवियत सरकार ने गुप्त रखा है। पहले स्टेशन की भाँति ही इसमे भी ग्रेफाइट द्वारा न्यूट्रान मन्द किये जाते है और सामान्य जल द्वारा प्रतिकारी की ऊष्मा बाहर उपयोग के निमित्त ले जायी जाती है। उनके अनुसार उसी स्थान पर ५ प्रतिकारी और बनाये जायेंगे जिनके द्वारा छ लाख (६,००,०००) किलोवाट विद्युत उत्पन्न हो सकेगी।

दाबित जल प्रतिकारी पर रूस मे बहुत कार्य हुआ है जो लगभग अमेरिकन अनुसन्धान कार्यों की भाँति है। संप्रजनक प्रतिकारी के कार्य में

ऐसा अनुमान है कि रूस के वैज्ञानिक अमेरिका से आगे बढ़ गये हैं। इस समय सोवियत संघ में लगभग १० स्थानों पर परमाणु ऊर्जा विद्युत्-स्टेशन बनाये जा रहे हैं। इनके अनुमानित स्थान एवं रूप निम्न हैं—

श्रेणी	अनुमानित विद्युत उत्पादन;	अनुमानित स्थान
१. ग्रेफाइट-सामान्य जल	१ लाख किवा० के चार प्रतिकारी (कुल ऊर्जा ४ लाख किवा०)	बेलोयारस्क, (यूराल पर्वत)
२. दाबित सामान्य जल	२ लाख किवा० के दो प्रतिकारी (कुल ऊर्जा ४ लाख किवा०)	वोरोनेज (मास्को से ३०० मील दक्षिण)
३. दाबित सामान्य जल	२ लाख किवा० के दो प्रतिकारी (कुल ऊर्जा ४ लाख किवा०)	लेनिनग्राड
४. जल वाष्पित्र	५० सहस्र किवा०	उलयानाव
५. समांग (जल विलयन)	३५ सहस्र किवा०	वॉल्गा नदी पर
६. ग्रेफाइट-तरल सोडियम	५० सहस्र किवा०	वॉल्गा नदी पर
७. तीव्र संप्रजनक-तरल सोडियम	५० सहस्र किवा०	वॉल्गा नदी पर
८. तीव्र संप्रजनक-तरल सोडियम	२ लाख ५० सहस्र किवा०	गोपनीय
९. चल-दाबित जल	दो सहस्र किवा०	ओवनिस्क

भारत में परमाणु विद्युत् उत्पादन पर कार्य

भारत की तृतीय पचवर्षीय योजना के अतर्गत ३ परमाणु विद्युत् स्टेशन बनाये जायेंगे। प्रथम स्टेशन महाराष्ट्र प्रदेश के तारपोर नगर मे बनाया जायगा जिसके १९६४ तक पूर्ण होने की आशा है। इस स्टेशन द्वारा दो लाख पचीस हजार (२,२५,०००) किलोवाट विद्युत् का उत्पादन होगा। ऐसा अनुमान है कि प्रथम ऊर्जा स्टेशन के बनाने मे लगभग ४५ करोड रुपये व्यय होंगे।

उसी प्रकार के दूसरे दो विद्युत्-स्टेशन तृतीय पचवर्षीय योजना-काल मे बनेंगे। उसमे एक स्टेशन राजस्थान और दूसरा दक्षिणी भारत मे बनेगा। भारतीय परमाणु ऊर्जा आयोग के अध्यक्ष श्री होमी जहागीर भाभा के अनुमान के अनुसार प्रथम ऊर्जा स्टेशन से उत्पादित विद्युत् की लागत चार (४) नये पैसे प्रति यूनिट (किलोवाट घटा) होगी। पांच वर्ष पश्चात् यह लागत घटकर दो (२) नये पैसे प्रति यूनिट हो जायगी।

प्रथम विद्युत्-स्टेशन के स्थापित करने के लिए प्रारम्भिक कार्य प्रारम्भ हो गया है। इस कार्य को सफलता से पूर्ण करने के लिए ट्राम्बे मे स्थित अनुसन्धान प्रतिकारी 'अप्सरा' तथा 'कनाडाइडिया' चालू हो चुके है। आशा की जाती है कि तृतीय प्रतिकारी 'जरलीना' शीघ्र ही बन जायेगा। इस परमाणु भट्ठी के बनने मे लगभग नौ करोड़ (९,००,००,०००) रुपये व्यय होगे।

इन परमाणु भट्ठियों मे ड्यूटीरियम ऑक्साइड अथवा भारी जल की, सयत्रक के रूप मे, आवश्यकता होगी। अभी भारी जल की पूर्ति बाह्य स्रोतो द्वारा होगी। परन्तु भारत सरकार भारत मे इसके उत्पादन का प्रबन्ध शीघ्र ही कर रही है। पजाब के नगल स्थान पर भारी जल उपजाने का यंत्र बनाया जा रहा है। इस यत्र मे हाइड्रोजन आसवन द्वारा भारी जल का निर्माण होगा। इसके द्वारा १४ टन भारी जल प्रतिवर्ष बनाने की योजना है।

अध्याय १३

परमाणु ऊर्जा के उपयोग–२

यातायात (जहाज)

यातायात में परमाणु ऊर्जा के उपयोग का प्रारम्भ १९५९ मे हुआ जबकि सोवियत सघ के लेनिनग्राड बंदरगाह मे परमाणु ऊर्जा द्वारा चालित जहाज "लेनिन" तैयार हुआ। इस जहाज ने सितम्बर, १९५९ में अपनी प्रथम सामुद्रिक यात्रा सफलतापूर्वक पूरी की। इस की यात्रा बाल्टिक सागर के बर्फीले स्थानों में हुई थी।

'लेनिन' का भार सोलह सहस्र (१६,०००) टन है। इसके इंजिन चवालीस सहस्र (४४,०००) हॉर्स पावर की ऊर्जा उत्पन्न करेंगे। इसकी परमाणु भट्टियों द्वारा इतनी ऊर्जा उत्पन्न होगी कि जहाज एक वर्ष तक समुद्र में बिना ईंधन लिये रह सकेगा। इसकी बनावट इस प्रकार की है कि यह बर्फीली मोटी तहों को चीरता हुआ समुद्र में यात्रा कर सकता है।

इस जहाज में तीन परमाणु भट्ठियां लगायी गयी हैं। प्रत्येक भट्ठी दाबित जल प्रतिकारी श्रेणी की है। जल द्वारा प्रतिकारी की ऊष्मा ऊर्जा में परिणत की जाती है और साथ में जल ही न्यूट्रानों को मन्द भी करता है। प्रत्येक भट्ठी के साथ अलग-अलग वाष्प-जनित्र लगे हुए हैं। इन तीनों जनित्रों द्वारा अतितप्त वाष्प उत्पन्न होती है। यह वाष्प चार टर्बो-जनित्रों में बांटी जाती है। प्रत्येक टर्बो-जनित्र से ग्यारह सहस्र (११,०००) हार्स पावर ऊर्जा का उत्पादन होता है। प्रत्येक टर्बो जनित्र दिष्ट (डी. सी.) विद्युत्-धारा उत्पन्न करते हैं। यह विद्युत्-धारा बिजली की मोटरों को घुमाती

है जिनके द्वारा नोदक दंड चलायमान होते है। थोडी मात्रा मे वाष्प एक दूसरी टर्बाइन द्वारा प्रत्यावर्ती (ए. सी.) विद्युत्-धारा उत्पन्न करती है जिसे जहाज के अन्य सामान्य उपयोगो मे लाया जाता है।

परमाणु भट्ठी से निकलने वाले हानिकारक विकिरणो से बचाव का समुचित प्रबन्ध किया गया है। इस बचाव के लिए लौह, जल और कक्रीट कवच भट्ठी के चारो ओर लगाये गये है। रेडियधर्मी पदार्थों से बचने का समुचित प्रबन्ध किया गया है। भट्ठी के चारो ओर की वायु को अत्यन्त ऊँची खोखली चिमनी द्वारा बाहर निकाला जाता है। यदि किसी समय प्रतिकारी के प्रायोगिक जल को बदलना हो तो उसे ठडा कर और विनिमय-रेजिनो द्वारा छान कर समुद्र मे फेका जायगा जिससे हानिकारक रेडियधर्मी पदार्थ समुद्र में न पहुँचें। 'लेनिन' १८ नाट प्रति घटे की गति से सामान्य जल मे चल सकता है। बर्फ को चीरते हुए वह २ नाट प्रति घटे की गति से चलता है।

सयुक्त राष्ट्र अमेरिका मे इस समय परमाणु ऊर्जा द्वारा चालित दो जहाज बन रहे थे। प्रथम जहाज, सेवानाह, व्यापारिक जहाज है जो १९६० के लगभग तैयार हुआ। दूसरा युद्ध पोत लाग बीच १९६१ मे तैयार होने को था।

सेवानाह जहाज बनाने का प्रारम्भ २२ मई, १९५८ से हुआ। २१ जुलाई, १९५९ को इसका सारा ढाँचा तैयार हो गया और इसे जल मे तैरा दिया गया। पुस्तक लिखते समय इसकी परमाणु भट्ठी पर कार्य हो रहा था। शीघ्र ही वे जहाज मे लगा दिये जाने को थी।

इस जहाज की लम्बाई १८० मीटर है। यह समुद्र मे २० नाट की गति से चल सकेगा और साढे नौ सहस्र (९,५००) टन सामान लाद सकेगा। इसमे ६० यात्रियो के ठहरने का स्थान बना है तथा १०० नाविक इस पर कार्य करेगे। इसका भार बीस सहस्र (२०,०००) टन होगा।

सेवानाह जहाज को दाबित जल प्रतिकारी द्वारा ऊर्जा प्राप्त होगी जिसमें समृद्ध यूरेनियम का प्रयोग होगा। प्रतिकारी में एक बार लगे

यूरेनियम के दण्ड जहाज को तीन वर्ष तक चला सकेंगे जिनसे वह बिना ईंधन लिये तीन लाख (३,००,०००) मील यात्रा कर सकेगा। जहाज की पूरी लागत बीस करोड़ (२०,००,०००००) रुपये होगी। सेवानाह जहाज में लगी परमाणु भट्ठी के सारे उपकरण बेलनाकार बर्तन में रखे गये हैं जिसका व्यास ११ मीटर और ऊंचाई १५ मीटर है।

परमाणु भट्ठी के सक्रिय भाग में ईंधन के ३२ दंड हैं। प्रत्येक दड में निष्कलंक इस्पात की २०० नलियां स्थित हैं। प्रत्येक नली का व्यास १३ सेंमी० है जिसमे यूरेनियम आक्साइड भरा गया है। इस यूरेनियम आक्साइड में यूरेनियम-२३५ समस्थानिक ४ प्रतिशत मात्रा में है। मध्यभाग मे, बोरान इस्पात के २१ नियन्त्रण दड भी हैं जो यथासमय काम आयेंगे। इस प्रतिकारी द्वारा दो वाष्प जनित्र काम करेंगे जो नोदक को बाइस सहस्र (२२,०००) हार्स पावर की ऊर्जा देंगे। इन दोनों जनित्रो द्वारा नोदक की टर्बाइन तथा एक विद्युत् जनित्र टर्बाइन कार्य करेगी। दूसरी टर्बाइन से विद्युत् का उत्पादन होगा जो जहाज के अन्य कामो मे आयेगी।

इस प्रतिकारी द्वारा हानिकारक विकिरणों से बचने का समुचित प्रबन्ध किया गया है। भट्ठी तथा दाब-पात्रो से चारों ओर ८४ सें० मी० मोटा जल-कवच और उसके ऊपर ८ से० मी० मोटा सीसे का कवच लगाया गया है। इसके ऊपर १५ सेमी० मोटा सीसा तथा १५ सेमी० मोटा पालीएथीलीन का दूसरा कवच रखा गया है। इन दोनों कवचों के चारों ओर और भी प्रबन्ध किये गये हैं। नीचे की ओर १.२ मीटर कंक्रीट की दीवार बनायी गयी है और ऊपर की ओर १.५ मीटर गहरे जल का घेरा डाला गया है। इस प्रकार इस जहाज को रेडियधर्मी विकिरणो से कोई हानि न पहुँच सकेगी। यदि भट्ठी मे कोई दुर्घटना हुई तो विकिरण पात्र के बाहर न निकल सकेंगे। यदि बाहर से जहाज मे कोई दुर्घटना हुई तब भी अन्दर भट्ठी पर उसका कोई प्रभाव न पडेगा और न ही पात्र का विदारण हो सकेगा। इन सब प्रबंधो के कारण लोगों का अनुमान है कि यह जहाज साधारण जहाजों से अधिक सुरक्षित होगा।

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका का दूसरा परमाणु-ऊर्जा द्वारा-चालित जहाज 'लाग-बीच' १९६१ मे तैयार हो जायगा। इसमे दो परमाणु भट्टियां लगायी जायँगी जिनके द्वारा पैंतीस सहस्र (३५,०००) हार्स पावर ऊर्जा का उत्पादन होगा। इस युद्ध पोत की अनुमानित गति ३० नाट होगी। इसी प्रकार का एक अन्य विशाल युद्ध-पोत बनाने का अमेरिका मे आयोजन हो रहा है। यह छियासी सहस्र (८६,०००) टन का स्थानान्तरण करेगा। इसको चालित करने के लिए आठ परमाणु भट्टिया लगायी जायँगी। यह जहाज १९६१-६२ तक तैयार हो जायगा और इसकी अनुमानित चाल ३३-३५ नाट के लगभग होगी।

कुछ अन्य राष्ट्रो मे भी परमाणु ऊर्जा द्वारा चालित जहाजो की योजना बन रही है। ब्रिटेन की जगत्-प्रसिद्ध व्यापारिक जहाज कम्पनी क्यूनार्ड ने घोषणा की है कि वह शीघ्र ही एक विशाल व्यापारिक जहाज बनाने का कार्य प्रारम्भ करेगी जो परमाणु ऊर्जा द्वारा चालित होगा।

फ्रास मे चालीस सहस्र (४०,०००) टन भार का विशाल टैंकर (तेल लादने वाले जहाज) बनाने के लिए प्रयोग हो रहे है। यह टैंकर परमाणु ऊर्जा से चलेगा।

जापान मे बीस सहस्र (२०,०००) टन भार का जहाज बनाया जायगा जिसकी चाल २३ नाट होगी। इस जहाज मे एक लाख अस्सी सहस्र (१,८०, ०००) किलोवाट ऊर्जा की परमाणु भट्ठी लगेगी जो दाबित जल श्रेणी की होगी। जापान बहुत काल से कुछ निवासियो को दक्षिणी अमेरिका भेजता है जिससे उसकी जनसख्या कम हो। यह जहाज इसी विशेष कार्यके लिये बनाया जायगा। इसके द्वारा दो सहस्र तीन सौ (२,३००) प्रवासी, दो सौ (२००) यात्री एवं बडी मात्रा मे सामान पहुँचाया जा सकेगा। इसके बनाने मे लगभग बारह करोड (१२,००,००,०००) रुपये की लागत लगेगी।

जर्मनी मे जहाज चालित करने की परमाणु-भट्ठियों पर कार्य हो रहा है। इन्ही अनुसन्धानो के हेतु हैम्बर्ग मे एक निगम बनाया गया है

जिसके द्वारा बाइस सहस्र (२२,०००) टन के टैंकर बनाने के लिए प्रयोग किये जा रहे हैं।

पनडुब्बी नावों मे उपयोग

पनडुब्बी नावो को चालित करने के लिए परमाणु ऊर्जा का सर्वप्रथम उपयोग जनवरी, १९५५ में हुआ। उस समय संयुक्त राष्ट्र अमेरिका मे बर्नी नाटिलस नामक पनडुब्बी नाव ने परमाणु ऊर्जा द्वारा चालित यात्रा प्रारम्भ की थी। दो बर्ष के काल में उसने बासठ सहस्र पांच सौ साठ (६२,५६०) मील की यात्रा की। यह यात्रा उसके पहली बार भरे ईंधन द्वारा ही सम्पन्न हो गयी थी। ऐसा अनुमान है कि इस काल मे चार किलोग्राम यूरेनियम ईंधन का व्यय हुआ था।

नवम्बर, १९५७ में नाटिलस के पुराने ईंधन को निकाल कर उसके स्थान पर नया यूरेनियम पहली बार भरा गया। उस काल तक उसके द्वारा पूरी की गयी यात्रा यदि तेल ईंधन द्वारा की गयी होती तो उसमें तीस लाख (३०,००,०००) गैलन तेल व्यय हो जाता।
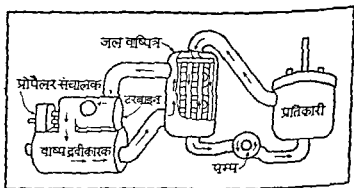
चित्र संख्या ३१—नॉटिलस की परमाणु-भट्ठी

इस पनडुब्बी नाव में दावित जल-प्रतिकारी लगाया गया है। जल

द्वारा ऊष्मा टर्बाइन में पहुँचती है और जल न्यूट्रानों को मन्द भी करता है। नाटिलस पनडुब्बी में सारी आवश्यक विद्युत् भी इसी परमाणु भट्ठी द्वारा उत्पन्न की जाती है।

जुलाई, १९५८ में नाटिलस ने उत्तरी ध्रुव की यात्रा बर्फ के नीचे-नीचे होकर की थी। इस यात्रा मे इस नाव को बहुत काल तक बर्फ के नीचे चलना पड़ा। इस यात्रा द्वारा, महत्त्वपूर्ण अन्वेषण सम्भव हुए तथा अमेरिका महाद्वीप से यूरोप तक जाने का नया मार्ग भी निकाला गया जो सामान्य मार्ग से कही छोटा है।

इस समय अमेरिका के समुद्री बेडे मे परमाणु ऊर्जा द्वारा चालित नावें है जिनके नाम निम्नलिखित है—

१. नाटिलस, १९५५ में तैयार हुई।
२. सीवुल्फ, मार्च १९५७ में तैयार हुई।
इकहत्तर सहस्र छः सौ (७१,६००) मील यात्रा करने के पश्चात् इसमें नयी परमाणु भट्ठी लगायी गयी है।
३. स्केट, दिसम्बर, १९५७ में तैयार हुई।
४. स्वोर्डफिश, सितम्बर, १९५८ में तैयार हुई।
५. सारगो, अक्टूबर, १९५८ मे तैयार हुई।
६. स्किपजैक, अप्रैल, १९५९ में तैयार हुई।
७. ट्राइटन, सितम्बर, १९५९ मे तैयार हुई।
८. सीड्रैगन, दिसम्बर, १९५९ मे तैयार हुई।
९. हेलीबुट, दिसम्बर, १९५९ में तैयार हुई।
१०. एथेन एलैन, नवम्बर, १९६० मे तैयार हुई।

इनके अतिरिक्त परमाणु ऊर्जा द्वारा चालित लगभग २० नयी पनडुब्बी नावें विभिन्न स्थानो पर अमेरिका मे बन रही है।

नाटिलस के एक सप्ताह पश्चात् दूसरी पनडुब्बी स्केट ने भी उत्तरी ध्रुव की यात्रा बर्फ के नीचे से की।* सीवुल्फ लगातार ६० दिन तक समुद्र के अन्दर डूबी अवस्था मे यात्रा कर चुकी है।

इन सारी पनडुब्बियों में एथेन एलैन को छोड़कर ट्राइटन सबसे बड़ी है। इसमे दो दावित जल परमाणु भट्टियां लगी हैं। यह नाव १३७ मीटर लम्बी है। तैरते समय यह पांच सहस्र पचास (५,०५०) टन जल स्थानान्तरित करती है, और डूबे रहते समय सात सहस्र सात सौ पचास (७,७५०) टन जल स्थानान्तरित करती है।

फरवरी, १९६० मे इस नाव ने अमेरिका के पूर्वी तट पर लांग आइलैंड से समुद्र के अन्दर यात्रा प्रारम्भ की और वह दक्षिणी अमेरिका की ओर चली। दक्षिणी अमेरिका के पूर्वी तट के निकट से होती हुई उस महाद्वीप के दक्षिणी सिरे तक पहुँच कर उसने प्रशान्त महासागर की ओर मुख किया। वहाँ पर अनेक टापुओं के निकट होती हुई वह फिलिपाइन द्वीप समूह के मध्य पहुँची। उसके पश्चात् वह इंडोनीशिया होती हुई दक्षिणी अफ्रीका की ओर चली। केप आफ गुड होप के निकट उसने फिर दिशा बदली और एटलांटिक महासागर के मध्य के मार्ग से वह लांग आइलैंड १० मई, १९६० को पहुँची। इस प्रकार वह ८४ दिन तक समुद्र के अन्दर लगातार यात्रा करती रही। इतने समय मे उसने सागर मार्ग द्वारा पूरे विश्व का चक्कर लगा लिया।

ब्रिटेन मे सर्वप्रथम पनडुब्बी नाव बनाने का कार्य मई, १९५९ से प्रारम्भ हुआ था। इस नाव का नाम ड्रेडनाट[1] है। यह नाव नवम्बर, १९६० में तैयार हो गयी।

ऐसा अनुमान है कि सोवियत रूस में परमाणु द्वारा चालित पनडुब्बियाँ अवश्य बनायी गयी होंगी या उन पर कार्य हो रहा होगा। परन्तु अभी तक इस कार्य को वहाँ की सरकार ने गोपनीय ही रखा है।

भविष्य में परमाणु ऊर्जा के चालित-उपयोग

अभी तक परमाणु ऊर्जा का उपयोग सामुद्रिक यातायात मे ही हुआ

1. Dreadnougt

है। परन्तु ऐसी आशा है कि शीघ्र ही यह स्थल, वायु एवं अतरिक्ष यातायात मे भी काम आयगी। वायुयान चालित करने के लिए परमाणु प्रतिकारी पर तीव्र गति से कार्य हो रहा है।

वायुयानों में उपयोग

जिस समय प्रथम परमाणु बम बना उसी समय वैज्ञानिको का ध्यान इस ओर गया था। अमेरिका मे इस दिशा मे १९४६ से कार्य हो रहा है यद्यपि १९५१ तक केवल सैद्धान्तिक कार्य ही हुआ। जुलाई, १९५२ से वहाँ प्रायोगिक अनुसंधान प्रारम्भ हुए। यह कार्य इडाहो राज्य के परीक्षा प्रतिकारी केन्द्र[1] मे प्रारम्भ हुआ था। इस केन्द्र मे वायुयान के इंजन तथा कवच की बनावट पर भी प्रयोग किये गये हैं। वायुयान मे उपयोग होने वाले प्रतिकारी के साथ विशेष समस्याएँ जुड़ी हुई है। वायुयान सदा हिलता-डुलता रहता है। उसकी दिशा, ऊंचाई और गति बदलती रहती है। इस कारण उसका प्रतिकारी ऐसा होना आवश्यक है जो धक्के आदि सह सके और उलटने-पुलटने पर भी चलता रहे। यदि वायुयान किसी दुर्घटना का शिकार हो जाये तो उस समय प्रतिकारी द्वारा हानिपूर्ण कण एवं विकिरण न निकलने चाहिए। इन सारी समस्याओ को सुलझाने के लिए इडाहो राज्य के प्रायोगिक केन्द्र में कार्य हो रहा है। कई प्रयोगों में जानबूझ कर दुर्घटनाए की गयी है और उनके द्वारा उपयोगी परिणाम मिले हैं।

रूस में वायुयान प्रतिकारी के सम्बन्ध मे हुए कार्यों की कुछ झलक हाल मे मिली है। वहाँ दो प्रकार के प्रतिकारियों पर प्रयोग हो रहे है। एक प्रतिकारी मे ऊष्मा ले जाने का कार्य वायु द्वारा होगा। इसमें यूरेनियम-२३५ और बेरीलियम धातु के समिश्र का बेलन के रूप मे उपयोग

1. Test Reactor Station, Idaho

होगा और इसके मध्य भाग का व्यास १.९ मीटर होगा। इसके चारों ओर वेरीलियम धातु के प्रत्यावर्तक लगे होंगे। मध्य भाग सत्रह सहस्र (१७,०००) छोटी वायु-नलिकाओं से छिद्रित होगा। प्रतिकारी के कार्य करते समय इन छिद्रो का ताप लगभग ११००° सेन्टीग्रेड होगा। नलिकाओ द्वारा वायु का प्रवेश होगा और यह वायु ९५०° सेन्टीग्रेड तक ऊष्मित हो जायगी। मध्य भाग मे ७० किलोग्राम यूरेनियम-२३५ और दो सहस्र (२,०००) किलोग्राम वेरीलियम लगेगा। सम्पूर्ण प्रतिकारी का भार नौ सहस्र पाँच सौ (९,५००) किलोग्राम होगा।

रूसियों द्वारा एक अन्य प्रतिकारी के उपयोग किये जाने की भी आशा है। इसमे तरल लीथियम प्रतिकारी में चक्रित होगा। एक सहस्र एक सौ (१,१००) किलोग्राम समृद्ध यूरेनियम (जिसमें ५०% यूरेनियम-२३५ होगा) इसमें लगेगा। यूरेनियम मध्यभागीय बेलन का व्यास और लम्बाई ०.८ मीटर होगी। प्रतिकारी के मध्यभाग द्वारा सरल लीथियम का प्रवाह होगा जो उत्पन्न ऊष्मा को ऊष्मा-विनिमायक मे स्थानान्तरित करेगा। तरल लीथियम का ताप प्रतिकारी में प्रवेश करते समय ७५०° सेन्टीग्रेड और निकलते समय ९५० सेन्टीग्रेड रहेगा। तरल लीथियम की ऊष्मा, विनिमायक द्वारा वायु को मिलेगी। यह गर्म वायु टर्वो इजन को चालित करेगी।

ऐसा अनिश्चित समाचार मिला है कि रूस में पहली श्रेणी के प्रतिकारी द्वारा चालित वायुयान बन गया है और उस पर प्रारम्भिक परीक्षाएं की जा रही हैं।

अंतरिक्ष यातायात विषयक कार्य

परमाणु ऊर्जा अगले दस वर्षो मे अन्तरिक्ष यात्रा के लिए बहुत उपयोगी होगी। तीव्र वेग से अधिक दूरी तक जाने की समस्या इसी के द्वारा हल होगी। इसके दो प्रकार के उपयोग होंगे। एक उपयोग राकेट या अन्तरिक्ष यान को पृथ्वी से छोड़ने पर आकाश में चालित

करने के निमित्त होगा तथा दूसरा उसके अन्दर आवश्यक ऊर्जा देने का होगा।

राकेट विज्ञान के शास्त्रियों का विचार है कि परमाणु ऊर्जा का पहला उपयोग परीक्षण कार्य के लिए होगा। उसके कुछ समय पश्चात् अन्तरिक्ष यान को चलाने में भी उसका उपयोग सम्भव हो जायगा। उपग्रह आदि श्रेणी के अन्तरिक्ष यानों में लगे हुए यातायात उपकरण, कक्षा का नियन्त्रण करने एवं बदलने वाले यन्त्र, भौतिक मापन के निमित्त लगे उपकरण इत्यादि के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यह ऊर्जा इन्हें प्रायः विद्युत् के रूप में प्रदान की जाती है। इस कारण इन यन्त्रों में परमाणु ऊर्जा का उपयोग बहुत उपयुक्त होगा। अन्तरिक्ष यात्रा के प्रयोगों के लिए अमेरिका तथा सोवियत संघ, दोनों देशों में, प्रायोगिक प्रतिकारियों पर कार्य हो रहा है।

नवम्बर, १९५९ में अमेरिका के परमाणु ऊर्जा आयोग ने घोषणा की कि उसने एक छोटा परमाणु प्रतिकारी बनाया है, जिसके द्वारा अन्तरिक्ष यानों को ऊर्जा मिल सकती है। इसका नाम स्नैप[1]-२ रखा गया। इसका भार लगभग ११० किलोग्राम है। इसका आकार पाँच गैलन के पेट्रोल पीपे के बराबर है। इसमें समृद्ध यूरेनियम का ईंधन लगता है। इससे पचास सहस्र (५०,०००) वाट ऊष्मा उत्पन्न होगी। प्रतिकारी के साथ फुटबाल के आकार का टर्बाइन जनित्र लगा है। इस जनित्र के द्वारा तीन किलोवाट अथवा तीन सहस्र (३,०००) वाट विद्युत् बनेगी। इस जनित्र को जल के स्थान पर पारद-वाष्प द्वारा चलाया जायगा। प्रतिकारी में यूरेनियम खण्डन क्रिया से उत्पन्न ऊष्मा, तरल सोडियम द्वारा वाष्पित्र में पहुँचेगी। वहाँ पर पारद-वाष्प उच्च ताप लेकर टर्बाइन को चलायेगी जिसके चलने से विद्युत् उत्पन्न होगी।

1. Snap II

परमाणु विस्फोट के शान्तिपूर्ण उपयोग

परमाणु एव हाइड्रोजन बम अभी तक विध्वंस के अस्त्र माने जाते हैं। परन्तु भविष्य में ये ही अस्त्र शान्तिपूर्ण उपयोगों में आयेंगे। इनके द्वारा पृथ्वी के गर्भ से मनुष्य के लाभ के लिए सरलता से वस्तुएँ निकाली जा सकेंगी। दो-तीन वर्ष की परीक्षाओं से वैज्ञानिको को पृथ्वी के अन्दर परमाणु विस्फोट करने की रीति ज्ञात हो गयी है। इस रीति से पृथ्वी के अन्दर गहराई तक पहुँचना सरल एवं अत्यन्त सस्ता होगा। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि इस प्रकार के नियन्त्रित विस्फोटों से इंजीनियरी के अनेक चमत्कार सम्भव हो जायेंगे और विकिरण के हानिकारक प्रभावों को भी रोका जा सकेगा। इनमें निम्नलिखित लाभ विशेष है—

१. खानों को बनाने मे इसका विशेष उपयोग होगा। परमाणु विस्फोट द्वारा खान के ऊपर की पृथ्वी को हटाया जा सकेगा। इस क्रिया का व्यय सामान्य रासायनिक विस्फोटों के व्यय का १/१० वाँ भाग होगा।

२. परमाणु विस्फोटों द्वारा बन्दरगाह के किनारे जल गहरा किया जा सकेगा, नदी या सामुद्रिक मार्गों से चट्टानें हटायी जा सकेंगी, नदियों को गहरा बनाया जा सकेगा और नहरें या यातायात के अन्य मार्ग खोले जा सकेंगे। इस प्रकार परमाणु विस्फोट ऊर्जा, व्यापार और विश्व के विकास में सहायक होगी। यदि यही कार्य अन्य रीतियों से किया जाय तो उसकी लागत परमाणु क्रिया की लागत से चालीस गुनी अधिक होगी।

३. तेल के व्यवसाय में इसका अत्यन्त आवश्यक उपयोग हो सकेगा। विश्व मे तेल की खपत दिन पर दिन बढ़ रही है। पिछड़े देशों में हो रहे विकासके कारण यह खपत और भी अधिक हो जायगी। अभी तक तेल निकालने के लिए गहरे कुएँ खोदने पड़ते हैं। परन्तु इस प्रकार खोदने की भी एक सीमा है और उस सीमा से अधिक गहराई पर स्थित तेल को पुरानी रीति से नहीं निकाला जा सकता। वैज्ञानिकों का

अनुमान है कि अधिक गहराई पर अब भी इतना तेल है कि जिसे मानव जाति सैकडों वर्ष तक उपयोग मे ला सकती है। इसको निकालने के लिए परमाणु विस्फोट का ही सहारा लेना होगा। ऐसी रध्रमय चट्टानों के लिए जिनका तेल सामान्य विधि से नही निकल सकता, परमाणु ऊर्जा उपयोगी होगी।

४. यदि बहुत गहराई पर परमाणु विस्फोट किया जाय तो उसमे उत्पन्न ऊष्मा ऊर्जा मे परिणत की जा सकती है। यह अनुमान है कि उचित स्थान पर एक सहस्र (१,०००) मीटर की गहराई पर विस्फोट करने से आठ अरब (८×१०^९) किलोवाट घण्टा विद्युत् उत्पादित होगी। यह विद्युत् बहुत सस्ती होगी और ऐसे स्थानो पर उत्पादित हो सकेगी जहां अन्य कोई साधन उपलब्ध न हो।

५. नदियो की गुप्त धाराओं को परमाणु विस्फोट द्वारा बाहर लाया जा सकता है। इस विधि द्वारा ऐसे स्थानो पर जहां जमीन के ऊपर जल न हो, सरलता से नदी की धारा लायी जा सकेगी। इस प्रकार नदी आदि के मार्ग भी बदलना सम्भव हो सकेगा।

६. अभी तक रेडियधर्मी समस्थानिक, तत्त्वातरण प्रयोगो द्वारा अथवा परमाणु प्रतिकारियों द्वारा ही बनते है। ये बड़ी महँगी क्रियाएँ है। इसी कारण इन तत्त्वो का उपयोग जन-साधारण के लिए प्राय सुलभ नही है। यह सम्भव है कि भविष्य मे नियन्त्रित परमाणु-विस्फोटो द्वारा प्रचुर मात्रा में अत्यन्त सस्ते रेडियधर्मी समस्थानिक बनाये जा सकें जिससे वह प्रत्येक मनुष्य की पहुँच मे आ जायँ और साधारण क्रियाओ के लिए उपलब्ध हो सकें।

१९५७ में अमेरिका मे एक परीक्षात्मक विस्फोट किया गया। इसमें छोटे बम का उपयोग किया गया था जिसका विस्फोट एक सहस्र सात सौ (१,७००) टन टी० एन० टी० के समान था। इससे विस्फोट के स्थान पर स्थित चट्टानो का वाष्प बन गया। ३ मीटर दूरी की चट्टाने तरल पदार्थ मे परिणत हो गयी और ३० मीटर दूरी की चट्टानो का चूर्ण बन गया। लगभग

सारी रेडियधर्मिता ७ सौ टन वने तरल पदार्थ में अवशोषित हो गयी। १९५८ में एक और वड़ा विस्फोट उत्पन्न किया गया था जिससे बहुत उत्साहजनक परिणाम निकले।

इस दिशा में अभी बहुत अनुसन्धान-कार्य की आवश्यकता है। उस सबके सफलतापूर्वक सम्पूर्ण होने के पश्चात् परमाणु-विस्फोटों के उपयोग मानव जाति के काम आयेंगे।

अध्याय १४

परमाणु-ऊर्जा के उपयोग---३

रेडियधर्मी समस्थानिक

मध्य युग के कीमियागर क्षुद्र तत्त्वो को स्वर्ण मे परिणत करना चाहते थे। वे इसमे असफल रहे। परन्तु उनके स्वप्नो को आज के भौतिक शास्त्रियो ने सत्य कर दिया। प्रकृति मे रेडियधर्मी क्रिया सर्वदा होती चली आयी है जिसके द्वारा एक तत्त्व दूसरे तत्त्व मे नियमानुसार बदलता रहता है। पिछले अध्यायो मे पाठको को ज्ञात हो चुका है कि किस प्रकार विभिन्न उपायो से मनुष्य ने यह क्रिया प्रयोगशाला मे तथा बड़े पैमाने पर सिद्ध की।

प्राकृतिक रेडियधर्मी तत्त्वो के अनेक उपयोग ज्ञात हो चुके है। रसायन, खेती, व्यवसाय, चिकित्सा आदि मे कुछ समय से ये काम मे लाये जा रहे है। उदाहरण के लिए कैंसर चिकित्सा मे रेडियम का उपयोग ३० वर्षो से भी अधिक पहले से किया जा रहा है। फिर भी इन तत्त्वो के उपयोग सीमित है।

कृत्रिम रेडियधर्मिता की खोज से रेडियधर्मी समस्थानिकों की उपयोगिता बहुत बढ गयी है। तत्त्वान्तरण प्रयोगो द्वारा अनेक रेडियधर्मी तत्त्व बनाये गये जिनका वर्णन कृत्रिम रेडियधर्मिता के अध्याय मे किया गया है। इनकी उपयोगिता के बढाने में न्यूट्रान की सहायता विशिष्ट थी।

केवल इस कण के द्वारा सैंकड़ो रेडियधर्मी तत्त्व प्रयोगशालाओ में बनाये गये। इन खोजों के पश्चात् भी यदि यूरेनियम खण्डन की खोज न हुई होती तो कृत्रिम रेडियधर्मिता जन-साधारण के दैनिक उपयोगो मे न आ पाती। यूरेनियम-खण्डन-शृखला द्वारा वैज्ञानिको के हाथ मे न्यूट्रान का

बहुत बड़ा स्रोत आ गया, यह बात पाठक पिछले अध्यायों में भली प्रकार पढ़ चुके हैं। नाभिक प्रतिकारी अथवा परमाणु भट्ठी मे यूरेनियम-२३५ के नाभिक खण्डन की शृंखला न्यूट्रानो के कारण चलती है।

जिस समय प्रतिकारी चालू रहता है, उस समय उसमें बड़ी मात्रा में न्यूट्रानों का वायुमण्डल वर्तमान रहता है। एक साधारण परमाणु पुंज मे छ लाख अरब (६×१०^{११}) न्यूट्रान प्रति सेकेण्ड प्रति वर्ग सेण्टीमीटर क्षेत्रफल द्वारा निकलते है। इतनी प्रचुर मात्रा मे किसी और क्रिया द्वारा न्यूट्रान का स्रोत उपलब्ध होना असम्भव है।

पाठकों को सरलता से ज्ञात हो जायगा कि न्यूट्रान प्रतिक्रिया के लिए परमाणु पुंज अथवा भट्ठी से अच्छा कोई उपकरण नही है। कृत्रिम रेडियधर्मिता के अध्याय में हम देख चुके हैं कि मन्द न्यूट्रान रेडियधर्मी समस्थानिकों के बनाने में अधिक उपयोगी सिद्ध हुए हैं। हमने यह भी देखा है कि अधिकतर प्रतिकारियों में न्यूट्रानो को मन्द करने के संयन्त्र रहते हैं। इस प्रतिक्रिया के लिए सबसे उपयुक्त दशा परमाणु-पुंज में उपलब्ध है।

परमाणु भट्ठी द्वारा कृत्रिम रेडियधर्मी तत्त्व बनाने की विधि इस प्रकार है। प्रतिकारी के कवच में विशेष रूप की अनेक नलिकाएं बनी रहती हैं। इन नलिकाओं द्वारा यौगिक या तत्त्व प्रतिकारी के अन्दर विभिन्न गहराइयों तक प्रवेश कराया जाता है। प्रतिकारी के चालू होने पर इस यौगिक या तत्त्व पर न्यूट्रानों का निरन्तर वेगपूर्ण आक्रमण होता है। यह ऊपर बताया जा चुका है कि परमाणु-प्रतिकारी के अन्दर विशाल मात्रा मे न्यूट्रान उत्पन्न होते रहते हैं। यही न्यूट्रान उस तत्त्व अथवा यौगिक के अन्दर स्थित तत्त्व पर प्रतिक्रिया करते हैं जिससे रेडियधर्मी समस्थानिकों का जन्म होता है। अधिकतर जिस तत्त्व या उसके यौगिक का नलिका द्वारा प्रतिकारी मे प्रवेश कराते हैं वह उसी तत्त्व के रेडियधर्मी समस्थानिक मे परिणत हो जाता है। उदाहरण के लिए कोवाल्ट से रेडियो-कोबाल्ट बनता है और सोडियम यौगिक द्वारा हम रेडियो-सोडियम प्राप्त कर सकते हैं। कभी-कभी एक तत्त्व प्रयोग करने से दूसरा रेडियधर्मी तत्त्व उत्पन्न हो जाता है, जैसे नाइ-

ट्रोजन से रेडियोकार्बन, क्लोरीन से रेडियो सल्फर आदि। इस समय लगभग एक सहस्र रेडियधर्मी समस्थानिक ज्ञात है। इनमे से अनेक तत्त्वो का, मुख्यतः उनका जिनकी अर्धजीवन अवधि अत्यन्त अल्प नही है, विभिन्न कार्यो के लिए उपयोग किया जा रहा है।

वर्तमान समय मे रेडियधर्मी समस्थानिको के निर्माण का यही मुख्य साधन है। प्रतिकारी द्वारा ही हमे कुछ और रेडियधर्मी समस्थानिक भी मिलते है। ये समस्थानिक मन्द न्यूट्रानो की प्रतिक्रिया से सीधे नही बनते, वरन् यूरेनियम पर न्यूट्रान के आक्रमण करने से उत्पन्न होते है। यूरेनियम–२३५ पर न्यूट्रान प्रतिक्रिया द्वारा यूरेनियम नाभिक का खण्डन होने के कारण बहुत-से खण्ड एकत्र होते रहते है। ये खण्ड वे रेडियधर्मी तत्त्व है जिनका परमाणु भार एवं परमाणु-सख्या यूरेनियम के आधे के लगभग होती है। ये तत्त्व बड़े महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुए है। अब हमे यह ज्ञात है कि इन्ही खण्डो मे दो ऐसे तत्त्व (टेकनीशियम और प्रोमीथियम) मिले है जो प्रकृति मे नहीं पाये जाते।

यह बताना आवश्यक है कि अब भी त्वरक द्वारा रेडियधर्मी समस्थानिक प्राप्त किये जाते हैं। परन्तु इनकी मात्रा एव संख्या प्रतिकारी की अपेक्षा बहुत कम है। कुछ पारयूरेनियम तत्त्व केवल त्वरक द्वारा ही प्राप्त हो सके है। इनमे आइंस्टीनियम, फर्मियम, मेडलीवियम और नोवेलियम उल्लेखनीय है।

रेडिय-तत्त्वों के उपयोग

रेडिय-समस्थानिक का सबसे सरल उपयोग विकिरण स्रोत के रूप में हो सकता है। रेडियम और एक्स-रे के अनेक उपयोग हो रहे हैं। इनके द्वारा फोटोग्राफी प्लेट पर चित्र लिये जाते हैं और ये चिकित्सालयो मे रोगियों की चिकित्सा मे सहायक होते रहे है। ये इनके विकिरण उपयोग है। रेडियम से गामा-विकिरण निकलते हैं जो एक्स-विकिरण से अधिक वेगवान और अधिक दूरी तक द्रव्य मे यात्रा कर सकते हैं। इस कारण इन दोनों का

आवश्यकतानुसार उपयोग हो रहा है। अन्य कृत्रिम रेडिय-तत्त्वों से भी ये कार्य किये जा सकते हैं।

रेडिय-तत्त्वों का सकेतक के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। हम उन तत्त्वो को जिनकी उपस्थिति का ज्ञान उनके विकिरणों द्वारा होता है सकेतक परमाणु कहते हैं। उदाहरण के लिए हम सोडियम को लें। साधारण सोडियम की भार-सख्या २३ है। यह परमाणु रेडियधर्मी नही है और इनके द्वारा कोई विकिरण नही निकलते। सोडियम--२४ साधारण सोडियम (भार सख्या २३) का समस्थानिक है। रासायनिक गुणों में दोनों समान हैं। यदि दोनो को मिला दिया जाय तो किसी भी रासायनिक क्रिया द्वारा ये पृथक् नही किये जा सकते तथा रासायनिक क्रियाओं में दोनों साथ-साथ जायेंगे। परन्तु दोनो परमाणुओं में एक विशेष भौतिक अन्तर है जिसे हम रेडियधर्मिता का अन्तर कह सकते है। सोडियम--२४ रेडियधर्मी है और वह बीटा एवं गामा-विकिरण को स्वतन्त्र करता है इससे सोडियम--२४ की उपस्थिति ज्ञात करना बडा सरल है, चाहे वह कही भी अति न्यून मात्रा में मिलाया गया हो। इन विकिरणों के पहचानने वाले यन्त्र (गाइगर-मुलर गणक आदि) बडे सवेदनशील होते हैं और थोड़े से परमाणुओ की रेडियधर्मिता की परीक्षा कर सकते हैं। यदि हम साधारण सोडियम के साथ न्यून सा सोडियम--२४ मिला दें तो यह अपनी उपस्थिति की सूचना गणक द्वारा देता रहेगा। यह प्रतिक्रिया करेगा और जिस स्थान में प्रवेश करेगा उसकी सूचना सदा देता रहेगा। हम इसे परमाणु-जासूस की उपाधि दे सकते हैं क्योकि यह हमे ऐसी क्रियाओ की सूचना दे सकता है जिनका ज्ञान अन्य भौतिक या रासायनिक विधियो द्वारा नही हो सकता। रेडियधर्मी समस्थानिकों के इन उपयोगो को सकेतक विधि कहा जाता है।

सकेतक विधि बहुमुखी है और वैज्ञानिकों के हाथ में एक प्रबल अस्त्र है। इस विधि मे तत्त्वो का सीधा प्रयोग हो सकता है अथवा इनके द्वारा तत्त्व को यौगिक रूप मे काम लाया जाता है। इसकी अत्यधिक सवेदनशीलता और विशिष्टता ही इसकी शक्ति का रहस्य है। इन रेडिय-तत्त्वो को अत्वो

गुना तनु करने के पश्चात् भी सरलता से पहचाना जा सकता है। यदि एक ग्राम रेडियधर्मी-कार्बन को (शर्करा के रूप मे) एक अन्य ग्राम साधारण शर्करा के साथ मिश्रित किया जाय तो हम रेडियधर्मी शर्करा को सरलता से पहचान सकेंगे।

किसी तत्त्व की रासायनिक अवस्था का उसकी रेडियधर्मिता पर कोई प्रभाव नही पडता। उदाहरण के लिए यदि हम कुछ रेडियधर्मी कैलशियम मृत्तिका मे मिश्रित कर दे और उससे उपजे घास को कोई गाय खाये, तो गाय से निकले दूध मे उपस्थित कैलशियम मे उसी प्रकार की रेडियधर्मिता होगी जो मृत्तिका मे वर्तमान थी। यदि इस दुग्ध को किसी अन्य जानवर को पिलाया जाय तो उसकी हड्डियो मे हमे रेडिय-कैलशियम ज्ञात पडेगा। इन प्रयोगो द्वारा हमे स्पष्ट रूप से ज्ञात हो जायगा कि मृत्तिका का कैलशियम किस प्रकार खाद्य पदार्थ मे जाता है, किस प्रकार खाद्य पदार्थ का कैलशियम जानवर लेते तथा छोडते है और अन्त मे किस प्रकार उनके दूध मे मिले कैलशियम का अवशोषण अन्य जीव अपने शरीर द्वारा करते है। यह अद्भुत बात है कि एक स्थान पर एक रेडिय-तत्त्व डालने से इतने प्रयोग सम्भव हो सकते है। इसी कारण हम कहते है कि सकेतक विधि अत्यन्त विशिष्ट है।

रेडियधर्मी सकेतक परमाणुओ द्वारा अत्यन्त तनु सान्द्रता पर प्रयोग किये जा रहे है। इतनी सान्द्रता पर अन्य विधि से प्रयोग असम्भव थे। उनके द्वारा ऐसी रासायनिक एव अन्य औद्योगिक क्रियाओ का ज्ञान हो गया है जो अभी तक न हो सका था।

रेडियधर्मी तत्त्वों की उपयोगिता का ज्ञान सकेतक विधि से भौतिक, रासायनिक एव जीव-विज्ञान के सारे भागो मे हो चुका है। यह व्यावहारिक समस्याओ के लिए भी उपयुक्त है। चिकित्सा, खेती, उद्योग, इजीनियरी आदि मे इन तत्त्वो का बहुत अधिक प्रयोग हुआ है। अब हम पाठको के सामने इनमे से कुछ उपयोगो का वर्णन करेगे। इन्हे केवल सकेत मात्र ही समझना चाहिए।

औद्योगिक उपयोग

रेडियधर्मी तत्त्वों के औद्योगिक उपयोग तीन कारणों से सम्भव हो सके है —

१. पदार्थों पर विकिरण के प्रभाव के कारण

२. विकिरण पर पदार्थ के प्रभाव द्वारा

३. विकिरण द्वारा पदार्थ की पहचान से

अभी तक सारे प्रभावों का पूर्ण रूप से उपयोग नही किया गया है। परन्तु आशा है कि भविष्य में इनके द्वारा तत्त्वों के उपयोग और बढ जायेंगे। यहाँ कुछ औद्योगिक उपयोगों की ओर संकेत किया जा रहा है।

रेडियधर्मी विकिरण से आयनीकरण होता है। इसके द्वारा स्थिर विद्युत् के खतरे को दूर किया जा सकता है। अनेक उद्योगों मे स्थिर विद्युत् वड़ी हानिकारक सिद्ध हुई है। कभी-कभी जमा किये माल में इसके कारण आग लग जाती है तथा इसके शक्तिशाली धक्के से कार्यकर्ताओं की मृत्यु हो जाती है। रेडियधर्मी तत्त्व के प्रयोग से वायु का आयनीकरण होता रहता है जिससे स्थिर विद्युत् जमा नही हो पाती। आयनीकरण का उपयोग रेडियो वाल्वो मे भी हो रहा है। कुछ विशेष प्रकार के वाल्वों मे आयनीकरण आवश्यक है। इनमें कुछ मात्रा में रेडियधर्मी तत्त्व रख दिये जाते हैं जिनके द्वारा वाल्व के अन्दर की गैस आयनीभूत रहती है।

यदि किसी वस्तु के भीतर विकिरण प्रवेश करे तो उसके कुछ अंश का वस्तु द्वारा अवशोषण हो जायगा। यह अवशोषण उस वस्तु की मुटाई, या उसकी बनावट पर निर्भर होगा। इसी सिद्धान्त पर औद्योगिक रेडियोग्राफी निर्भर है। रेडियम का इस कार्य मे बहुत काल से उपयोग होता चला आ रहा है। अब उसके स्थान पर सस्ते कृत्रिम तत्त्व, जैसे कोबल्ट–६०, सीजियम–१३७, इरीडियम–१९२ काम मे लाये जाते हैं। इस प्रयोग द्वारा किसी धातु, मिश्र धातु या अन्य वस्तु की बनावट, समतलता या किसी खराबी की जाँच हो सकती है। जिस वस्तु या भाग की जाँच की जानी है उसे रेडियधर्मी स्रोत के सामने रखा जाता है। उसके पीछे फोटोग्राफी के

प्लेट रखते है। स्रोत द्वारा गामा-विकिरण स्वतन्त्र होते है जो वस्तु से अवशोपित होते हुए प्लेट पर पड़ते हैं। यदि किसी स्थान पर बनावट की खराबी हुई या कोई छेद या दरार आदि हुई तो उस स्थान पर अवशोपण अन्य स्थानों के समान न होगा। फोटोग्राफी प्लेट पर उस स्थान का अलग निशान पड जायगा। इस प्रकार वस्तु के अन्दर की वे त्रुटियां ज्ञात हो जाती है जिन्हें बाहर से न देखा जा सके।

इसी प्रकार धातु की चादरो की जाँच बडी सरलता से हो मकती है। बहुत उद्योगों में समान मुटाई की धातु की चादरो की आवश्यकता पडती है। ऐसी चादर के बनते समय उसके बीच से गामा-विकिरण का प्रवाह करते है। दूसरी ओर गाइगर-मुलर गणक द्वारा उसकी तीव्रता की निरन्तर जाँच होती रहती है। यदि किसी स्थान पर आवश्यकता से अधिक मोटी अथवा पतली चादर का भाग आयेगा तो इसकी सूचना तुरन्त गणक द्वारा मिल जायगी और चादर के उस भाग को हटाया जा सकेगा। इसी प्रकार की जाँच अच्छे गुण के कागज या रबर के लिए भी की जाती है। रेडियधर्मी तत्त्वों के उपयोग के पहले यह कार्य सुचारु रूप से न हो सकता था।

विकिरण के प्रत्यावर्तन द्वारा भी अनेक वस्तुओं की सतह तथा उसकी मुटाई की जांच इसी प्रकार से सम्भव हो गयी है। विकिरण का प्रत्यावर्तन अनेक कारणों पर निर्भर रहता है, जिनमें विकिरण की ऊर्जा, वस्तु का घनत्व, स्वरूप, तथा मुटाई मुख्य है। इसी सिद्धान्त के अनुसार किसी धातु पर लगे रंजक की मुटाई तथा गुण की जाँच हुआ करती है। इसी से मृत्तिका घनत्व एव उसकी आर्द्रता की जाँच बहुत जल्दी हो जाती है तथा प्रयोगशाला के लम्बे प्रयोग बच जाते हैं। मृत्तिका की आर्द्रता की जांच के लिए न्यूट्रान-स्रोत का उपयोग करते हैं। न्यूट्रानो को हाइड्रोजन परमाणु जल्द प्रभावित करते है।

सबेतक विधि के सभी औद्योगिक उपयोगों को गिनाना कठिन कार्य है। धातु-उद्योग को इससे बडा लाभ पहुँचा है। किसी इंजन के पिस्टन के घिसने की मात्रा इससे सरलता से ज्ञात हो जाती है। वलय मे रेडिय-आयरन

की मात्रा लगा दी जाती है। तत्पश्चात् उसमें पिस्टन को चलाया जाता है। वलय में पिस्टन के चलने से वलय की सतह की धातु घिसती रहती है और उसमें पड़े स्नेहक में रेडिय-तत्त्व आ जाता है। समय-समय पर इस तेल की गणक द्वारा जांच करने से वलय घिसने की मात्रा ज्ञात हो जायगी। इसका उपयोग मशीन के पुर्जे की घिसावट के बारे में दूसरी प्रकार से भी हो सकता है। कोई भी आवश्यक पुर्जा समय व्यतीत होने से घिसता रहता है, और निश्चित दशा के बाद उसे बदलना आवश्यक हो जाता है। मान लीजिए हमें यह ज्ञात है कि अमुक पुर्जा १ मिलीमीटर घिसने के पश्चात् बेकार हो जाता है अत तब उसे बदलना चाहिए। वह नियत समय जानने की कठिनाई रेडिय-तत्त्व द्वारा हल हो सकती है। उस पुर्जे को १ मिलीमीटर गहराई में रेडिय-तत्त्व रख दिया जाता है। जिस समय पुर्जा १ मिलीमीटर घिस जायगा रेडिय-तत्त्व सतह पर आ जायगा और उसका कुछ अंश स्नेहक तेल में मिलेगा। तेल की जाँच द्वारा हमें ज्ञात होगा कि अमुक समय पर पुर्जा बदल दिया जाय। इसी प्रकार के प्रयोगों द्वारा ऐसे तेल की खोज होना सम्भव है जिसका प्रयोग करने से पुर्जों की घिसाई में कमी आ जाय।

रेडियधर्मी संकेतको द्वारा लम्बे पाइपो मे हुए छिद्रों की जाँच हो जाती है। भूमि के भीतर लगे जल या अन्य वस्तुओ के, लम्बे पाइप मे यदि छिद्र हो जाय तो उसकी जाँच करना कठिन होता है। इन छिद्रो से जल या तेल तब तक निकलता रहेगा जब तक कि सारे पाइप को खोद कर निकाला न जाय। उस छिद्र के स्थान का ज्ञान अन्य किसी प्रकार से नही हो सकता।

इस कठिनाई को रेडिय-तत्त्वों ने बड़ी सुन्दरता से सुलझा दिया है। जल मे न्यून मात्रा मे रेडियो-सोडियम या रेडियो-आयोडीन मिलाकर पाइप मे प्रवाहित कर देते हैं। अब ऊपर से गणक द्वारा उसके प्रवाह की जाँच की जाती है। जिस स्थान पर छिद्र होगा उसी स्थान से गणक का पाठ्यांक कम हो जायगा। बस उसी स्थान को खोद कर पाइप की मरम्मत की जा सकती है अथवा उसे बदला जा सकता है। इन रेडियधर्मी तत्त्वों की अर्धजीवन अवधि कम है। इस क्रिया मे अल्प अर्धजीवन अवधि के

रेडिय-तत्त्वों का प्रयोग होता है जिससे थोड़े समय पश्चात् उनके विकिरणों का स्वतः क्षय हो जाय और किसी को उनके द्वारा हानि पहुंचने की आशंका न रहे।

धातु-कर्म मे रेडियधर्मी तत्त्वो के अनेक प्रयोग हुए है। इनके द्वारा अनेक प्रकार की भट्टियो मे लगी प्रायोगिक ईंटो की दृढ़ता तथा जीवन अवधि पर प्रकाश पड़ा है। इस्पात उद्योग मे ईंटो की बनावट का भट्ठी के जीवन पर विशेष प्रभाव पड़ता है। भट्ठी बनाते समय भिन्न-भिन्न गहराइयों पर विभिन्न रेडियतत्त्व रख दिये जाते है। भट्ठी के उपयोग होते समय ऊष्मा उत्पन्न की जाती है। इसके तथा अयस्क आदि की प्रतिक्रियाओं के कारण ईंटो की तह घिसती रहती है। विभिन्न गहराइयो तक सक्षरण होने पर भिन्न-भिन्न रेडियतत्त्व बाहर आकर धातु मे मिलते है। भिन्न काल मे तैयार हुई धातु का गणक द्वारा विश्लेषण करने से भट्टी के सक्षरण का ज्ञान होता है।

मिश्र धातुओ के सरचन पर रेडियधर्मी तत्त्वो द्वारा प्रकाश पड़ा है। प्रत्येक धातु के परमाणुओं की स्थिति का मिश्र धातु के गुण पर बहुत प्रभाव पडता है। सकेतक परमाणुओ द्वारा मिश्र धातु मे किसी तत्त्व के परमाणुओं की व्यवस्था जानी जाती है। उदाहरण के लिए किसी धातु में सल्फर के साथ न्यून मात्रा मे रेडिय सल्फर मिला दिया जाय तो उन सकेतक परमाणुओं के द्वारा हमे सल्फर के विभाजन का ज्ञान हो जायगा। धातुओं के संरचन के अध्ययन में रेडियधर्मी सकेतक अमूल्य सिद्ध हुए है। धातु कर्म उद्योगो मे इनके उपयोग दिन प्रति दिन बढ रहे है। इनके द्वारा अच्छे गुण वाली धातु कम समय मे मिल जाती है। इस्पात उद्योग मे धातु के गलने का समय कम करने के लिए शीघ्रता से धातु मल बनना आवश्यक है। अयस्क और चूने को किस अनुपात तथा क्रम मे मिलाया जाय, इसके सही ज्ञान से धातु-कर्म-क्रिया सरल हो जाती है। इस समस्या को सुलझाने मे रेडियधर्मी कैलसियम और फासफोरस का विशेष हाथ रहा है। धातुमल बनते समय विभिन्न अवयवो मे इन तत्त्वो द्वारा हुए विकिरणो की

माप करने से धातु कर्म मे होने वाली प्रतिक्रियाओं का सही ज्ञान हो सका है।

कभी-कभी धातुकर्म क्रियाओ मे असम्भावित कठिनाइयाँ आ जाती हैं। अनजान स्रोतों से अशुद्धियां धातुओं में मिल जाती हैं जिनके सम्मिश्रण से हानिकारक गुण धातु मे आ जाते है। कभी-कभी भट्ठी की दीवारों से आकर मिली अशुद्धियाँ धातु को खराव कर देती हैं। इनका सही ज्ञान रेडियधर्मी तत्त्वो द्वारा ही सम्भव हो सका है।

धातु कर्म उद्योगो का कार्य प्रायः बन्द वर्तनों मे ही मुख्यतः होता है। अत. कभी-कभी यह आवश्यक होता है कि बर्तन के अन्दर धातु के तल का ज्ञान होता रहे या धातु का तल एक चिह्न के ऊपर न जाय। इस कार्य को संकेतक ने सरल कर दिया है। जिस चिह्न के ऊपर संगलित धातु का जाना हानिकारक हो उस स्थान पर थोड़ा रेडियधर्मी संकेतक लगा दें तथा दूसरी ओर गणक द्वारा उससे निकले विकिरण की जांच करते रहें। जिस समय धातु उस तल पर पहुँचेगी उसकी एक मोटी तह संकेतक और गणक के मार्ग मे आ जायेगी जिसकी सूचना तुरन्त गणक द्वारा मिलेगी।

इजीनियरी कार्यों मे रेडियतत्त्व का उपयोग दिन प्रति दिन बढ़ रहा है। इसके द्वारा अच्छी कोटि का कक्रीट बनाना सम्भव हो सका है। रेडिय कैलशियम के प्रयोग द्वारा कंक्रीट विज्ञान का अच्छा ज्ञान प्राप्त हुआ है। कंक्रीट के कठोर होने तथा उसमे होने वाली भौतिक एवं रासायनिक क्रियाओं का ज्ञान रेडिय कैलशियम के जासूसी चक्षुओ द्वारा ही प्राप्त हो सका है।

हाइड्रो विद्युत्-स्टेशन, बाँध, औद्योगिक मिल आदि बडी-बड़ी इमारतो में विशेष प्रकार के सम्मिश्रण किये जाते हैं। इस क्रिया मे मृतिका के विशेप लेप बनाकर गृह-निर्माण पदार्थ में मिलाये जाते हैं। इन लेपों के सरचन पूर्व निश्चित होने चाहिए अन्यथा इमारतें अशक्त हो जांयगी। इन क्रियाओं पर नियन्त्रण रखने के लिए कुछ रेडियतत्त्वों का उपयोग हुआ है जिनमे रेडियो कोबाल्ट का विशेप स्थान है।

ऊपर बताये उपयोगों के अतिरिक्त रेडियतत्व, कपड़े धोने की मशीन की क्षमता बढ़ाने, बिजली या टेलीफोन खम्भों के रक्षा सम्बन्धी प्रयोगों, बहुलीकरण आदि औद्योगिक क्रियाओं, कृत्रिम पेट्रोल बनाने, अच्छी रोटी बनाने तथा साबुन की क्रिया को समझने आदि में बड़े उपयोगी सिद्ध हुए हैं। परन्तु इस ओर इन के उपयोग का अभी तो केवल प्रारम्भ ही हुआ है। भविष्य में इनके इससे सैकड़ों गुने बड़े औद्योगिक उपयोग होंगे।

भौमिकी एव पेट्रोल उद्योग मे उपयोग

खनिज पदार्थों की खोज मे रेडियतत्व बड़े सहायक हो रहे है। इन खोजों मे पेट्रोल का विशेष स्थान है। पेट्रोल को निकालने के लिए बड़ी गहराई तक कुए खोदना आवश्यक होता है। परीक्षा-कुए मे ऐसा यत्र प्रविष्ट करते हैं जिसमे तीव्र न्यूट्रानों का स्रोत तथा गामा-विकिरणों को मापने का गणक लगा होता है। अन्दर प्रवेश करने पर न्यूट्रान चट्टानों मे मन्द होकर समा जाते हैं। इस प्रतिक्रिया से गामा-विकिरण स्वतत्र होते हैं। यदि इन चट्टानों मे तेल समाया हो तो न्यूट्रान शीघ्रता से मन्द होकर समाते हैं। इस प्रकार गणक द्वारा पेट्रोल तेल की पहचान हो जाती है। पृथ्वी के अन्दर तेल और जल अलग सतह पर रहते हैं। पानी और तेल पर न्यूट्रान दण्ड का भिन्न प्रभाव होता है, इस कारण इन दोनो की सतह की पहचान हो जाती है।

कोयले की खान की पहचान गामा-विकिरण द्वारा सम्भव हो गयी है। यदि भूमि मे कुआ खोद कर एक गामा-स्रोत अन्दर प्रवेश करे तो विभिन्न चट्टानो मे गामा-विकिरण भिन्न प्रकार से अवशोषित होगा। कोयले का घनत्व चट्टान से बहुत भिन्न होता है। इस कारण कोयले की तह पर पहुँचते ही गामा-विकिरण के अवशोषण मे विशाल अन्तर आयेगा जिसका गणक यत्र द्वारा संकेत हो सकता है। इस क्रिया से कोयले की उपस्थिति और उसकी तह की मोटाई आदि ज्ञात हो जायगी।

गणक यंत्र द्वारा रेडियधर्मी तत्वों की उपस्थिति की पहचान बहुत सरल हो गयी है। यूरेनियम, थोरियम और अन्य रेडियधर्मी तत्वों की खोज इन यंत्रों से ही की जाती है।

पेट्रोलियम उद्योग शीघ्रता से संकेतक विधि को अपना रहा है। पेट्रोल से निकले पदार्थों के सही उपयोगों के लिए उसका विश्लेषण करना बहुत आवश्यक है। उनमे कार्बन तथा हाइड्रोजन तत्वो का अनुपात विशेषकर ज्ञात होना चाहिए जिससे पदार्थों का उचित कार्यों में उपयोग किया जाय। जेट वायुयान तथा अन्य यातयात के कार्य के लिए इस अनुपात गुणक का ज्ञान होना लाभकारी होता है। अभी तक वैश्लेपिक रसायन विधि से यह अनुपात निकालते थे जिसमे बहुत समय नष्ट होता था। अब बीटा विकिरण द्वारा यह जल्द निकल आता है। बीटा-कण कार्बन की अपेक्षा हाइड्रोजन द्वारा अधिक अवशोषित होता है। उसके इस गुण द्वारा अनुपात आसानी से ज्ञात हो जाता है। इस विधि से एक नौसिखिया सहायक एक दिन में १०० नमूनो का उतनी ही सरलतापूर्वक विश्लेषण कर लेता है जितनी सरलता से पहले एक निपुण वैश्लेपिक रसायनज्ञ १० नमूनों का एक दिन में करता था।

पेट्रोल उद्योग में उत्प्रेरित-भजन बड़ी लाभकारक क्रिया है। इसके द्वारा भारी तेलों को हलके पेट्रोल एवं वायुयान ईंधन मे परिणत करते हैं। इसमें उत्प्रेरक के चक्रण द्वारा ही अच्छी उपज होती है। यदि यह चक्रण ठीक न हो तो भंजन पूर्ण न हो पायगा। अभी तक रसायनज्ञ इसकी जाँच ताप के उतार-चढाव द्वारा ही किया करते थे। यह बहु-आधारित रीति थी। अब इस क्रिया में प्रायोगिक मनका के साथ थोड़ा-सा रेडियधर्मी जिरकोनियम मनका मिला देते हैं। यह मनका उत्प्रेरक के साथ चक्रित होता है। रेडियधर्मी मनका की गति को गणक द्वारा ज्ञात करते हैं। इसी से उत्प्रेरक के चक्रण का सही ज्ञान हो जाता है। अब यह विधि लगभग सभी भंजन उद्योगों में सामान्य रूप से काम मे लायी जा रही है।

पेट्रोल के पदार्थों को सुदूर स्थानो मे ले जाने के लिए मोटी नलिकाओं का उपयोग होता है। इन नलिकाओं द्वारा विभिन्न प्रकार के पेट्रोल पदार्थ भेजे जाते है। यदि एक नलिका से दो भिन्न प्रकार के तेल एक के पश्चात् एक भेजे जाएँ तो उन्हे दूसरी ओर जमा करने मे कठिनाई हो सकती है। अब इस समस्या को हल कर लिया गया है। जिस समय एक रूप का तेल भेजना बन्द करते हैं उसके बाद थोडा रेडियतत्त्व मिश्रित तेल पम्प द्वारा चालू करने पर दूसरी ओर ज्ञान हो जाता है कि अब इस रूप के तेल का आना समाप्त हो गया है और इसके पीछे दूसरा पदार्थ आयेगा। जब जब तेल का गुण बदलता है उनके बीच मे थोडा रेडियधर्मी तेल रख दिया जाता है। इस कारण दो भिन्न कम्पनिया अपना माल एक नलिका द्वारा भेज सकती है।

कुछ वर्षों से एक रेडियधर्मी समस्थानिक भूगर्भ-शास्त्रियो के लिए अत्यन्त लाभकारी सिद्ध हुआ है। यह समस्थानिक प्रकृति मे पाया जाता है, परन्तु इसकी उपयोगिता का पहले ज्ञान न था। यह कार्बन का १४ भार वाला समस्थानिक है। यह ऊपरी वायुमण्डल मे सर्वदा बनता रहता है। अतरिक्ष किरणे चारो ओर से वायुमण्डल मे प्रवेश करती रहती हैं। ये किरणें अत्यन्त वेगवती होती है और वायुमण्डल मे उपस्थित नाइट्रोजन नाभिक पर आक्रमण कर कार्बन-१४ बनाती है। वायुमण्डल मे कार्बन १४ की मात्रा समान रहती है। यह तत्त्व रेडियधर्मी है और एक इलेक्ट्रान स्वतत्र कर स्थिर नाइट्रोजन मे तत्त्वान्तरित हो जाता है। इस कारण जितना कार्बन-१४ किसी क्षण अतरिक्ष विकिरण के आक्रमण से बनता है उतनी ही मात्रा मे कार्बन-१४ रेडियधर्मी क्रिया द्वारा तत्त्वातरित हो जाता है। हम यह कह सकते है कि इस तत्त्व का वायुमण्डल मे सतुलन रहता है।

रेडियधर्मी कार्बन-१४ स्वतत्र अवस्था मे वायुमण्डल मे नही रह पाता। यह वायुमण्डल की आक्सीजन पर क्रिया कर कार्बन द्वि-आक्साइड बनाता है। इस विधि से हमारे वायुमण्डल में उपस्थित कार्बन द्वि-आक्साइड

के साथ थोड़ी मात्रा में रेडियधर्मी कार्बन द्वि-आक्साइड भी मिश्रित रहती है। कार्बन-द्वि-आक्साइड वनस्पति का भोजन है। पौधे उसे लेकर अपने कोष बनाते हैं। इस चक्र द्वारा वायुमण्डल से कार्बन द्वि-आक्साइड वनस्पति में जाता है जहाँ से जीव-जन्तु उसे अपना भोजन बनाते हैं। इससे हम देख सकते हैं कि जहाँ-जहाँ कार्बन प्रवेश करेगा वहीं पर उसके साथ न्यूनतम मात्रा में रेडियधर्मी कार्बन भी जायेगा। विश्व के सब वनस्पति और जीवों में रेडियधर्मी कार्बन उपस्थित रहता है।

जब तक पेड़, पौधे या जीव-जन्तु जीवित रहते हैं, वे भोजन का सेवन करते रहते हैं, जिससे उनके अन्दर कार्बन के आने तथा उनमें से उसका क्षय होने का क्रम चलता रहता है। इस प्रकार हर जीवित वस्तु में रेडियधर्मी कार्बन की लगभग स्थायी सान्द्रता वर्तमान रहती है। हर जीव में, पौधों मे, पेड़ के तने में, डाल-पत्ती आदि में सीमित मात्रा मे वह रहता है।

परन्तु जीव या वनस्पति की मृत्यु होते ही दशा बदल जाती है। अतः वह मृत वस्तु अब कार्बन अपने अन्दर समा नहीं पाती इसलिए रेडियधर्मी कार्बन का आवागमन भी बन्द हो जाता है। अब मृत्यु के क्षण से उसमें कार्बन का केवल क्षय ही होगा। यह क्षय रेडियधर्मी नियम के अनुसार होता है। रेडियधर्मी कार्बन की अर्धजीवन अवधि पाँच सहस्र सात सौ (५,७००) वर्ष है। इस नियमानुसार इतनी अवधि के पश्चात् उस मृत वस्तु में आधे रेडिय कार्बन परमाणु रह जायेंगे और ग्यारह सहस्र चार सौ वर्षों (११,४००) बाद प्रारम्भ काल उसके वर्तमान कार्बन परमाणुओं का एक चौथाई ($\frac{1}{4}$) भाग बचेगा। इसी प्रकार वे निरंतर घटते रहेंगे।

इस विधि द्वारा किसी मृत जीव अथवा वनस्पति का मृत्यु-काल सम्यक् रीति से ज्ञात हो सकता है। उस वस्तु में रेडियधर्मी कार्बन की मात्रा ज्ञात करने से मृत्यु के समय की जाँच करना सरल कार्य हो जायगा। कुछ वर्षों से ऐतिहासिकों एवं पुरातत्त्ववेत्ताओं ने लाभपूर्वक इसका उपयोग किया है। विश्व के संग्रहालयों में पुरानी वस्तुएं भरी पड़ी हैं। इन वस्तुओं

की आयु ज्ञात करना अब सरल कार्य हो गया है। जिनकी उम्र का दूसरे उपायों से अनुमान किया गया हो उनकी आयु की पुष्टि इस उपाय से होना सम्भव है। इसके कुछ रोचक उदाहरण दिये जा सकते है।

पुरातन काल में मिश्र मे फैरोह उपाधि के राजा राज्य करते थे। इन राजाओं के शव को मृत्यु के पश्चात् वडी सावधानी से गाडा जाता था जिससे उसे हानि न पहुँचे। साथ में उनके उपयोग तथा कार्य की सब वस्तुए सोना, चाँदी, जवाहरात, कपड़े, पलँग आदि भी गाड दी जाती थी। एक ऐसी ही समाधि में से एक नाव निकाली गयी थी। लोगो का अनुमान था कि वह समाधि तीन सहस्र सात सौ वर्ष (३,७००) पुरानी थी। इसकी पुष्टि के लिए उस नाव की लकड़ी का छोटा टुकडा काटा गया और वैज्ञानिक रसायन शाला में उसकी कार्बन-१४ रेडियधर्मिता द्वारा जांच की गयी। उस लकडी मे अभी तक कुछ रेडियधर्मी कार्बन के परमाणु वर्तमान थे। इनकी तुलना नयी जीवित लकडी में उपस्थित कार्बन परमाणुओं से की गयी। इस तुलना से निष्कर्ष निकला कि वह लकडी तीन सहस्र छै सौ (३,६००) वर्ष पुरानी थी।

कुछ दिन हुये साइबेरिया, सोवियत संघ में वर्फ के नीचे दवा एक मैमोथ[1] का शव पाया गया। यह शव लगभग उसी अवस्था मे था जिसमें उसकी मृत्यु हुई होगी। रेडियधर्मी कार्बन की जाँच से ज्ञात हुआ कि इस विशालकाय जीव की मृत्यु बारह सहस्र (१२,०००) वर्ष पहले हुई होगी।

फ्रास में एक गुफा के अन्दर एक प्राचीन मकान की खोज हुई। उसमें पत्थर के अस्त्र आदि मिले और साथ मे जली लकड़ी के कोयले के टुकड़े भी मिले। इस कोयले की जाँच की गयी। इस कोयले की रेडियधर्मिता लगभग पन्द्रह सहस्र (१५,०००) वर्ष प्राचीन थी।

1. Mammoth

इसी प्रकार के अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं। इस समय संसार भर में इस रीति के द्वारा इतिहासकार तथा पुरातत्ववेत्ता बहुत-सी गुत्थियां सुलझा रहे हैं।

रेडियधर्मी कार्बन द्वारा वैज्ञानिक भी लाभ उठा रहे हैं। पेट्रोलियम के कुँओं की खोज या जाँच इससे सम्भव हो रही है। रसायनज्ञ यह जानते है कि पेट्रोलियम के साथ मीथेन गैस भी मिलती है। परन्तु यही गैस वनस्पति के क्षय द्वारा भी मिलती है। इस कारण यदि कही मीथेन गैस मिले तो यह कहना कठिन होगा कि यह पेट्रोल के कारण है या केवल वनस्पति से निकली है और यदि वनस्पति द्वारा निकली गैस के आधार पर तेल ढूंढने लगे तो बेकार समय तथा अर्थ का व्यय होगा। इसका निर्णय कार्बन-१४ जांच से हो सकता है। पेट्रोल बहुत पुरातन काल में बना और इसका उद्‌भव जीव द्वारा हुआ है। वनस्पति से निकली मीथेन गैस पुरानी न होगी, वरन् वनस्पति के क्षय से बनती रही होगी। इन दोनों गैसों के कार्बन-१४ सान्द्रण में बड़ा अन्तर रहेगा। वनस्पति द्वारा बनी मीथेन से पेट्रोल की मीथेन की अपेक्षा कार्बन-१४ कही अधिक होगा।

कार्बन-१४ समस्थानिक साठ सहस्र (६०,०००) वर्ष से अधिक काल में काम नही आ सकता क्योकि इतने समय में लगभग सारी रेडियधर्मिता का क्षय हो जाता है।

इससे अधिक काल के लिए यूरेनियम, थोरियम आदि तत्त्वों का सहारा लेना पड़ता है जिनकी अर्धजीवन अवधि कही अधिक है। इनके द्वारा हमे ज्ञात हुआ है कि हिमालय पर्वत लगभग दस करोड़ (१०,००,००,०००) वर्ष पहले पृथ्वी से उठकर बना था।

इस प्रकार रेडियधर्मी परमाणु हमको पुरातन काल की घटनाओ के ठीक समय की सम्यक् रीति से सूचना देते हैं।

संकेतक परमाणुओं का रसायन में उपयोग

रासायनिक क्रियाओं द्वारा ही यह परमाणु शुद्ध किये जाते हैं जिसमे

इनका उपयोग अन्य कार्यों में हो सके। रसायन-विज्ञान मे भी इनका उपयोग प्रचुर मात्रा में हो रहा है। सामान्य तथा कार्बनिक दोनों ही प्रकार की रसायनों की प्रतिक्रियाओं मे इनका उपयोग होता है। इनके द्वारा अन्य प्रक्रिया का सही ज्ञान हो सकता है। बहुत-सी रासायनिक प्रतिक्रियाएँ अत्यन्त क्लिप्ट होती है उनकी परिस्थितियो को जानना कठिन होता है। इन परिस्थिति सबन्धी पहेलियों को रेडियतत्त्वो द्वारा सुलझाया गया है। कई स्थानो पर बहुत न्यून मात्रा के तत्वो के प्रातिशत्य को मिश्रण मे ज्ञात करना होता है। यदि यह मात्रा अत्यन्त न्यून हुई तो सामान्य रासायनिक क्रियाओं से वह नहीं मालूम किया जा सकता। ऐसे कार्य में रेडियतत्त्व उस समस्या को हल करते है। इन तत्वों द्वारा निकले विकिरण गणक द्वारा नापे जाते है। सकेतक विधि से बहुत-सी रासायनिक परीक्षाएँ शीघ्रता से हो सकती है। उदाहरणार्थ, कुछ रासायनिक क्रियाएं बड़ी द्रुत गति से होती हैं। ऐसी क्रिया के होते समय यदि रासायनिक परीक्षा भी होती रहे तो उस पर अच्छा नियत्रण रहता है। परन्तु कभी-कभी सामान्य रसायन विधियों से शीघ्र परीक्षा होना सम्भव नही होता। इस कमी को रेडियधर्मी सकेतको ने बहुत कुछ पूरा किया है। विकिरण रसायन, विज्ञान का एक नया अग है जो अत्यन्त रोचक एवं उपयोगी है। इसमें उच्च ऊर्जा के विकिरणों का रासायनिक क्रियाओं पर प्रभाव देखा जाता है। यह विकिरण अनेक यौगिको का संरचन बदल देते है तथा इनके कारण कुछ यौगिकों के गुणों मे भी अंतर आ जाता है। उदाहरणार्थ, कुछ यौगिकों की विलयनशीलता बदल जाती है। कुछ अन्य यौगिकों की द्रवशीलता जाती रहती है। कभी-कभी कुछ अणु खण्डित हो जाते है और कभी दो या उनसे अधिक अणु संगलित हो जाते है। इन गुणों की ठीक जानकारी रहने से उचित तथा आवश्यक गुण वाली वस्तुएँ बनायी जा सकती है।

विकिरण के प्रभाव द्वारा कुछ धातुओं की सतह के गुण बदलते देखे गये हैं। उन मे प्रतिरोधकता दसगुना अधिक हो जाती है।

रेडियधर्मी विकिरण रासायनिक क्रियाओं के मार्ग तभी बदल सकते हैं। कार्बनिक रसायन में ऐसा बहुधा होता देखा गया है। बहुलीकरण की क्रिया को रोककर या बदल कर इच्छित गुण वाले बहुलक प्लास्टिक, कृत्रिम रबर आदि बनाये जा रहे हैं। कभी-कभी ऐसी क्रियाएं प्रारम्भ की गयी है जो साधारणतया असम्भव प्रतीत होती थी। दो विभिन्न प्लास्टिक पदार्थों को विकिरण के प्रभाव द्वारा संगलित किया गया है जिससे बिलकुल नये गुण वाला प्लास्टिक बना। इन प्रयोगों से सिद्ध हो गया है कि विकिरण रसायन का भविष्य उज्ज्वल है। नयी-नयी क्रियाएं तीव्र गति से ढूँढी जा रही हैं और शीघ्र ही हम इस विज्ञान में क्रान्तिकारी परिवर्तन पायेंगे।

संकेतक परमाणुओं की सहायता से रासायनिक विश्लेषण की विश्वस्तता की जाँच हो सकती है। संकेतक विधियों में से एक विधि का नाम सक्रियकरण विश्लेषण है। इसके सिद्धांत निम्नलिखित हैं:—

यदि किसी वस्तु को जिसका विश्लेषण करना है, न्यूट्रान दण्ड द्वारा प्रभावित किया जाय तो उसके परमाणुओं का थोडा भाग रेडियधर्मी समस्थानिकों में बदल जायगा। यदि विकिरण-विश्लेषण द्वारा यह ज्ञात हो जाय कि कौन-से परमाणु कितने बने हैं, तो उस वस्तु के प्रारम्भिक तत्त्वों के संमिश्रण का ज्ञान होना सम्भव है।

सक्रियकरण विश्लेषण द्वारा किसी वस्तु में न्यूनतम अशुद्धियों की उपस्थिति का ज्ञान हो सकता है। जो अशुद्धि एक लाख या कभी एक करोड़ भागों मे १ से भी कम मात्रा में उपस्थित हो, उसका पता इस विधि द्वारा लगाया जा सकता है। अर्द्ध संचालक (जैसे सिलिकन, जर्मेनियम आदि) के गुणों में बहुत थोड़ी मात्रा (दस लाख भाग मे एक भाग के लगभग) के संमिश्रण से बडा अन्तर आ जाता है। आजकल अर्द्ध चालकों के औद्योगिक उपयोग (विशेषकर इलेक्ट्रानिक क्षेत्र में) बढ रहे हैं। इन अर्द्धचालको के गुण बहुत अल्प मात्रा के संमिश्रण से बहुत बदल जाते हैं। परन्तु रासायनिक विधि से इन सम्मिश्रणों की नाप या उनका विश्लेषण असम्भव

है। इस कारण शुद्ध अर्द्ध-चालक सक्रियकरण विश्लेषण द्वारा ही बनाये जा सके हैं।

रेडियधर्मी तत्वो के उपयोग द्वारा रसायन-विज्ञान मानव जाति की और अधिक सेवा कर सकेगा।

रेडिय तत्त्वों का कृषि में प्रयोग

वर्तमान काल मे ससार के अनेक देशों में खाद्य की समस्या सबसे बडी है। इस कारण यह स्वाभाविक है कि वैज्ञानिक परमाणु ऊर्जा से खाद्य उपज के बढाने मे काम लिया जाय। इस समय ससार के अनेक देशों में इस ओर द्रुति गति से कार्य हो रहा है। कुछ समय से भारत सरकार का ध्यान इस ओर गया है और विशेष अनुसधानशालाओं तथा खेतों मे इस समस्या पर कार्य हो रहा है।

कृषि-विज्ञान मे परमाणु सम्बन्धी अनुसंधान अनेक रूपो में हो रहे हैं। इनके द्वारा फलो एव पौधों की नस्लों को गुरु परिवर्तन द्वारा संवृद्ध किया गया है, जानवरो के चारे के गुण तथा मात्रा बढायी गयी है जिससे वह अच्छा दूध दें। खाद्य पदार्थो की उपज बढायी गयी, तथा उनको खराब होने से रोका गया है। कृषि-विज्ञान के कुछ प्रयोग जानवरो पर भी हुआ करते हैं।

पौधों के लिए खनिज पदार्थ भी अत्यन्त आवश्यक है, यद्यपि वे कम मात्रा में आवश्यक होते है। वे भूमि से किस प्रकार पौधो मे प्रवेश करते है इसका सही ज्ञान रेडियधर्मी समस्थानिकों द्वारा हुआ है। इन अनुसन्धानों से उनके प्रवेश-मार्ग, प्रवेश-गति, वनस्पति मे उनके वितरण तथा कोप द्वारा ग्रहण आदि सम्बन्धी सारी क्रियाओ की गतिविधि का ज्ञान हो जाता है। इन प्रयोगों मे रेडिय कैलशियम-४५ का उपयोग हुआ है जिससे पौधों द्वारा कैलशियम अवशोषण के प्रक्रम का बहुमूल्य ज्ञान प्राप्त हुआ है। इन प्रयोगो में आयरन-५५ और जिंक-६५ द्वारा भी उपयोगी परिणाम प्राप्त हुए हैं। रेडियतत्वो के प्रयोगों ने यह सिद्ध कर दिया है कि फल
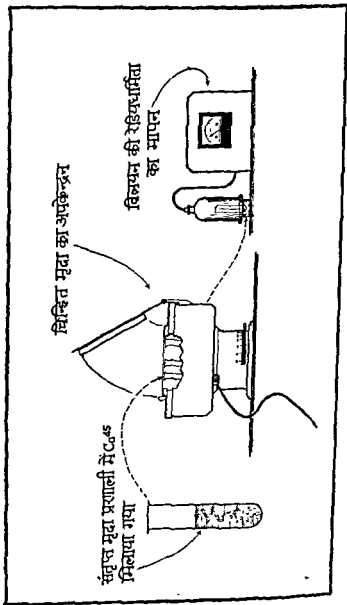
चित्र संख्या ३२—रेडियधर्मी कैलशियम ४५—मृदाओं में गतिज विनिमय का अध्ययन

बीजों का निर्माण होते समय उनमें फासफोरस जमा होने लगता है। कुछ बीजो मे फ़ासफोरस के साथ मैंगनीशियम जमा होता है। ऐसी अवस्था मे पेड़ को फासफोरस और मैंगनीशियम की बहुत आवश्यकता होती है और यह तत्व उसको अधिक मात्रा मे मिलना चाहिए।

पौधो की उपज बढाने के लिए खाद की आवश्यकता होनी है, यह सभी को ज्ञात है। परन्तु मृत्तिका मे उर्वरक किस रूप मे और किस समय मिलाये जाय, इस प्रश्न का उत्तर देना सरल कार्य नही है। उदाहरण के लिये फासफेट उर्वरक को सारी भूमि मे बराबर डालना ठीक होगा या समानान्तर रेखाओ मे, उन्हें ऊपर डाला जाय या कुछ गहराई तक पहुँचाया जाय? इन प्रश्नो का ठीक उत्तर सकेतक परमाणुओ द्वारा ही मिल सका है। हमे उनके द्वारा व्यापारिक उर्वरको, कार्बनिक खाद और हरी खाद तीनों के बारे मे बहुमूल्य सूचनाएं प्राप्त हुई हैं।

इस क्रिया का प्रयोग होने के पूर्व, उर्वरको की उपयोगिता का अंदाज उपज द्वारा किया जाता था परन्तु इसमें वर्षा, ताप और रोग इन तीनो का प्रभाव भी शामिल होता था, जिससे सही परिणाम पाने मे कठिनाई होती थी।

इन प्रयोगों मे सर्वप्रथम उर्वरक के साथ फासफोरस आदि उपयोगी तत्वों के रेडियधर्मी समस्थानिक मिलाये जाते हैं जिनकी मात्रा बहुत कम होती है। इस प्रकार के चिह्नित उर्वरक को प्रायोगिक प्लाट में डालकर पौधों या पेड़ों की वृद्धि देखी जाती है। पौधा या पेड़ उर्वरक में वर्तमान पोपक तत्व प्राप्त करेगा। जिस समय पेड़ या पौधा पोपक तत्व अवशोषित करेगा, तभी उसके साथ उसका रेडियधर्मी समस्थानिक भी अवशोषित होगा। किसी स्थान-विशेष मे पोपक तत्व की उपस्थिति का ज्ञान रेडियतत्व से ही होगा। यदि गणक ने तने मे रेडियधर्मिता का सकेत किया तो हम जान लेंगे कि तने मे पोपक तत्व आ गया है। जिस समय पत्ती या फल मे पोपक तत्व प्रवेश करेगा उस समय उनके द्वारा विकिरण दिये जाने लगेंगे।

चित्र संख्या ३३—रेडियधर्मी फासफरस—३२
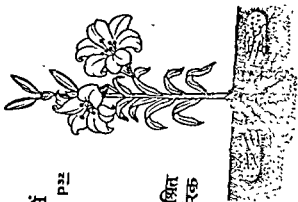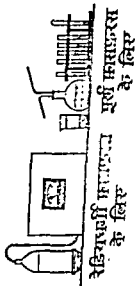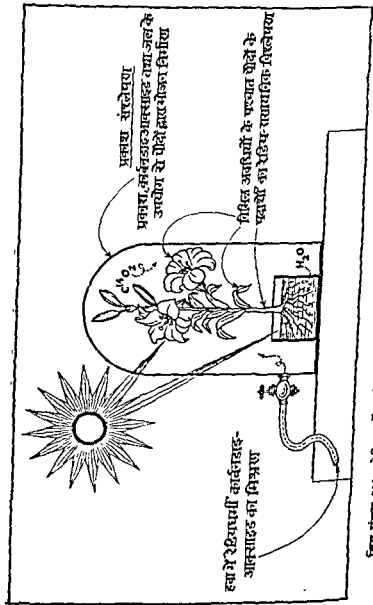
चित्र संख्या २४—रेडियधर्मी कार्बन—पौधों द्वारा भोजन-उत्पादन अथवा प्रकाश-संश्लेषण

श्यक है। निरन्तर खेती होते रहने से भूमि मे पोषक तत्त्वों की मात्रा कम हो जाती है और एक अवस्था ऐसी आती है जब उस मे उपजाऊ खेती के लिये पोषक तत्त्व डालना आवश्यक हो जाता है। किस पैदावार से कौन-से पोषक तत्त्व का क्षय होता है, कैसा खाद डालने से कौन-से पोषक तत्त्व उपलब्ध होते हैं, इन प्रश्नो का हल जानना किसान के लिए अति आवश्यक है। इनके ठीक हल सकेतको द्वारा ज्ञात हो रहे है। भूमि मे तत्त्वो की विनिमय-प्रतिक्रिया निरन्तर चलती रहती है। सकेतको के प्रयोगो द्वारा इस विषय के ज्ञान की वृद्धि हो रही है।

अच्छी खेती के लिए यह आवश्यक है कि उपज को बीमारियो और हानिकारक जीवाणुओं से बचाया जाय। यदि इनके द्वारा नष्ट होने वाले खाद्य पदार्थों को बचाया जा सके तो विश्व की खाद्य समस्या अपने आप हल हो जाय। इस कार्य मे रेडियधर्मी तत्त्व बड़े सहायक सिद्ध हुए है। हानि-कारक जीवाणुओं के कार्य को सकेतकों द्वारा जानना सम्भव हो गया है। विषाणु-संक्रमण द्वारा पौधो को पहुँचायी गयी हानियो की जाँच में कार्बन-१४ की बड़ी उपयोगिता है। इन प्रयोगो में मुख्यतः कार्बन-१४, सल्फर-३५ फ़ासफ़ोरस-३२, केलसियम-४५ और आयरन-५५ एव ५९ उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

वनस्पति-हारमोन विषयक ज्ञान प्राप्त करने मे रेडियतत्त्व बड़े काम आये हैं। जिबरेलिक अम्ल[1] नामक वनस्पति-हारमोन का पौधों की वृद्धि पर पर्याप्त प्रभाव पड़ता है। पौधे मे इसकी उपस्थिति से उसका तना, मोटा, पत्तियां बडी, फल की उपज अधिक और फूलों की सख्या भी अधिक होती है। कार्बन-१४ द्वारा इस यौगिक के प्रभाव की प्रक्रिया पर दो-तीन वर्षों से कार्य हुआ है जिससे ज्ञात हुआ है कि इस यौगिक का एक ग्राम का एक अरबवा ($\frac{1}{10^9}$) भाग पौधों की उपज बढाने में पर्याप्त होता है।

1. Gibberelic acid

हाइड्रोजन के समस्थानिक ड्यूटीरियम और ट्राइटियम का भी आजकल कृषि अनुसंधानों में उपयोग हो रहा है। सोयाबीन के पौधे पर ट्राइटियम जल का उपयोग करके उसमें उत्पन्न अम्लों को अलग किया जा सका है और उनके संचरण का ज्ञान भी हो सका है।

विकिरण-प्रयोग आधुनिक कृषि के आवश्यक अंग बन गये हैं। इनके द्वारा नये पौधों की नयी किस्में प्राप्त हुई हैं जो शक्तिशाली और रोग प्रतिरोधी होती हैं। अमेरिका की बकहेवन राष्ट्रीय अनुसन्धानशाला और अन्य स्थानों मे गामा-उद्यान बनाये गये हैं। इसमें कोबाल्ट–६० द्वारा पेड़-पौधों आदि को गामा-विकिरण से प्रभावित किया जाता है। भारतीय कृषि-अनुसन्धान महाविद्यालय, नयी दिल्ली मे भी एक ऐसा ही गामा-उद्यान निर्मित हुआ है।

इस दिशा में प्रारम्भिक अनुसन्धान एक्स-विकिरण एवं रेडियम द्वारा हुआ करते थे। परन्तु अब नये रेडियधर्मी तत्त्व उपलब्ध हैं जो सस्ते तथा अधिक उपयोगी है। इन प्रयोगों द्वारा अच्छे पौधों, बीजों और फलों की प्राप्ति होती है और साथ मे वंशानुगत परिवर्तन और विकिरण-वंश-परिवर्तन का ज्ञान भी अधिक प्राप्त हो रहा है।

परमाणु-विकिरण द्वारा पौधों में वंशानुगत परिवर्तन आते है। कभी-कभी यह लाभकारी होते है। लाभकारी परिवर्तन से अछे प्रकार के पेड पौधे तैयार हो सकेंगे। यह परिवर्तन विभिन्न रूपों मे हो सकते है। इनके द्वारा पौधों का बाहरी रूप बदल सकता है। इसमें दैहिक अन्तर आने के कारण फलो आदि के पकने का समय बदल जा सकता है, वह अधिक ऊष्मा या ठंड सहने में समर्थ हो सकते हैं। इस कारण ऐसे प्रयोगो से विशाल उपयोगी सम्भावनाओं की कल्पना हम कर सकते है।

न्यूट्रान-विकिरण के कुछ प्रयोग जई पर किये गये। इन प्रयोगों से लगभग एक वर्ष में ही गेरुई-प्रतिरोधी जई के बीज उपलब्ध हो गये। यदि वृक्ष-प्रजनन की सामान्य विधि का उपयोग किया जाता तो संभवतः इस कार्य में १० वर्ष से अधिक लगते और धन भी कही अधिक व्यय होता।

सोवियत संघ मे इस दिशा मे पर्याप्त कार्य हुआ है। १९५४ मे मास्को के निकट बंदगोभी के बीजों को विकिरण द्वारा प्रभावित किया गया। अत: इन बीजों से उत्पन्न हुई गोभियाँ आठ दस दिन पहले ही तैयार हो गयी। मक्का पर रेडियो कोबाल्ट के प्रवाह द्वारा उसकी उपज १५ प्रतिशत बढ गयी। इस विधि से गाजर की उपज भी २५ प्रतिशत बढायी जा सकी है। इन प्रयोगोंके दो रूप हैं—एक प्रकार के अनुसधानो मे विकिरण स्रोत को खेत के मध्य मे रख देते है जिससे वह दूर से ही पेड पौधो को प्रभावित करता रहे। दूसरे प्रयोगो मे रेडियधर्मी तत्व को भूमि के अन्दर विशेष स्थानों पर गाड़ देते है। इस प्रकार वह भूमि के अन्दर से बीज, तने और पत्तियों को प्रभावित करता रहता है।

रेडियधर्मी विकिरणो की सहायता से पौधो मे लगने वाले हानिकारक परोपजीवियों से बचाव होने की भी आशा है। यह ज्ञात हुआ है कि खाद्य पदार्थो को विकिरणों द्वारा प्रभावित करने के पश्चात् अधिक काल तक रखा जा सकता है। यदि आलुओं के भण्डार के बीच छोटी छोटी नलिकाओं में कोबाल्ट–६० रख दिया जाय तो ये आलू वर्षों तक रखे जा सकते है और उनका स्वाद तथा खाद्यमान ताजे आलू के समान रहेगा। अधिकतर खाद्य पदार्थों को वाष्प के बन्द वायुमण्डल मे गर्म कर निर्बीजित करते है। रेडिय-धर्मी विकिरण द्वारा खाद्य पदार्थों को बिना गर्म किये और बहुत अल्पकाल में पूर्णतया निर्बीजित किया जा सकता है। इस प्रकार की निर्बीजित तरकारी, मांस, फल आदि किसी प्रकार हानिकारक नही होते। सोवियत संघ ने इस विधि द्वारा निर्बीजित पदार्थों का क्रय आरम्भ कर दिया है।

कुछ काल से विकिरण द्वारा प्रभावित नये किस्म के बीज अमेरिका मे सामान्यत: विकने लगे है। इनमे टमाटर, मक्का, तथा कुछ फूलो के बीज विशेष रूप से अच्छे प्रतिफल दे रहे है। टमाटर के ये नये बीज बड़े तथा फले-फूले टमाटरो की फसल दे रहे हैं। बहुत-से फूलो के रग विकिरण द्वारा बदल गये हैं तथा इन फूलो से निकले बीज नये रग के फूल देते है। इस प्रकार कई टमाटर परिवारो के फूलों में नये-नये सुन्दर रंग उपलब्ध हो गये है।

पशु-प्रयोग कृषि-विज्ञान का बड़ा आवश्यक अंग है। पशुपालन में रेडिय तत्त्वों के बहुमुखी प्रयोग किये गये हैं जिनके द्वारा पशु-पक्षियों में होने वाली चयापचय-क्रिया का ज्ञान आगे बढ़ सका है।

खनिजीय चयापचय प्रयोगों के लिए रेडियतत्त्व अत्यन्त उपयुक्त हैं। उनके द्वारा ऐसे उन तत्त्वों का सरलता से ज्ञान हो जाता है जिनकी शरीर को *न्यूनतम मात्रा मे आवश्यकता है, परन्तु जिनकी कमी से शारीरिक व्याधियां* हो जाने की सम्भावना रहती है। ऐसे तत्त्वों मे कोबाल्ट भी है। भेड़-बकरियों को इस तत्त्व की दस करोड़ (१०) भाग मे चार से सात भाग तक की मात्रा मे आवश्यकता रहती है। अनुमान किया गया है कि घोड़ों, सुअरों, खरगोशों आदि को इससे भी कम मात्रा में कोबाल्ट की आवश्यकता पड़ती है। इतनी मात्रा के तत्त्व का सामान्य रासायनिक विश्लेषण कर सकना दुष्कर कार्य है। परन्तु सकेतक विधि से इस तत्त्व की आवश्यकता तथा चयापचय के मार्ग का भली प्रकार ज्ञान हो गया है। कोबाल्ट विटामिन बी–१२ का आवश्यक अग है। रेडिय प्रयोगों से मोलीब्डेनम की आवश्यकता पर प्रकाश पडा है। अभी तक वनस्पति में इस तत्त्व की आवश्यकता मानी जाती थी परन्तु पशु-प्रयोगों द्वारा सिद्ध हुआ कि एक आवश्यक एनजाइम[1] में मोलीब्डेनम रहता है। कुछ प्रयोगो से आश्चर्यजनक खोज हुई कि पशु सिस्टीन[2] एवं मेथियोनीन[3] नामक एमीन अम्लों[4] का अपने शरीर मे निर्माण कर लेते हैं। यह अम्ल खनिज पदार्थों से प्राप्त सल्फेट द्वारा निर्मित होते हैं। इस प्रकार पशुओं के लिए अकार्बनिक सल्फ़ेट की उपयोगिता का ज्ञान हुआ। इन प्रयोगों मे रेडिय सल्फर, फास्फोरस, आयरन, कोबाल्ट, ताम्र और मोलीब्डेनम, सीज़ियम, कैलशियम, ज़िंक, स्ट्रांशियम, आयोडीन और टेंटलम का बहुधा उपयोग किया गया है।

1. Enzyme
2. Cystine
3. *Methionine*
4. *Amino-acids*

सूक्ष्म मात्रा में होती हैं कि बहुधा रसायन की सामान्य विधियां उनके लिए अनुपयुक्त रहती हैं। रेडियतत्त्व यह कार्य सरलता से करते हैं।

इसी कारण रेडिय समस्थानिको का सबसे अधिक उपयोग चिकित्सा तथा सम्बन्धित विज्ञानो मे हुआ करता है। रेडियधर्मी तत्त्व अपने स्थिर समस्थानिकों के साथ इतनी शीघ्रता से मिल जाते हैं कि दोनो मे कोई अन्तर नही रहता। शरीर के एक छोर पर डालने से वे शीघ्र ही शरीर के सब अंगों में फैल जाते हैं। इस कारण शरीर की क्रियाओं की पहेली को इन्ही के द्वारा सुलझाना उपयुक्त समझा गया है।

रेडियधर्मी तत्त्वों का चिकित्सा मे उपयोग कोई नयी बात नही है। रेडियम बहुत काल से इस कार्य में काम आता रहा है। पहले इक्के-दुक्के अस्पतालों में यह चिकित्सा उपलब्ध थी (रेडियम अत्यन्त महँगा तत्त्व है)। परन्तु अब कृत्रिम रेडिय तत्त्वों की खोज से यह चिकित्सा सामान्य होती जा रही है। आज संसार के सहस्रों अस्पतालों में ये सुविधाएं मिलती हैं। इन तत्त्वों के उपयोग भी दिन प्रति दिन बढ रहे हैं। इनके द्वारा अनुसंधान कर्ताओं को मालूम हुआ कि शरीर के विभिन्न ऊतकों द्वारा कौन-से तत्त्व अवशोषित होते हैं। शरीर के अन्दर तत्त्वों की गति-क्रिया का ज्ञान आज बहुत सरलता से हो जाता है। हमे ठीक प्रकार ज्ञात है कि अमुक तत्त्व आंतों मे किस प्रकार समाता है और रक्त के प्रवाह के साथ कैसे मिल जाता है। कोषों के यौगिक-ग्रहीत्व का रेडिय तत्त्वों द्वारा अध्ययन किया गया है। उसके कुछ उदाहरण नीचे दिये जा रहे हैं।

यदि हमे यह जानना हो कि शरीर में सोडियम किस गति से यात्रा करता है और किस गति से शरीर के विभिन्न अगों द्वारा अवशोषित होता है तो इस कार्य के लिए हमे थोड़े-से रेडियधर्मी सोडियम की आवश्यकता पड़ेगी। इसको प्राप्त करना अब सरल है। यदि हम साधारण नमक प्रतिकारी मे कुछ समय के लिए रख दें तो प्रतिकारी अथवा परमाणुपुंज द्वारा उस साधारण नमक का थोड़ा भाग रेडिय-सोडियम में बदल जायगा। इस नमक को भोजन के साथ खाने अथवा उसे नाड़ियो द्वारा शरीर में प्रविष्ट करने

पर हम उपर्युक्त क्रियाओं का अध्ययन कर सकेंगे। जहाँ-जहाँ जिस गति से यह सोडियम पहुँचेगा उसी गति और समय से वहाँ रेडियधर्मिता भी पहुँचेगी जिसे गणक द्वारा देखा जा सकता है। सोडियम प्रयोग द्वारा हमें सूचना मिली है कि रक्त के साथ सोडियम अति तीव्रता से चलता है। हाथ से हृदय तक जाने मे सोडियम को १५ सेकेंड का समय लगता है।

हाइड्रोजन के रेडियधर्मी समस्थानिक ट्राइटियम द्वारा भी इसी प्रकार के प्रयोग किये गये जिनसे यह ज्ञात हुआ कि रक्त-नाडियो मे जल अति शीघ्रता से हलचल करता है। यदि दिन भर की हलचल को नापा जाय तो २० बैरल प्रति दिन की गति आयेगी।

इन अनुसन्धानों द्वारा हमे यह ज्ञात होता है कि शरीर के प्रत्येक भाग मे प्रतिक्रियाएँ चलती रहती है। प्रत्येक भाग से पुराने परमाणु निकलते रहते है और उनका स्थान नये परमाणु ले लेते है। इस प्रकार शरीर का काम तीव्र गति से चलता है। आज हमारे शरीर मे जितना सोडियम है उसका आधा भाग लगभग १० दिन मे बाहर चला जायगा और नया सोडियम उसका स्थान ले लेगा। हाइड्रोजन तथा फासफोरस भी इसी गति से चलायमान होते है। कार्बन की आधी मात्रा को बदलने में दो माह से कम समय लगता है। यही स्थिति एमीन अम्ल, प्रोटीन आदि अन्य कार्बनिक पदार्थो की भी है। जटिल अणु टूट कर छोटे होते है। इस क्रिया द्वारा प्राप्त ऊर्जा हम अपने दैनिक कार्य में लाते हैं।

चिकित्सा निदान मे रेडियधर्मी तत्वों के अनेक उपयोग है जिनमें से रक्त-आयतन, रक्त-परिवहन, हृदय की धड़कन-क्षमता, गलग्रंथि की क्षमता, मस्तिष्क की ग्रंथि की पहचान आदि मे वे विशेष स्मरणीय हैं।

कभी-कभी किसी रोगी के सम्पूर्ण रक्त का आयतन ज्ञात करना आवश्यक हो जाता है, विशेषकर यदि उस पर शल्य-चिकित्सा होने वाली हो। इस क्रिया में सीरम अल्बुमिन के साथ थोडी रेडियधर्मी आयोडीन मिश्रित कर रक्त में प्रविष्ट कर देते हैं। कुछ ही समय मे परिवहन द्वारा आयोडीन

सारे रक्त में घुल मिल जायेगी। समुचित समय के पश्चात् रक्त का नमूना लेकर उसमे रेडियधर्मी आयोडीन की जाँच की जाती है और आयोडीन की तनुता की मात्रा से सम्पूर्ण रक्त की मात्रा ज्ञात हो जाती है।

मनुष्य शरीर के गले के भागों मे गलग्रथि एक बहुत आवश्यक अंग है। यह शरीर की सम्पूर्ण क्रियाओ पर नियंत्रण रखता है। यदि इसकी क्रिया-गति तीव्र या मन्द हो जाय तो शरीर की गति में गडबडी आ जाती है। इस ग्रथि द्वारा थायराक्सीन नामक हारमोन बनता है जिसके अणु में आयोडीन का परमाणु स्थित है। थायराक्सीन का नियन्त्रित मात्रा मे बनना आवश्यक है। रोगी को आयोडीन का यौगिक, जैसे सोडियम अक्साइड, पानी के विलयन मे पीने को दिया जाता है। हमे ज्ञात है कि शरीर में जाने वाली सारी आयोडीन गलग्रथि द्वारा अवशोपित होती है। इस प्रयोग में अवशोपण गति को रेडिय आयोडीन द्वारा ज्ञात करते है। यदि गाइगर-मुलर गणक या अन्य कोई विकिरण पहचान वाला यंत्र गले पर रखा जाय तो रेडिय आयोडीन की मात्रा का ज्ञान हो जायगा। अवशोपण गति द्वारा गलग्रन्थि की क्रिया-गति माल्ूम हो जायगी। इस गति तथा सामान्य मनुष्य की क्रिया-गति की तुलना करने से ग्रन्थि की दशा का अनुमान होता है।

यदि शल्य-चिकित्सक को मस्तिष्कीय ग्रथि की शल्य-क्रिया करना हो तो यह नितान्त आवश्यक हो जाता है कि ग्रंथि का ठीक स्थान तथा फैलाव पहले से ज्ञात हो। इस कार्य के लिए डाइआयडोफ्लोरसीन यौगिक का उपयोग होता हैं। इस यौगिक मे रेडियधर्मी आयोडीन उपस्थित रहती है। इस यौगिक को नियत स्थान में प्रविष्ट करने पर अधिकाश यौगिक का ग्रथि के ऊत्तक अवशोपण कर लेते हैं और रेडियो आयोडीन ग्रंथि मे संग्रहीत हं जाती है। गणक द्वारा रेडियधर्मिता की जाँच करने पर ग्रंथि का ठीक स्थान ज्ञात हो जाता है।

रेडियधर्मी समस्थानिकों का उपयोग चिकित्सा कार्य और औपधियों के रूप में हो रहा है। कुछ विकिरण सम्बन्धी उपयोग एक्स-विकिरण तथा
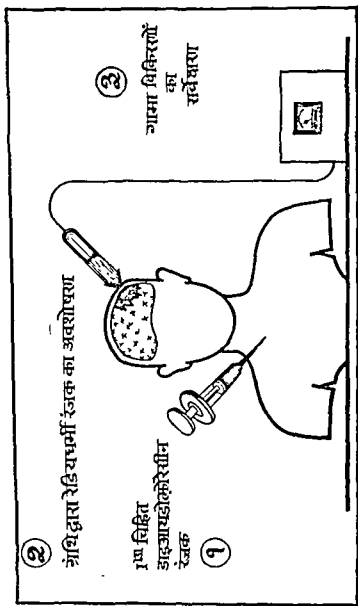
चित्र संख्या ३५—रेडियधर्मी आयोडीन १३१—रेडियधर्मी रंजक द्वारा मस्तिष्क-ग्रन्थि की पहचान

रेडियम चिकित्सा की भाँति हैं। इस विधि को टेलीयेरैपी[1] कहते हैं। इसमे बहुधा कोवाल्ट-६० उपयोग मे लाते है। यह रेडियम से सस्ता होता है और साथ ही इसमें अनेक अच्छे गुण वर्तमान हैं। इसके द्वारा रेडियम से अधिक नियन्त्रित गामा-विकिरण उत्पन्न होते हैं। सीजियम-१३७ का भी इस रूप मे उपयोग प्रारम्भ हो गया है। सीजियम-१३७ की अर्धजीवन अवधि कोबाल्ट से अधिक (२३ वर्ष) है। कुछ समय पहले तक इस समस्थानिक को तैयार करना कठिन कार्य था, परन्तु अब यूरेनियम खण्डन पदार्थो से यह सरलता से निकल आता है।

टेलीयेरैपी द्वारा सहस्रों रोगियों को मृत्यु के मुख से बचाया जा चुका है। इसके वेगशाली गामा-विकिरणो को शरीर के किसी स्थान पर सकेन्द्रित कर किसी ग्रंथि के कोषो का नाश किया जा सकता है। इसके द्वारा फेफड़ों के नासूर तथा चक्षु की ग्रथि जैसी कठिन व्याधियों की चिकित्सा की जा रही है।

इसके अतिरिक्त स्वर्ण, फासफोरस, आयोडीन, सोडियम, स्ट्राशियम आदि के रेडियवर्मी समस्थानिकों का रक्त एव चर्म के अनेक रोगो की चिकित्सा मे उपयोग हो रहा है। कुछ ऊपरी रोगों मे ऐसे समस्थानिक का प्रयोग होता है जो बीटा-कण देते है। इनको चर्म या अन्य रौगिक स्थानों पर सुई द्वारा अथवा दूसरे रूप मे रख देते है। रेडिय तत्व द्वारा स्वतन्त्र बीटा-कण रौगिक स्थान पर समाकर चर्म आदि रोगो को दूर करते है। तत्त्व को पतले प्लास्टिक की नलिका मे रखा जाता है जो बीटा-कण को आर-पार जाने देती है। इसी प्रकार गलग्रथि की तीव्र गति को सयन्त्रित करने मे आयोडीन काम आ रहा है।

कैंसर एक अत्यन्त भयकर रोग है जिसका अभी तक कोई निदान नहीं निकल सका। परन्तु इसकी चिकित्सा की खोज मे रेडियतत्त्व अत्यन्त

1. Teletherapy

उपयोगी हो रहे है। शरीर के किसी भाग में कैंसर होने से वहाँ पर बहुत परिवर्तन आ जाते है। ये क्यों आते है और इन्हें कैसे पहचाना जाय यह समस्या रेडियतत्त्व सुलझा रहे है। कैंसर की प्रारम्भिक अवस्था मे इन तत्त्वों द्वारा सफल चिकित्सा भी हो सकी है। जिससे रोगी अनेक वर्षो तक व्याधि-रहित अवस्था में जीवित रहे है। इसमें अनेकों रेडिय तत्त्वों का प्रयोग हो चुका है जिनमें स्वर्ण–१९८, लेंथेनम–१४०, फासफोरस–३२, इट्रियम–९०, कोवाल्ट–६०, टैंटेलम–१८२, स्ट्राशियम–९०, सीजियम–१३७ मुख्य है।

औपधि-विज्ञान एव चिकित्सा-निदान में रेडियधर्मी तत्त्वो का उपयोग कुछ समय से ही होना आरम्भ हुआ है। इसमें दिन प्रतिदिन सुधार हो रहे है। इसके द्वारा नयी औपधियों का निर्माण सम्भव हुआ है। हमें पूर्ण आशा है कि शीघ्र ही मनुष्य परमाणु ऊर्जा द्वारा अपनी इच्छानुसार अपना जीवन बना सकेगा। मनुष्य के हाथ में इस समय बहुत शक्तिशाली साधन है जिससे उसकी जीवन अवधि बढ रही है और रोगो से छुटकारा मिल रहा है।

रेडिय-तत्त्वों द्वारा ऊर्जा-उत्पादन

रेडिय-तत्त्वों की उपयोगिता वढाने के अनेक अनुसंधान हो रहे है। इनमे से एक जिसमे इन तत्त्वो द्वारा स्वतन्त्र विकिरण या उप्मा को ऊर्जा मे परिणत करने का प्रयत्न किया जा रहा है—अत्यन्त रोचक है। प्रतिकारी में परमाणु-खण्डन से स्वतन्त्र हुई ऊर्जा के विभिन्न उपयोग हैं जिन्हे हमारे पाठक अव जान गये होगे। परन्तु रेडियधर्मी समस्थानिको की ऊप्मा अथवा विकिरण का उपयोग एक क्रातिकारी विचार है। इसके पूर्णतया सफल होने पर हमारे हाथ मे ऐसे नन्हे ऊर्जा घर आ जायेंगे जिन्हे कही भी अपने साथ ले जा सकेंगे।

यद्यपि ये प्रयोग अभी परीक्षा-स्तर पर हैं, परन्तु इनके द्वारा उत्साह-वर्द्धक फल प्राप्त हुए हैं। इस सिद्धान्त पर संयुक्त राज्य अमेरिका की रेडियम कारपोरेशन फर्म ने एक लैम्प बनाया है जो रेलवे सिगनल में दस

वर्ष तक लगातार कार्य करता रहेगा। इस लैम्प को किसी वाहरी ऊर्जा की आवश्यकता न होगी। लैम्प में रेडियधर्मी क्रिप्टान गैस का उपयोग किया गया है। गैस कांच के लट्टू में बन्द है। इस लट्टू के एक ओर कांच का ताल लगाया गया है जिसकी अन्दरूनी सतह पर फासफर-मणिभ का लेप है। क्रिप्टान द्वारा स्वतन्त्र ऊर्जा से फासफर मणिभ मे चमक उत्पन्न होती है जो ताल द्वारा संकेन्द्रित होकर किसी दिशा विशेष में प्रकाश देगी। इसके प्रकाश से अंधेरी रात में १ मीटर दूरी पर समाचारपत्र पढ़ा जा सकता है। इस लैम्प को रात्रि में ५०० मीटर दूरी से देख सकते हैं। इस प्रकार यह रेलवे के सतर्कता सूचक का कार्य सुन्दरता से कर सकेगा। इस सकेतक मे विद्युत्-तार तथा वल्ब आदि की आवश्यकता नहीं होती, इसी कारण यह यंत्र सुविधाजनक सिद्ध हुआ है। तूफान पानी आदि से इसके नष्ट होने की आशंका भी नही है।

इसी सिद्धान्त पर एक छोटी परमाणु बैटरी वनायी गयी है जिसमें प्रोमीथियम–१४७ नामक समस्थानिक कार्य करता है। प्रोमीथियम से निकले बीटा-कण कैडेमियम सल्फाइड फास्फर को उत्तेजित करते हैं। इससे उत्पन्न प्रकाश को प्रकाशकोष द्वारा विद्युत् में परिणत किया जाता है। इस बैटरी में १ वोल्ट विभव अन्तर की विद्युत् उत्पन्न होती है। यह बैटरी १५० सेन्टीग्रेड निचले ताप पर भी भली प्रकार कार्य करेगी। वह जल के वाष्प ताप पर भी सुगमता से कार्य करेगी। प्रोमीथियम–१४७ की अर्धजीवन अवधि २.६ वर्ष है। इस कारण यह बैटरी कई वर्षों तक कार्य करने की क्षमता रखती है।

१९५९ के प्रारम्भ में एक नवीन विद्युत्-उत्पादक का अमेरिका में निर्माण हुआ। इस यंत्र का नाम स्नैप[1]–३ रखा गया। इसमें रेडियधर्मी तत्वांतरण द्वारा उदित ऊष्मा को विद्युत् ऊर्जा मे परिणत किया गया है।

1. Snap—III.

इस प्रथम निर्मित यंत्र का भार केवल पाच पौंड या ढाई किलोग्राम है। इसका व्यास १० से० मी० तथा ऊँचाई १३ से०मी० है। यह अतरिक्ष यानो मे सुगमता से कार्य कर सकेगा।

स्नैप तृतीय मे पोलोनियम--२१० का उपयोग हुआ है। इस रेडियतत्व की नन्ही गोली यत्र के मध्य मे रखी है। इसको चारो ओर से २७ तापविद्युत् युग्म घेरे हुए है। यह रेडिय तत्व की ऊष्मा ग्रहण कर चालित हो विद्युत् उत्पन्न करते है। पोलोनियम की अर्धजीवन अवधि १३८ दिन है। प्रथम अर्धजीवनकाल मे यह यत्र नौ सहस्र (९,०००) वाट घटा विद्युत् उत्पन्न करेगा। २ किलोग्राम की सर्वश्रेष्ठ रासायनिक बैटरी इतने समय मे केवल ४०० वाट घटा विद्युत् दे सकेगी। दूसरी अर्धजीवन अवधि मे यह इसकी आधी विद्युत्-ऊर्जा उत्पन्न करेगा। भविष्य मे ऐसी बैटरी मे सीरियम–१४४ का उपयोग होगा जिसकी अर्ध जीवन अवधि २९० दिन है। यह पोलोनियम से अधिक मात्रा मे एव अधिक काल तक ऊर्जा उत्पन्न कर सकेगा। सीरियम–१४४ यूरेनियम खण्डन क्रिया द्वारा उत्पन्न होता है और खण्डन से निकाला जा सकता है।

स्नैप तृतीय का उपयोग अतरिक्ष राकेटो मे होना सम्भव है। इसका भार कम है और भविष्य मे और भी कम हो जायेगा। इसका ऊँचे ताप पर प्रयोग किया जा सकता है, अत राकेटो का सधान करते समय उदित ऊष्मा से इसे कोई हानि न पहुँचेगी।

अध्याय १५

नये तत्त्व

तत्वातरण प्रयोगो से नये रेडियघर्मी तत्त्व बने। इनकी उपयोगिता हम पिछले अध्यायों मे देख चुके हैं। मेंडलीव की सारणी देखने से हमें ज्ञात होगा कि प्रकृति मे पाये जाने वाले तत्त्वों मे यूरेनियम सबसे भारी है। उसकी परमाणु सख्या ९२ है। परन्तु हाइड्रोजन (परमाणु सख्या १) से यूरेनियम के बीच में चार स्थान अथवा परमाणु संख्याएँ ऐसी हैं जिनमे हमें स्थायी तत्त्व नही मिलते और न ये तत्त्व अधिक मात्रा मे प्रकृति मे पाये गये हैं। ये सख्याएं ४३, ६१, ८५ और ८७ हैं। समय-समय पर कुछ वैज्ञानिकों ने इनकी खोज के दावे किये, परन्तु वे सब सिद्ध न हो सके। इन संख्याओं वाले तत्त्व प्रकृति में नही मिल सके।

परन्तु मनुष्य प्रकृति से भी आगे बढ़ गया है। उसने इन तत्वों को कृत्रिम रूप से बना लिया है। यह कार्य तत्वांतरण प्रयोगो द्वारा सफल हुआ यद्यपि ये नये तत्व स्वय अस्थिर हैं। इनके केवल रेडियघर्मी समस्थानिक ही प्राप्त हो सके हैं।

परमाणु-विखण्डन क्रिया से भी इस कार्य को बड़ी सहायता मिली। यह देखा गया कि खण्डन-प्रतिक्रिया द्वारा उत्पन्न खण्डों में ४३ और ६१ संख्या के तत्त्व थे। यूरेनियम-खण्डन-क्रिया की सम्यक् रूप से परीक्षा करने पर यह भी ज्ञात हुआ कि यूरेनियम में तत्वातरण प्रतिक्रिया द्वारा यूरेनियम से भारी तत्त्व भी बनते है। इतना ही नही, इन भारी तत्त्वों पर प्रतिक्रिया करने पर और भी भारी तत्त्व बने। विगत बीस वर्षों मे वैज्ञानिकों ने यूरेनियम से भारी दस नये तत्त्वों का निर्माण किया। वैज्ञानिको का यह कार्य इतिहास में स्वर्णाक्षरों से लिखने योग्य है।

यूरेनियम से हलके नये तत्त्व

परमाणु-संख्या ४३ (टेकनीशियम)

इस तत्त्व का प्रथम निर्माण मॉलिब्डेनम पर ड्यूट्रान की प्रतिक्रिया द्वारा हुआ था। ड्यूट्रानों के दण्ड को साइक्लोट्रान में त्वरित किया गया था। इसको इटैलियन वैज्ञानिक सेग्रे[1] ने सर्वप्रथम बनाया था। कृत्रिम तत्त्व होने के कारण इसका नाम टेक्नीसियम[2] रखा गया जो यूनानी शब्द टेक्नेटोस (अर्थात् कृत्रिम) पर आधारित है। इस तत्त्व के १० समस्थानिक ज्ञात हैं जिनमें सबसे अधिक स्थिर समस्थानिक का भार ९९ है। इसकी अर्धजीवन अवधि ४.७ $\times$ १०^{५} वर्ष है।

परमाणु-संख्या ६१ (प्रोमीथियम)

यह तत्त्व विरल मृदा परिवार का अंग है। १९३८ से १९४२ तक के काल में प्रजोडीमियम् तथा नियोडीमियम् तत्त्वों पर कुछ मूलभूत कणों द्वारा तत्त्वांतरण प्रयोग किये गये जिनके द्वारा परमाणु-संख्या ६१ का तत्त्व बनने का संकेत मिला था। परन्तु इन प्रयोगों की पुष्टि न हो सकी थी।

इस तत्त्व की निश्चित पहचान और विश्लेषण यूरेनियम खण्डन-क्रिया द्वारा मिले खण्डों में हुए। इस क्रिया द्वारा अनेक रेडियधर्मी तत्त्वों का सम्मिश्रण बनता है जिसमें से ६१ संख्या का तत्त्व भी रहता है। इस तत्त्व का नाम प्रोमीथियम (एक यूनानी देवता के नाम के आधार पर) रखा गया। इसके अनेक समस्थानिक मिले हैं, परन्तु पांच की भार संख्या निश्चित रूप से ज्ञात है। इनमें सबसे स्थिर समस्थानिक का भार १४७ है जिसकी अर्धजीवन अवधि ३.७ वर्ष है।

1. Segre 2. Technicium

परमाणु-संख्या ८५ (एस्टेटीन)

इस तत्त्व का सर्वप्रथम निर्माण सेग्रे तथा उनके साथ के अन्य अनुसन्धान-कर्त्ताओं ने १९४० में किया। उन्होने बिस्मथ पर तीव्र अल्फा कण के आक्रमण द्वारा इस तत्व का निर्माण किया। अल्फा-कणों को साइक्लोट्रान द्वारा तीन करोड़ बीस लाख (३,२०,००,०००) इलेक्ट्रान वोल्ट त्वरित किया गया था।

$$_{८३}\text{बिसमथ}^{२०९}+{_{२}}\text{हीलियम}^{४}\longrightarrow{_{८५}}\text{नवतत्त्व}^{२११}+२\,{_{०}}\text{न्यूट्रान}^{१}$$

$$_{83}Bi^{209}+{_{2}}He^{4}\longrightarrow{_{85}}(\text{New element})^{211}+2\,{_{0}}n^{1}$$

यह तत्त्व के-इलेक्ट्रान-ग्रहण[1] द्वारा पोलोनियम^{२११} मे तत्त्वांतरित हो जाता है।

$$_{८५}\text{नवतत्व}^{२११}+{_{-१}}\text{इलेक्ट्रान}^{०}\longrightarrow{_{८४}}\text{पोलोनियम}^{२११}$$

$$_{85}(\text{New element})^{211}+{_{-1}}e^{0}\longrightarrow{_{84}}Po^{211}$$
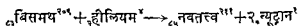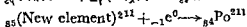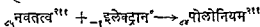
इस तत्त्व के दस समस्थानिकों की खोज की पुष्टि हो चुकी है। इन सबकी अर्धजीवन अवधि बहुत अल्प है। सबसे अधिक अवधि वाला समस्थानिक २१० भार संख्या वाला है (अर्धजीवन अवधि ८.३ घंटा)

इस तत्त्व का नाम एस्टेटीन[2] रखा गया है जो यूनानी शब्द एस्टोस अर्थात 'अस्थिर' से निकला है।

परमाणु-संख्या ८७ (फ्रांसियम)

१९३९ मे फ्रांसीसी वैज्ञानिक पेरी[3] ने एक्टीनियम शृंखला मे इसकी खोज की। उन्होंने अपने प्रयोगों मे देखा कि ९९ प्रतिशत एक्टीनियम--२२७ बीटाकण स्वतन्त्र करके रेडिय एक्टीनियम बनाता है। परन्तु उसका एक प्रतिशत भाग अल्फा-कण स्वतन्त्र करके परमाणु-संख्या

1. K-electron capture　2. Astatine　3. Percy

नेप्चूनियम के गुणों के सम्बन्ध में प्रारम्भ में थोड़ा मतभेद रहा। प्र
विचारधारा के अनुसार उसके गुण रहेनियम[1] के अनुसारी होने चाहिए थे
सूक्ष्म निरीक्षण से यह अनुमान असत्य सिद्ध हुआ। इस तत्त्व के गु
यूरेनियम से अधिक मिलते-जुलते हैं।

परमाणु-संख्या ९४ (प्लूटोनियम)

इस तत्त्व की खोज १९४० मे हुई। मैकमिलन, सीबोर्ग एवं अन्य
कार्यकर्ताओं के प्रयोगों द्वारा यह तत्त्व बना। यूरेनियम-२३८ पर ड्यूट्रान
आक्रमण से नेप्चूनियम–२३८ बना जो एक इलेक्ट्रान स्वतन्त्र कर ९४ सख्य
का तत्त्व बनाता था। इस तत्त्व का नाम प्लूटोनियम[2] रखा गया जो प्लूटो
नामक ग्रह के आधार पर था।

प्लूटोनियम के सबसे महत्त्वपूर्ण समस्थानिक का भार २३९ है। १९४१
में सीबोर्ग ने इस समस्थानिक का निर्माण यूरेनियम पर मन्द न्यूट्रानों की
प्रतिक्रिया द्वारा किया। इसकी अर्धजीवन अवधि चौबीस सहस्र चार सौ
(२४,४००) वर्ष है। यह भी यूरेनियम–२३५ की भाँति खण्डित हो सकता
है। प्लूटोनियम के पन्द्रह समस्थानिक ज्ञात हैं जिनके भार २३२, २३३,
२३४, २३५, २३६, २३७, २३८, २३९, २४०, २४१, २४२, २४३, २४४,
२४५ और २४६ हैं। इनमें २४४ भार का समस्थानिक सबसे स्थिर है,
जिसकी अर्धजीवन अवधि ७.६×१०^{७} वर्ष है।

परमाणु-संख्या ९५ (अमेरिसियम)

सीबोर्ग तथा अन्य सहकार्यकर्ताओं ने १९४४ में इसकी खोज की थी।
यूरेनियम–२३८ पर चार करोड़ (४×१०^{७}) इलेक्ट्रान वोल्ट ऊर्जाशील
अल्फ़ा-कण के आक्रमण से प्लूटोनियम बना—

1. Rhenium 2. Plutonium

$${}_{९२}\text{यूरेनियम}^{२३८} + {}_{२}\text{हीलियम}^{४} \rightarrow {}_{९४}\text{प्लूटोनियम}^{२४१} + {}_{०}\text{न्यूट्रान}^{१}$$

$${}_{92}U^{238} + {}_{2}He^{4} \rightarrow {}_{94}Pu^{241} + {}_{0}n^{1}$$
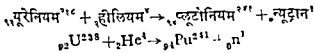
प्लूटोनियम समस्थानिक एक बीटा-कण स्वतन्त्र कर तत्वसख्या ९५ मे तत्वान्तरित होता है।

$${}_{९४}\text{प्लूटोनियम}^{२४१} \rightarrow {}_{९५}\text{अमेरिसियम}^{२४१} + {}_{-१}\text{इलेक्ट्रान}^{०}$$

$${}_{94}Pu^{241} \rightarrow {}_{95}Am^{241} + {}_{-1}e^{0}$$
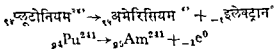
इसकी अर्धजीवन अवधि पाँच सौ वर्ष है।

इस तत्त्व के दस समस्थानिक ज्ञात है। इनमे २४३ का समस्थानिक सबसे दीर्घ अर्धजीवन अवधि का है (७,९५० वर्ष)।

परमाणु-संख्या ९६ (क्यूरियम)

इस तत्त्व की खोज सीबोर्ग ने १९४४ मे तत्त्व ९३ से पहले की थी। इसका सर्वप्रथम निर्माण प्लूटोनियम-२३९ पर अल्फा-कण के आक्रमण द्वारा हुआ था।

$${}_{९४}\text{प्लूटोनियम}^{२३९} + {}_{२}\text{हीलियम}^{४} \rightarrow {}_{९६}\text{क्यूरियम}^{२४२} + {}_{०}\text{न्यूट्रान}^{१}$$

$${}_{94}Pu^{239} + {}_{2}He^{4} \longrightarrow {}_{96}Cm^{242} + {}_{0}n^{1}$$
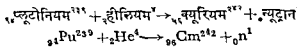
रेडियधर्मिता की खोज करनेवाली प्रसिद्ध वैज्ञानिक मैडम क्यूरी की स्मृति मे इस तत्त्व का नाम क्यूरियम रखा गया।

क्यूरियम के तेरह समस्थानिक ज्ञात है। क्यूरियम-२४५ की अर्ध-जीवन अवधि लगभग चौदह सहस्र (१४,०००) वर्ष है।

परमाणु-संख्या ९७ (बर्कीलियम)

१९४९ के अन्त मे सीबोर्ग तथा अन्य कार्यकर्ताओं ने तत्त्व संख्या ९७ का निर्माण किया। इसका नाम बर्कीलियम रखा गया। इसे अमेरिसियम पर अल्फा-कण (३.५×१०^{७} इवो० ऊर्जायुक्त) के आक्रमण द्वारा निर्मित किया गया।

$$_{९५}\text{अमेरिसियम}^{२४१} + _{२}\text{हीलियम}^{४} \rightarrow _{९७}\text{वर्कीलियम}^{२४३} + _{२०}\text{न्यूट्रान}^{१}$$
$$_{95}Am^{241} + _{2}He^{4} \longrightarrow _{97}Bk^{243} + 2\ _{0}n^{1}$$
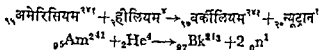
वर्कीलियम के आठ समस्थानिक (२४३, २४४, २४५, २४६, २४७, २४८, २४९, २५०) ज्ञात हैं जिनमें सबसे अधिक दीर्घ अर्धजीवन अवधि लगभग सात सहस्र वर्ष समस्थानिक २४७ की है।

परमाणु-संख्या ९८ (केलिफोर्नियम)

१९५० में केलिफोर्निया विश्वविद्यालय में सीबोर्ग एवं कार्यकर्ताओं ने तत्त्व सख्या ९८ के निर्माण की घोषणा की और इस तत्त्व का नाम केलिफोर्नियम रखा।

क्यूरियम पर तीव्र अल्फा-कण के आक्रमण द्वारा इसे बनाया गया।

$$_{९६}\text{क्यूरियम}^{२४२} + _{२}\text{हीलियम}^{४} \rightarrow _{९८}\text{केलीफोर्नियम}^{२४४} + _{२०}\text{न्यूट्रान}^{१२}$$
$$_{96}C^{242} + _{2}He^{4} \longrightarrow _{98}Cf^{244} + 2\ _{0}n^{1}$$
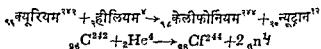
केलिफोर्नियम के ११ समस्थानिक ज्ञात हैं। २४९ भार-संख्या के समस्थानिक की अर्धजीवन अवधि लगभग चार सौ (४००) वर्ष है।

[परमाणु-संख्या ९९ (आइंस्टीनियम)[1]

नवम्बर, १९५२ में अमेरिका द्वारा किये गये प्रशान्त महासागर परमाणु विस्फोट के खण्ड में तत्त्व ९९ और १०० की खोज हुई थी। किरणभावित यूरेनियम–२३८ के अवशेष में ये दोनो तत्त्व (परमाणु-संख्या ९९ भार-संख्या २५३ तथा २५५; परमाणु-संख्या १०० भार-संख्या २५५) पाये गये थे। यूरेनियम द्वारा न्यूट्रान अवशोषित होने से इनका जन्म हुआ था। उस विस्फोट में भयंकर मात्रा में न्यूट्रानों का द्रावक उत्पन्न

1. Es

हुआ। जिस कारण एक यूरेनियम नाभिक १७ न्यूट्रानो का अवशोपण कर सका। फलस्वरूप ये दोनो तत्त्व बने। १९५४ में लगभग एक ही समय, अमेरिका के केलीफोर्निया विश्वविद्यालय तथा ओरेगन प्रयोगशालाओं मे और स्वीडन की स्टाकहोम प्रयोगशाला मे तत्त्व ९९ का निर्माण किया गया। यूरेनियम–२३८ पर नाइट्रोजन नाभिक की प्रतिक्रिया द्वारा यह तत्त्व बनाया गया। दूसरी विधि मे प्लूटोनियम–२३९ पर क्रमशः न्यूट्रान प्रतिक्रिया द्वारा यह तत्त्व बना। प्रसिद्ध वैज्ञानिक आइस्टीन के नाम पर इसे आइस्टीनियम पुकारा गया। अब तक इसके दस समस्थानिक ज्ञात है। आइस्टीनियम–२५४ की अर्धजीवन अवधि २८० दिन है।

परमाणु-संख्या १०० (फर्मियम)[1]

प्लूटोनियम पर न्यूट्रान प्रतिक्रिया द्वारा तत्त्व १०० का निर्माण हुआ है। दूसरी विधि मे यूरेनियम पर तीव्र आक्सीजन नाभिक की प्रतिक्रिया द्वारा यह तत्त्व बना। भौतिकशास्त्री स्वर्गीय एन्रीको फर्मी के सम्मान में इस तत्त्व का नाम फर्मियम रखा गया है। इसके सात समस्थानिको का निर्माण हो चुका है (२५०–२५६)।

परमाणु-संख्या १०१ (मेंडलीवियम)[2]

१९५५ मे केलीफोर्निया विश्वविद्यालय की विकिरण प्रयोगशाला में सीवोर्ग तथा सहकार्यकर्ताओ ने तत्त्व सख्या १०१ के निर्माण की घोपणा की, जिसकी भार-सख्या २५६ थी। तत्त्व संख्या ९९ (आइस्टीनियम) पर अल्फा-कण के आक्रमण द्वारा इसका निर्माण सम्भव हुआ था। सीवोर्ग ने इस तत्त्व का नाम उन्नीसवी शताब्दी के प्रसिद्ध रूसी वैज्ञानिक मैंडलीव के सम्मान मे मेडलीवियम रखा।

1. Fm 2. Md

तत्त्व-संख्या १०२ (नोबेलियम)[1]

इस तत्त्व का प्रथम निर्माण अमेरिका, ब्रिटेन और स्वीडन के वैज्ञानिकों के सहकारी प्रयास द्वारा हुआ। स्वीडन के नोबेल इंस्टीट्यूट में इन वैज्ञानिकों ने प्रयोग किये जिनमें क्यूरियम–२४४ (तत्त्व-संख्या ९६) पर कार्बन आयन का आक्रमण किया गया। कार्बन–१३ आयन को नोबेल इंस्टीट्यूट के साइक्लोट्रान द्वारा त्वरित किया गया था। ये प्रयोग मार्च, १९५७ में प्रथम बार किये गये। तत्पश्चात् अप्रैल में इन प्रयोगों की पुष्टि की गयी। जुलाई, १९५७ में इस तत्त्व के निर्माण की घोषणा हुई। अनुसन्धानकर्ताओं के अनुसार इस तत्त्व का भार २५३ तथा अर्धजीवन अवधि लगभग १६ मिनट थी। इसका नाम उन्होंने जगत् प्रसिद्ध नोबेल पुरस्कार के स्थापक नोबेल के सम्मान में नोबेलियम प्रस्तावित किया।

केलीफोर्निया विश्वविद्यालय के कार्यकर्ता अपने प्रयोगो द्वारा इस तत्त्व के निर्माण को दोहरा न सके। परन्तु अप्रैल, १९५८ मे उन्होंने क्यूरियम के विरल समस्थानिक २४६ पर कार्बन–१२ के आयन का आक्रमण किया। कार्बन आयन को छः करोड़ अस्सी लाख (६,८०,००,०००) इलेक्ट्रान वोल्ट की ऊर्जा तक त्वरित किया गया था। फलस्वरूप तत्त्व-संख्या १०२ बना जिसका भार २५४, और अर्धजीवन अवधि केवल तीन सेकेण्ड थी। इन प्रयोगो मे तत्त्व के चालीस परमाणुओ के निर्माण की पुष्टि हुई। यह तत्त्व शीघ्र ही एक अल्फ़ा-कण को स्वतन्त्र कर फर्मियम–२५० मे परिणत हो जाता है। इस निर्माण की पुष्टि भौतिक एवं रासायनिक क्रियाओं द्वारा हो चुकी है।

सीबोर्ग ने सुझाव रखा कि एक्टीनियम (परमाणु संख्या ८९) तत्त्व से एक नयी तत्त्व श्रेणी का निर्माण होता है जिसे एक्टीनाइड श्रेणी कह सकते हैं। इन तत्त्वों के गुण विरल मृदा को लैथेनाइड श्रेणी की भाँति हैं। इस

1. No

श्रेणी में भी विरल मृदाओं की भाँति १५ तत्व होने चाहिए जो तत्व संख्या १०३ में समाप्त हों। इसके पश्चात् तत्व-संख्या १०४ इस श्रेणी का न होकर आवर्त-सारणी के चतुर्थ वर्ग के हैफनियम तत्व के समान होगा। तत्पश्चात् टैण्टलम, टंगस्टन आदि के समान गुण वाले तत्व बनेंगे।

अभी और भी अनेक पार-यूरेनियम तत्वों का निर्माण होना सम्भव है। सम्भवतः ७-८ तत्व और बनेंगे। परन्तु यह सब अल्पायु ही होंगे। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि अब यूरेनियम जैसे गुरु तत्वों पर भारी आयनों (कार्बन, नाइट्रोजन, आक्सीजन आदि) के आक्रमण द्वारा नये तत्वों का निर्माण होगा। इन आयनों को त्वरित करने के लिए ऐसे त्वरकों की आवश्यकता होगी जो इस समय प्राप्त त्वरकों से कहीं शक्तिशाली हों। अमेरिका में अभी एक नया त्वरक बना है जिसके द्वारा कणों को ३×१०^{१०} इवो० की ऊर्जा दी जा सकेगी। इससे भी अधिक शक्तिशाली त्वरकों के बनाये जाने की योजना अमेरिका तथा सोवियत संघ में प्रस्तुत है।

तत्त्व-संख्या १०२ (नोबेलियम)[1]

इस तत्त्व का प्रथम निर्माण अमेरिका, ब्रिटेन और स्वीडन के वैज्ञानिकों के सहकारी प्रयास द्वारा हुआ। स्वीडन के नोबेल इंस्टीट्यूट में इन वैज्ञानिकों ने प्रयोग किये जिनमे क्यूरियम–२४४ (तत्त्व-संख्या ९६) पर कार्बन आयन का आक्रमण किया गया। कार्बन–१३ आयन को नोबेल इंस्टीट्यूट के साइक्लोट्रान द्वारा त्वरित किया गया था। ये प्रयोग मार्च, १९५७ में प्रथम बार किये गये। तत्पश्चात् अप्रैल मे इन प्रयोगों की पुष्टि की गयी। जुलाई, १९५७ में इस तत्त्व के निर्माण की घोषणा हुई। अनुसन्धानकर्ताओं के अनुसार इस तत्त्व का भार २५३ तथा अर्धजीवन अवधि लगभग १९ मिनट थी। इसका नाम उन्होंने जगत् प्रसिद्ध नोबेल पुरस्कार के स्थापक नोबेल के सम्मान में नोबेलियम प्रस्तावित किया।

केलीफोर्निया विश्वविद्यालय के कार्यकर्ता अपने प्रयोगों द्वारा इस तत्त्व के निर्माण को दोहरा न सके। परन्तु अप्रैल, १९५८ में उन्होंने क्यूरियम के विरल समस्थानिक २४६ पर कार्बन–१२ के आयन का आक्रमण किया। कार्बन आयन को छः करोड़ अस्सी लाख (६,८०,००,०००) इलेक्ट्रान वोल्ट की ऊर्जा तक त्वरित किया गया था। फलस्वरूप तत्त्व-संख्या १०२ बना जिसका भार २५४, और अर्धजीवन अवधि केवल तीन सेकेण्ड थी। इन प्रयोगो मे तत्त्व के चालीस परमाणुओं के निर्माण की पुष्टि हुई। यह तत्त्व शीघ्र ही एक अल्फा-कण को स्वतन्त्र कर फर्मियम–२५० में परिणत हो जाता है। इस निर्माण की पुष्टि भौतिक एव रासायनिक क्रियाओं द्वारा हो चुकी है।

सीबोर्ग ने सुझाव रखा कि एक्टीनियम (परमाणु संख्या ८९) तत्त्व से एक नयी तत्त्व श्रेणी का निर्माण होता है जिसे एक्टीनाइड श्रेणी कह सकते हैं। इन तत्त्वो के गुण विरल मृदा की लैंथेनाइड श्रेणी की भाँति हैं। इस

1. No

श्रेणी में भी विरल मृदाओं की भाँति १५ तत्त्व होने चाहिए जो तत्त्व संख्या १०३ में समाप्त हों। इसके पश्चात् तत्त्व-संख्या १०४ इस श्रेणी का न होकर आवर्त-सारणी के चतुर्थ वर्ग के हैफनियम तत्त्व के समान होगा। तत्पश्चात् टैण्टलम, टंग्स्टन आदि के समान गुण वाले तत्त्व बनेंगे।

अभी और भी अनेक पार-यूरेनियम तत्त्वों का निर्माण होना सम्भव है। सम्भवतः ७-८ तत्त्व और बनेंगे। परन्तु यह सब अल्पायु ही होंगे। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि अब यूरेनियम जैसे गुरु तत्त्वों पर भारी आयनों (कार्बन, नाइट्रोजन, आक्सीजन आदि) के आक्रमण द्वारा नये तत्त्वों का निर्माण होगा। इन आयनों को त्वरित करने के लिए ऐसे त्वरकों की आवश्यकता होगी जो इस समय प्राप्त त्वरकों से कहीं शक्तिशाली हों। अमेरिका में अभी एक नया त्वरक बना है जिसके द्वारा कणों को ३×१०^{१०} इवो० की ऊर्जा दी जा सकेगी। इससे भी अधिक शक्तिशाली त्वरकों के बनाये जाने की योजना अमेरिका तथा सोवियत संघ में प्रस्तुत है।

अध्याय १६

नाभिक-संगलन प्रतिक्रिया

परमाणु अनुसन्धानो मे दिन प्रतिदिन नयी वृद्धियाँ हो रही हैं। नियन्त्रित संगलन क्रिया भी ऐसी ही अभिवृद्धि है। कुछ वर्षों से वैज्ञानिकों ने इस ओर घ्यान दिया है और यह सम्भव है कि कुछ वर्षों बाद इस क्रिया द्वारा मनुष्य ऊर्जा प्राप्त करने लगे। यदि इसमे सफलता मिल गयी तो मानव जाति को सदा के लिए नये ऊर्जा-स्रोत ढूढने से छुटकारा मिल जायगा।

हम पिछले अध्यायो मे देख चुके हैं कि जब यूरेनियम-जैसे गुरु तत्त्व का खण्डन होता है तो उस समय ऊर्जा का उदय होता है। इसके विपरीत जब हल्के तत्त्वो का सगलन होगा उस समय भी ऊर्जा स्वतन्त्र होगी, क्योकि प्रकृति मे आवर्त-सारणी के मध्य वाले तत्त्व (सिल्वर या रजत के लगभग) सब तत्त्वो से अधिक स्थिर हैं। उदाहरण द्वारा यह स्पष्ट हो जायगा।

हाइड्रोजन के एक समस्थानिक का भार २ है। इसे ड्यूटीरियम भी कहा जाता है। यदि ड्यूटीरियम के दो नाभिकों का संगलन हो सके तो निम्नलिखित प्रतिक्रिया होगी।

${}_{१}$ड्यूटीरियम^{२} $+$ ${}_{१}$ड्यूटीरियम^{२} $\rightarrow$ ${}_{२}$हीलियम^{४}

$${}_1D^2 + {}_1D^2 \rightarrow {}_1He^4$$
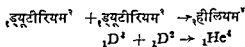
ड्यूटीरियम का भार २.०१४७३५ है तथा हीलियम का ४.००३८७३ है। दो ड्यूटीरियम परमाणुओं का भार ४ ०२९४७० होगा जबकि निर्मित हीलियम का भार केवल ४.००३८७३ होगा। सगलन क्रिया द्वारा ०२५५९७ संमात्रा का क्षय होगा। इस समात्रा के क्षय से लगभग ढाई करोड़ (२.५+१०^{७}) इलेक्ट्रान वोल्ट ऊर्जा स्वतन्त्र होगी। इसी प्रकार दो आक्सीजन नाभिकों के सगलन द्वारा एक करोड अस्सी लाख (१.८+१०^{७}) इलेक्ट्रान वोल्ट ऊर्जा निकलेगी।

यूरेनियम एक गुरु-तत्त्व है और हाइड्रोजन सबसे हलका तत्त्व है। इस कारण भार के अनुसार ड्यूटीरियम सगलन द्वारा यूरेनियम खण्डन की अपेक्षा अत्यधिक ऊर्जा स्वतन्त्र होगी। एक ग्राम यूरेनियम खण्डन द्वारा बाईस सहस्र (२२,०००) किलोवाट - घण्टे ऊर्जा मिलेगी और एक ग्राम ड्यूटीरियम के संगलन द्वारा एक लाख साठ सहस्र (१,६०,०००) किलोवाट घण्टे ऊर्जा प्राप्त होगी।

नाभिक-खण्डन प्रतिक्रिया को शृंखला रूप मे करने की विधियाँ ज्ञात है और इस प्रतिक्रिया के उपयोग ससार मे अनेक स्थानो पर हो रहे है। यदि एक बार खण्डन प्रतिक्रिया प्रारम्भ हो जाय तो उसे चलाये रखा जा सकता है। परन्तु संगलन-क्रिया मे प्रत्येक ड्यूटीरियम-युग्म के बीच प्रतिकर्षण को पार करने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होगी। इस कारण संगलन क्रिया को सफल बनाने मे अनेक कठिनाइयाँ आती हैं। बहुत समय तक लोगों को इसकी सफलता मे सन्देह था। परन्तु अब इस विचारधारा में परिवर्तन आ गया है।

तत्त्वो के नाभिक आवेश के कारण उनके सगलन मे सबसे अधिक रुकावट आती है। यदि दो कणो को इतनी अधिक गतिज ऊर्जा प्राप्त हो कि वह आवेश के प्रतिकर्षण को पार कर सके तभी सलगन सम्भव होगा। सगलन सम्भावना को प्रायिकता के सिद्धान्त से ज्ञात किया जा सकता है। गतिज ऊर्जा बढ़ने से सगलन सम्भावना में वृद्धि होगी। इसका अनुमान निम्नलिखित सारणी द्वारा हो सकता है।

इयूट्रान परमाणुओं की संगलन संभावना सारणी

ड्यूट्रान की गतिज ऊर्जा इवो० में	संगलन प्राधिकता
१००	$१०^{-१०}$
४००	$१०^{-१०}$
९००	$१०^{-१०}$
१,६००	$१०^{-१२}$
२,५००	$१०^{-११}$
१०,०००	$१०^{-६}$
४०,०००	$१०^{-३}$

संगलन सम्भावना बढ़ाने के लिए गतिज ऊर्जा बढ़ाना आवश्यक है। ऊष्मा प्रदान करने पर गतिज ऊर्जा बढ़ सकती है। यदि हम ड्यूटीरियम कणों को सात सहस्र पाँच सौ (७,५००) डिग्री सेण्टीग्रेड के ताप पर लायें तो लगभग एक इलेक्ट्रान वोल्ट ऊर्जा गैस की प्राप्ति होगी जो संगलन कार्य के किसी उपयोग की न होगी। दस लाख ($१०^{६}$) डिग्री ताप पर स्थिति बदल जायगी और ड्यूटीरियम का संगलन होना प्रारम्भ हो जायगा। लगभग पचास लाख ($५+१०^{६}$) डिग्री ताप पर एक किलोग्राम ड्यूटीरियम एक क्षण में संगलित होकर पन्द्रह करोड ($१.५+१०^{८}$) किलोवाट घण्टा ऊर्जा उत्पन्न करेगा।

कुछ अन्य संगलन प्रतिक्रियाएँ उच्च ताप पर सम्भव हैं। हाइड्रोजन व लीथियम संगलित होकर हीलियम के दो परमाणु बनायेंगे। सामान्यतः जो प्रतिक्रियाएँ अत्यधिक उच्च ताप पर होती हैं उन्हें तापनाभिक प्रति-क्रियाएँ कहते हैं।

प्रकृति में ऐसी क्रियाएँ सम्भव हैं और हुआ भी करती हैं। सूर्य तथा तारिकाओं के मध्य ये क्रियाएँ ही हुआ करती हैं। इनसे उदित ऊर्जा ही उनके उच्च ताप का कारण है। ऐसा अनुमान है कि सूर्य विम्ब के मध्य मे दो करोड़ ($२+१०^{७}$) सेण्टीग्रेड का ताप रहता है। इस ताप पर हाइ-

हाइड्रोजन से हीलियम इतनी शीघ्रता से बनेगा कि सूर्य में विस्फोट हो जायगा। इसी प्रकार हाइड्रोजन-लीथियम प्रतिक्रिया भी इस ताप पर अति तीव्रता से होगी। इन क्रियाओं द्वारा सूर्य की ऊष्मा इतने काल तक नहीं ठहर सकती।

सूर्य के प्रकाश तथा ऊष्मा का क्या रहस्य है? इसका उत्तर वैज्ञानिक बेथे ने दिया है। उसके अनुसार इतने उच्च ताप पर सूर्य के अन्दर कार्बन-नाइट्रोजन चक्र चलता है। इसी चक्र द्वारा सूर्य को निरन्तर ऊष्मा प्राप्त हो रही है। इस चक्र में अनेक तापनाभिक क्रियाएँ भाग लेती हैं। इसका प्रारम्भ कार्बन-१२ पर एक प्रोटान के आक्रमण द्वारा होता है।

$_{6}$कार्बन^{12} + $_{1}$हाइड्रोजन^{1} → $_{7}$नाइट्रोजन^{13} + विकिरण ऊर्जा

$$_{6}C^{12} + {}_{1}H^{1} \rightarrow {}_{7}N^{13} + \text{Energy}$$

नाइट्रोजन-१३ अस्थिर समस्थानिक है और एक पाजिट्रान स्वतन्त्र करता है।

$_{7}$नाइट्रोजन^{13} → $_{6}$कार्बन^{13} + $_{+1}$पाजिट्रान^{0}

$$_{7}N^{13} \rightarrow {}_{6}C^{13} + {}_{+1}e^{0}$$
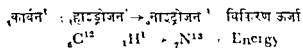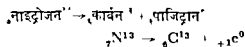
फलस्वरूप बने कार्बन-१३ नाभिक से एक अन्य प्रोटान प्रतिक्रिया कर नाइट्रोजन-१४ का निर्माण करता है।

$_{6}$कार्बन^{13} + $_{1}$हाइड्रोजन^{1} → $_{7}$नाइट्रोजन^{14} + विकिरण ऊर्जा

$$_{6}C^{13} + {}_{1}H^{1} \rightarrow {}_{7}N^{14} + \text{Energy}$$
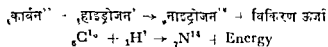
चक्र की तृतीय दशा में नाइट्रोजन पर एक अन्य प्रोटान तत्त्वान्तरण किया करता है। इससे आक्सीजन-१५ का नाभिक निर्मित होता है।

$_{7}$नाइट्रोजन^{14} + $_{1}$हाइड्रोजन^{1} → $_{8}$आक्सीजन^{15} + विकिरण ऊर्जा

$$_{7}N^{14} + {}_{1}H^{1} \rightarrow {}_{8}O^{15} + \text{Energy}$$
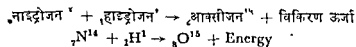
आक्सीजन-१५ अस्थिर समस्थानिक होने के कारण एक पाजिट्रान स्वतन्त्र कर नाइट्रोजन-१५ में तत्त्वान्तरित होगा।

${}_{8}$आक्सीजन^{15} → ${}_{7}$नाइट्रोजन^{15} + ${}_{1}$पाजिट्रान^{0}

$${}_{8}O^{15} \rightarrow {}_{7}N^{15} + {}_{+1}e^{0}$$
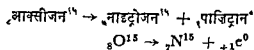
चक्र की अन्तिम दशा मे नाइट्रोजन–१५ पर प्रोटान का आक्रमण होता है। फलस्वरूप कार्बन–१२ तथा हीलियम–४ बनते हैं।

${}_{7}$नाइट्रोजन^{15} + ${}_{1}$हाइड्रोजन^{1} → ${}_{6}$कार्बन^{12} + ${}_{2}$हीलियम^{4}

$${}_{7}N^{15} + {}_{1}H^{1} \rightarrow {}_{6}C^{12} + {}_{2}He^{4}$$
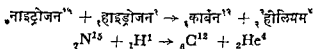
अन्त मे कार्बन–१२ का नाभिक बनता है जिससे चक्र फिर प्रारम्भ होता है। इस क्रिया मे चार प्रोटान अन्तर्धान होते है और एक हीलियम तथा दो पाजिट्रान उत्पन्न होते हैं। चक्र की इन सारी क्रियाओं से यह सारांश निकला कि चार प्रोटान द्वारा एक हीलियम, दो पाजिट्रान एवं विकिरण ऊर्जा उत्पन्न होती है।

४ हाइड्रोजन^{1} → ${}_{2}$हीलियम^{4} + २${}_{+1}$ पाजिट्रान^{0} + ऊर्जा

$$4\ {}_{1}H^{1} \rightarrow {}_{2}He^{4} + 2{}_{+1}e^{0} + \text{Energy}$$
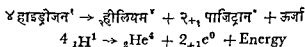
चक्र के एक बार पूर्ण होने मे दो करोड़ सत्तर लाख (२,७०,००,०००) इलेक्ट्रान वोल्ट ऊर्जा उत्पन्न होगी। बेथे के अनुसार सूर्य में हाइड्रोजन के हीलियम में परिणत होने से ऊर्जा उत्पन्न होती है, यद्यपि यह क्रिया अप्रत्यक्ष रूप मे होती है। अभी इस क्रिया से सूर्य अस्सी अरब वर्ष तक (८×१०^{१०}) ऊर्जा उत्पन्न करता रहेगा। ऐसी भी सम्भावना हो सकती है कि इसी प्रकार के कुछ अन्य चक्र सूर्य तथा तारागणों मे क्रिया कर रहे हों।

संगलन-ऊर्जा का विस्फोटक उपयोग

सूर्य तथा तारागणो में उच्च ताप तथा दवाव रहता है। यह ताप-नाभिक प्रतिक्रियाओ के लिए उपयुक्त दशा रहती है। परमाणु बम के विस्फोट मे अत्यन्त क्षणिक काल के लिए यह ताप तथा दवाव की दशा वर्तमान रहती है। उतने काल में ताप-नाभिक प्रतिक्रिया की जा सकती है। परन्तु वही प्रतिक्रिया सम्भव होगी जो अति तीव्रता से विकसित होती हो।

सबसे तीव्र ताप-नाभिक प्रतिक्रिया ड्यूटीरियम तथा ट्राइटियम (हाइड्रोजन का भार-सख्या ३ वाला समस्थानिक) के बीच विकसित होती है। (लगभग $१०^{-६}$ सेकेण्ड)।

$$_{१}\text{ट्राइटियम}^{३} + _{१}\text{ड्यूटीरियम}^{२} \rightarrow _{२}\text{हीलियम}^{४} + _{०}\text{न्यूट्रान}^{१}$$

$$_{1}H^{3} + _{1}H^{2} \rightarrow _{2}He^{4} + _{0}n^{1}$$
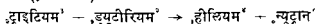
इसी प्रतिक्रिया का हाइड्रोजन बम मे उपयोग किया गया है। इस विस्फोटक मे एक सामान्य परमाणु बम रहता है, साथ मे एक बर्तन मे हाइड्रोजन एव ट्राइटियम रखे जाते हैं। (तत्त्व या यौगिक के रूप मे) परमाणु विस्फोट के द्वारा तापनाभिक प्रतिक्रिया के लिए उचित अवस्थायें प्रस्तुत हो जाती है, जो साथ मे हाइड्रोजन बम का विस्फोट भी करती है।

हाइड्रोजन बम को परमाणु बम से कही अधिक विध्वसकारी बनाया जा सकता है। हाइड्रोजन बम, अमेरिका, सोवियत सघ तथा ग्रेट ब्रिटेन द्वारा बनाये तथा परीक्षित किये जा चुके है।

नियन्त्रित तापनाभिक प्रतिक्रिया

हाइड्रोजन बम के विस्फोट ने अनियन्त्रित ऊष्मानाभिक प्रतिक्रिया की व्यावहारिकता को सिद्ध कर दिया है। परन्तु क्या मानव इस शक्ति को शान्तिपूर्ण उपयोग मे ला सकेगा ? यह प्रश्न हमारे सामने है। अभी इस समस्या को ससार के वैज्ञानिक भली-भाँति नही सुलझा पाये हैं। १९५५ मे जेनीवा मे परमाणु के शान्तिपूर्ण उपयोगो का प्रथम सम्मेलन हुआ था। उसका सभापतित्व भारत के प्रसिद्ध वैज्ञानिक होमी जहाँगीर भाभा ने किया था। उन्होने अपने अध्यक्षपदीय भाषण मे सारे वैज्ञानिको का ध्यान इस ओर आकर्षित किया था और कहा था कि विश्व की ईंधन की समस्या यूरेनियम, थोरियम आदि गुरुतत्त्वो से नही हल होगी। मानव जाति की ऊर्जा की भूख उस समय शान्त होगी जब वह तापनाभिक सगलन प्रतिक्रिया का नियन्त्रित रूप से उपयोग कर सकेगी। इस भाषण ने उस सभा के उपस्थित जनो तथा ससार के प्रमुख स्थानों मे हलचल पैदा कर दी। यदि

भाभा का कथन सत्य है तो अभी से वैज्ञानिकों को इस ओर आकर्षित होना चाहिए, ऐसा विचार लोगों के मस्तिष्क में घर कर गया।

होमी जहाँगीर भाभा के उपर्युक्त शब्दों का संसार पर बड़ा प्रभाव पड़ा। हमें भी आशा है कि उनके शब्द सत्य सिद्ध होंगे। अब कई देशों में इस विषय के अनुसन्धान संलग्नता से हो रहे हैं।

तापनाभिक प्रतिक्रिया का नियन्त्रण बड़ा कठिन कार्य है। इस दिशा में ब्रिटेन में अग्रगामी कार्य हुआ है। उन्होंने जीटा[1] नामक एक यन्त्र बनाया। यह नाम अंग्रेज़ी नाम ज़ीरो इनर्जी थर्मोन्यूक्लियर असेम्बली[2] के प्रथमाक्षरों से बना है। जीटा उपकरण में ड्यूटीरियम के परमाणुओं का संगलन करने का प्रयत्न किया गया है। इस संगलन द्वारा हीलियम का निर्माण होना चाहिए। ड्यूटीरियम संगलन के सर्वप्रथम प्रयोग १९३४ में रदरफोर्ड और ऑलीफेंट ने केम्ब्रिज विश्वविद्यालय में किये थे। उन्होंने त्वरित ड्यूटीरियम कणों के दण्ड द्वारा स्थिर ड्यूटीरियम कणों पर आक्रमण किया था। उससे दोनों नाभिकों का संगलन हो हीलियम बनती थी। इन प्रयोगों का सम्यक् रीति से निरीक्षण करने से ज्ञात हुआ कि संगलन क्रिया द्वारा हीलियम–४ का निर्माण नहीं होता। यदि क्षणिक काल के लिए यह नाभिक बने तो इसमें इतनी अधिक ऊर्जा रहती है कि इसमें एक न्यूट्रान वाष्पित हो जाता है। रदरफोर्ड ने देखा कि संगलन क्रिया द्वारा अधिकतर हीलियम–३ बनता है और एक न्यूट्रान तीव्र गति से बाहर चला जाता है। कभी-कभी ऐसा भी सम्भव हो सकता है कि संगलन क्रिया द्वारा ट्राइटियम–३ बने और एक प्रोटान बाहर निकल जाय।

जीटा तापनाभिक संघटन में यही क्रिया उच्च ताप द्वारा की जाती है। जैसा हम देख चुके हैं कि संगलन क्रिया के लिए उच्च ताप नितान्त आवश्यक है। यह दस करोड़ (१०^{८}) डिग्री सेण्टीग्रेड के लगभग हो सकता है। इतने

1. Zeta 2. Zero Energy Thermonuclear Assembly

उच्च ताप की गैस को किस बर्तन मे रखेंगे? पाँच सहस्र डिग्री के आसपास सभी वस्तुएँ वाष्प मे परिवर्तित होने लगती है। दस सहस्र डिग्री पर अणु खण्डित होकर परमाणु बन जाते है और एक लाख डिग्री (१०^{५}) अंश पर परमाणु अपने इलेक्ट्रानो का क्षय प्रारम्भ कर देते है।

ज़ीटा निर्माण करने मे पहली समस्या ऊष्मा गैस का पात्र बनाने की थी। सामान्य द्रव्य से बनी कोई वस्तु इस कार्य के लिए सक्षम न हो सकती थी। इस कारण एक विलक्षण बर्तन का निर्माण हुआ जो केवल चुम्बक क्षेत्र का बना था। इसके पश्चात् उच्च ताप की समस्या सामने आयी। यह ताप हम लकडी, कोयला आदि जैसे किसी सामान्य ईंधन से नही उत्पन्न कर सकते थे। अत इसके लिए विद्युत् विसर्जन ऊर्जा का सफल प्रयोग हुआ।

प्रकृति ने भी इन प्रयोगो मे सहायता की। कुछ वर्षो से ज्ञात है कि ड्यूटीरियम द्वारा विद्युत्-विसर्जन करने पर चुम्बक बल उत्पन्न होता है, जो गैस के अणुओ को एक साथ इकट्ठा करके रखता है। इस प्रक्रम को पिंच प्रभाव[1] कहते है। इस प्रभाव के कारण गैस कण बाहर की ओर नही जाने पाते। यदि कोई कण नलिका-बर्तन की दीवार की ओर जाने का प्रयत्न करते है तो उन्हे धक्का देकर फिर मध्य की ओर भेज दिया जाता है। ज्यो-ज्यो विद्युत्-विसर्जन द्वारा विद्युत्धारा की मात्रा बढ़ती है त्यो-त्यो चुम्बक बल भी बढ़ता है और कणो को अधिक वेगपूर्वक नियन्त्रण मे रखता है। इस नियन्त्रण के प्रभाव से कण दब जाते है और नलिका के मध्य छोटे दायरे मे बन्द रहते है। उन पर नियन्त्रण उसी प्रकार रहता है जैसे रबर के धागे को खीचने पर वह दब कर सीधा हो जाता है। इसको हम चुम्बक बोतल भी कह सकते है।

परन्तु इस विद्युत्-विसर्जन द्वारा उत्पन्न क्षेत्र मे कुछ कमियाँ रह जाती है। विसर्जन सर्वदा सीधा नही रहता। वह अपने मार्ग से विचलित हो

1. Pinch effect

पचास लाख (५×१०⁶) डिग्री का ताप अवश्य पहुँचता है। इस ताप पर ड्यूटीरियम सगलन क्रिया की उत्पत्ति स्पष्ट रूप से होती है क्योकि विद्युत्-विसर्जन द्वारा अत्यधिक मात्रा मे न्यूट्रान देखे गये हैं। इनकी उपस्थिति संगलन क्रिया की पुष्टि करती है।

पाठक यह सन्देह कर सकते है कि सम्भव है तापनाभिक सगलन क्रिया के लिए आवश्यक उच्च ताप लक्ष्य तक न पहुँचा हो और उत्पन्न न्यूट्रान केवल तत्वान्तरण द्वारा उत्पन्न हुए हो जैसा कि रदरफोर्ड एव ओलीफट ने १९३४ मे अपने प्रयोगो द्वारा उत्पन्न किये थे। उनके प्रयोगो मे भी ड्यूटीरियम के सगलन से न्यूट्रान उत्पन्न हुए थे, परन्तु वेगवान न्यूट्रानो के आक्रमण से उत्पन्न हुए थे। कदाचित् यहाँ पर भी न्यूट्रान गतिज ऊर्जा द्वारा प्रतिक्रिया करने लगे हो। यदि यह सत्य हुआ तो तापनाभिक क्रिया असफल मानी जायगी।

इसके विपरीत जीटा मे यह देखा गया कि यदि विसर्जन मे विद्युत् धारा की मात्रा बढायी जाय तो न्यूट्रानो की मात्रा शीघ्र बढती है। इससे तापनाभिक क्रिया की पुष्टि ही होती है। इस क्रिया की एक और पुष्टि हुई है। बाह्य उपकरणो द्वारा नलिका के अन्दर का ताप नापा गया है। उससे ज्ञात हुआ है कि नलिका के अन्दर गैस का ताप कम से कम पचास लाख (५×१०⁶) डिग्री सेण्टीग्रेड है।

तापनाभिक क्रिया का नियन्त्रण सम्भव है। लोगो को यह विश्वास होने लगा है कि एक दिन यह ऊर्जा मानव जाति के शान्तिपूर्ण उपयोग में आ सकेगी।

सोवियत सघ मे सगलन क्रिया पर कई वर्षो से कार्य हो रहा है। इस कार्य की सर्वप्रथम झलक रूसी वैज्ञानिक कुरशेटोव[1] ने १९५६ मे ब्रिटेन की परमाणु अनुसन्धानशाला हारवेल मे दिये अपने एक व्याख्यान मे दी

1. Kurchatov

सकता है। यदि ऐसा होगा तो गैस नलिका के मध्य मे न रहकर दीवार पर आ सकती है और इस प्रकार ऊष्मा का क्षय हो सकता है। विद्युत्-विसर्जन को स्थिर बनाने के लिए अनेक प्रयोग किये गये हैं। इस कार्य के लिए चुम्बक क्षेत्र का उपयोग किया गया है। ऊपर से दिया हुआ चुम्बक क्षेत्र विद्युत्-विसर्जन को स्थिर करने की क्षमता रखता है। 'जीटा' ससार मे प्रथम यन्त्र था जिसमे इस विधि के उपयोग से दिखाया गया कि विद्युत्-विसर्जन को एक दिशा मे स्थिर करना सम्भव है।

जीटा मे एक विसर्ग नली का प्रयोग किया गया। इस नलिका मे ड्यूटीरियम भरी गयी। इसमे क्षणिक विसर्जन उत्पन्न करने का प्रबन्ध भी किया गया जिससे उच्च डिग्री का ताप (क्षणिक समय के लिए) उत्पन्न हो सके। साथ मे एक सहायक चुम्बक क्षेत्र लगाया गया जो विसर्जन को स्थिर दिशा में रखे और ड्यूटीरियम गैस को नलिका के मध्य में दबाकर नियन्त्रित रखने मे सहायक हो। सामान्य द्रव्य के विद्युदग्र यहाँ बेकार थे क्योंकि वह इतना उच्च ताप सहन न कर सकते। विसर्जन उत्पन्न करने के लिए कोई असाधारण उपाय ही कार्य कर सकता था। इसमें विसर्ग नलिका को अनन्त रखा गया। उसका आकार डमरू (∞) की भाँति था। इस नलिका को विद्युत् ट्रान्सफार्मर के मध्य में एक अन्य ताम्र नलिका के साथ रखा गया। ट्रान्सफार्मर द्वारा इन दोनो नलिकाओ के मध्य मे विद्युत्-सम्बन्ध करने पर नलिका मे विसर्जन उत्पन्न होता है। उच्च ताप उत्पन्न करने के लिए वेगवान विसर्जन होना चाहिए। विसर्जन के लिए बलवती विद्युत्-धारा की आवश्यकता है। विद्युत्-ऊर्जा को एक संघनक मे जमा करते हैं। तत्पश्चात् क्षणिक काल मे सारी ऊर्जा को विसर्जन क्रिया द्वारा बहिर्गत करते हैं। इस प्रकार थोडे समय के लिए इतना वेगवान विसर्जन उत्पन्न होता है कि अत्यधिक उच्च ताप उत्पन्न हो जाता है। नलिका अचुम्बकीय धातु की बनायी गयी है। इसमें अल्यूमिनियम का प्रयोग हुआ है।

जीटा द्वारा बहुत-से आवश्यक अनुसन्धान हुए हैं जिनसे भविष्य मे नियन्त्रित सगलन यन्त्र बनाने में बडी सहायता मिलेगी। इस उपकरण मे

पचास लाख (५×१०^६) डिग्री का ताप अवश्य पहुँचता है। इस ताप पर ड्यूटीरियम संगलन क्रिया की उत्पत्ति स्पष्ट रूप से होती है क्योंकि विद्युत्-विसर्जन द्वारा अत्यधिक मात्रा मे न्यूट्रान देखे गये है। इनकी उपस्थिति सगलन क्रिया की पुष्टि करती है।

पाठक यह सन्देह कर सकते है कि सम्भव है तापनाभिक सगलन क्रिया के लिए आवश्यक उच्च ताप लक्ष्य तक न पहुँचा हो और उत्पन्न न्यूट्रान केवल तत्वान्तरण द्वारा उत्पन्न हुए हो जैसा कि रदरफोर्ड एव ओलीफट ने १९३४ मे अपने प्रयोगो द्वारा उत्पन्न किये थे। उनके प्रयोगो मे भी ड्यूटीरियम के सगलन से न्यूट्रान उत्पन्न हुए थे, परन्तु वेगवान न्यूट्रानो के आक्रमण से उत्पन्न हुए थे। कदाचित् यहाँ पर भी न्यूट्रान गतिज ऊर्जा द्वारा प्रतिक्रिया करने लगे हो। यदि यह सत्य हुआ तो तापनाभिक क्रिया असफल मानी जायगी।

इसके विपरीत जीटा मे यह देखा गया कि यदि विसर्जन मे विद्युत् धारा की मात्रा बढायी जाय तो न्यूट्रानो की मात्रा शीघ्र बढती है। इससे तापनाभिक क्रिया की पुष्टि ही होती है। इस क्रिया की एक और पुष्टि हुई है। बाह्य उपकरणो द्वारा नलिका के अन्दर का ताप नापा गया है। उससे ज्ञात हुआ है कि नलिका के अन्दर गैस का ताप कम से कम पचास लाख (५×१०^६) डिग्री सेण्टीग्रेड है।

तापनाभिक क्रिया का नियन्त्रण सम्भव है। लोगो को यह विश्वास होने लगा है कि एक दिन यह ऊर्जा मानव जाति के शान्तिपूर्ण उपयोग मे आ सकेगी।

सोवियत सघ मे सगलन क्रिया पर कई वर्षो से कार्य हो रहा है। इस कार्य की सर्वप्रथम झलक रूसी वैज्ञानिक कुरशेटोव[1] ने १९५६ मे ब्रिटेन की परमाणु अनुसन्धानशाला हारवेल मे दिये अपने एक व्याख्यान मे दी

1. Kurchatov

थी। सोवियत संघ की मास्को, लेनिनग्राद, खारकोव, सुक्कुमी और नोरोसीवीरिस्क की अनुसन्धानशालाओं में इस ओर कार्य हो रहा है। जीटा के रूप का एक उपकरण 'अल्फा' सोवियत संघ मे बना है जिसके द्वारा पिंच प्रभाव पर अनुसन्धान हो रहा है। ओग्रा[1] नामक उपकरण मास्को में कार्य कर रहा है।

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका मे कई स्थानों पर संगलन क्रिया विषयक कार्य हो रहा है। प्रिंसटन विश्वविद्यालय मे स्टैलेरेटर[2] नामक उपकरण बनाया गया है। इसमें 8 के रूप की नलिका ली गयी है जिसमें गैस का विद्युत्-विसर्जन करते हैं। लास एलेमास की अनुसन्धानशाला में पिंच प्रयोगों पर उपयोगी कार्य हुआ है और एक नये उपकरण स्कैला का निर्माण हुआ है। इसमें अनुमानतः एक करोड़ (१०⁷) डिग्री सेण्टीग्रेड का ताप उत्पादित हो सका है। लिवरमोर की अनुसन्धानशाला में पायरोट्रान[3] तथा ओकरिज राष्ट्रीय अनुसन्धानशाला मे डीसी एक्स[4] नामक उपकरण तैयार किये गये है।

अमेरिका के कुछ उपकरणों में खुले सिरे वाली नलिका का प्रयोग हो रहा है। इनमें दोनो ओर दर्पण लगे हैं जिनके द्वारा प्लाज्मा[5] कण वापस हो जाते है। घनावेश युक्त आयन और इलेक्ट्रान के माध्यम को प्लाज्मा कहते हैं। यह गैस विद्युत्-विसर्जन द्वारा उत्पन्न होती है और विद्युत् की सुचालक होती है। एस्ट्रान उपकरण मे तीव्र इलेक्ट्रान द्वारा उत्पन्न चुम्बक क्षेत्र से प्लाज्मा को नियन्त्रित करते हैं। यह उपकरण केलीफोर्निया विश्वविद्यालय की विकिरण प्रयोगशाला में सरल पिंच विधि पर कार्य कर रहा है।

1. Ogra
2. Stellarator
3. Pyrotron
4. DCX
5. Plasma

इसके अतिरिक्त कुछ अन्य देशों में सगलन क्रिया पर महत्वपूर्ण अनुसन्धान हो रहे हैं। स्वीडन के उपसाला नगर की काई सिग्बाहान[1] प्रयोगशाला मे ज़ीटा की भाँति टॉरायडल पिंच[2] पर कार्य हो रहा है। जापान मे अक्षीय चुम्बक विधि द्वारा कार्य करने की योजना बनी है। यह सामान्य पिंच विधि से भिन्न है। जर्मनी के म्यूनिख, स्तुतगार्ट और आचन मे सरल पिंच[3] पर प्रयोग किये गये है। गार्टिगन विश्वविद्यालय में ज़ीटा की भाँति टोरायडल पिंच विधि पर भी कार्य हुआ है। जर्मनी के वैज्ञानिको ने विस्तृत सैद्धान्तिक कार्य किया है जिसके द्वारा प्लाज्मा-भौतिकी की अनेक समस्याओ का समाधान हुआ है। स्विट्जरलैण्ड मे लीथियम आवरण में ट्राइटियम की उत्पत्ति विषय पर कार्य हुआ है। फ्रास और इटली मे भी इस ओर कार्य चल रहा है।

इन कार्यों से हमे आशा है कि शीघ्र ही मनुष्य संगलन ऊर्जा को नियन्त्रित कर सकेगा। एक गैलन समुद्र जल मे उपस्थित ड्यूटीरियम द्वारा दस सहस्र ($१०^४$) किलोवाट घण्टा विद्युत् निकल सकती है। यदि समुद्र ऊर्जा का स्रोत बन गया तो मनुष्य को समाप्त होने वाले ईंधनों की फिर चिन्ता न करनी पड़ेगी। सगलन प्रतिकारी मे परमाणु प्रतिकारी के विपरीत वे खण्डन पदार्थ जो हानिकारक विकिरण उत्पन्न कर सके, नही बचेंगे।

1. Kai Saigbahan
2. Toroidal pinch
3. Linear pinch

अध्याय १७

परमाणु व ताप-नाभिकीय बम

परमाणु बम का सर्वप्रथम विस्फोट १६ जुलाई, १९४५ में अमेरिका के न्यूमेक्सिको राज्य में एलेमोगोर्डो[1] नामक स्थान मे हुआ था। द्वितीय विस्फोट जापान के हिरोशिमा नगर तथा तीसरा जापान के नागासाकी नगर में किया गया था। हिरोशिमा वाला बम ६ अगस्त, १९४५ के प्रात.काल उस नगर पर गिरा। आज की तुलना मे यह अत्यत छोटा बम था। परन्तु इस बम ने उस नगर की क्या दशा की इसको देखा जाय।

हिरोशिमा नगर मे पिछत्तर सहस्र (७५,०००) घर थे। इनमें सात सहस्र (७,०००) तो पूर्णतया धराशायी हुए और पचपन सहस्र (५५,-०००) अग्नि द्वारा भस्म हो गये। बचे मकानो में से नब्बे प्रतिशत को अधिक क्षति पहुँची। इस बम के विस्फोट द्वारा अठहत्तर सहस्र (७८,०००) मनुष्य मरे, चौदह सहस्र (१४,०००) का कुछ पता न चला। सैंतीस सहस्र (३७,०००) घायल हुए और दो लाख छत्तीस सहस्र (२,३६,०००) मनुष्यों पर अन्य विकिरण आदि के प्रभाव पड़े। इस बम द्वारा इतनी ऊर्जा का उदय हुआ जो बीस सहस्र (२०,०००) टन सामान्य विस्फोटक टी०एन० टी० (TNT) के द्वारा निकलती। द्वितीय महायुद्ध मे लगभग पचास लाख टी. एन. टी. के बराबर विस्फोट हुए थे। इस प्रकार हिरोशिमा अणु बम द्वारा इस ऊर्जा का $\frac{१}{२५०}$वां भाग उदय हुआ। परन्तु आगे होने वाले ताप

1. Alamogordo

नाभिक विस्फोटो मे छोडे गये एक बम से एक करोड पचास लाख (1.5×10^7) टन टी० एन० टी० के समान विस्फोट हुआ। केवल इस एक बम द्वारा द्वितीय महायुद्ध मे प्रयोजित विस्फोटो से तिगुना विस्फोट हुआ। इस प्रकार युद्धार्थ उपयोगो मे परमाणु ऊर्जा की पर्याप्त उन्नति हो चुकी है।

ऐसा अनुमान है कि अभी तक विभिन्न देशो द्वारा किये गये नाभिक विस्फोटो का योग २०० है जिसमे तीस से ऊपर ताप-नाभिकीय विस्फोट थे। परमाणु की दौड मे रूस अमेरिका से पीछे था। वहाँ प्रथम परमाणु विस्फोट अगस्त, १४४९ मे हुआ था। उसी समय से अमेरिका ने ताप नाभिकीय बम पर कार्य प्रारम्भ किया और प्रथम अमेरिकन ताप-नाभिक विस्फोट नवम्बर, १९५२ मे किया गया। रूस मे सर्वप्रथम ताप नाभिकीय विस्फोट अगस्त, १९५३ मे किया गया। तत्पश्चात् इस होड मे अनेक बमो की परीक्षा की गयी।

ब्रिटेन ने प्रथम परमाणु विस्फोट अक्टूबर, १९५२ मे किया और मई, १९५७ मे तापनाभिकीय बम की प्रथम परीक्षा की।

अब फ्रास भी परमाणु क्लब का सदस्य हो गया है। १९६० के प्रारम्भ मे फ्रास द्वारा सहारा रेगिस्तान मे प्रथम परमाणु विस्फोट किया गया।

इस समय तक विस्फोटो के लिए दो प्रकार की परमाणु ऊर्जा [illegible] उपयोग किया गया है। पहले प्रकार के बमो के निर्माण मे [illegible] की ऊर्जा का उपयोग होता है। इन्हे सामान्यत. परमाणु [illegible] दूसरी श्रेणी के बमो मे खण्डन एव सगलन दोनो [illegible] है। ऐसे बमो को सामान्यत हाइड्रोजन बम [illegible] भी कहते है।

क्रिया प्रारम्भ करने की क्षमता रखते हैं। वे एक क्षण में ही सारा ईंधन खण्डित कर ऊर्जा स्वतत्र कर सकते हैं। इस क्रिया का कुछ अनुमान पाठकों को पहले अध्यायो द्वारा हो गया होगा।

पिछले अध्याय मे देखा जा चुका है कि संगलन क्रिया से ऊर्जा उत्पन्न हो सकती है। हाइड्रोजन के परमाणुओं-जैसे हल्के तत्त्व उच्च ताप पर संगलित होकर ऊर्जा उत्पन्न करने की क्षमता रखते हैं। इस क्रिया मे ड्यूटीरियम, ट्राइटियम आदि उपयोगी होते हैं।

लोगो का अनुमान था कि १९५२ तथा उसके पश्चात् अमेरिका द्वारा प्रशात महासागर मे किये गये नाभिक विस्फोट हाइड्रोजन बम थे जिनमें संगलन क्रिया द्वारा ऊर्जा स्वतत्र हुई। ऐसे ही रूस द्वारा १९५३ के पश्चात् प्रयुक्त बमो मे भी ऊर्जा स्वतत्र होती थी। ऐसे बमो को सामान्यतः हाइड्रोजन बम अथवा तापनाभिक बम कहा जाता है। बम परीक्षा करने वाले राष्ट्रो ने इस पर कोई प्रकाश नही डाला। परन्तु अन्य स्रोतो से तथा विस्फोटन धूल की परीक्षाओं से अब हमे ज्ञात है कि इनकी ऊर्जा का मुख्य स्रोत सगलन क्रिया न होकर खण्डन क्रिया ही है। प्रथम परमाणु बमों और इन बमो मे यह अन्तर है कि इनकी अधिकतर ऊर्जा यूरेनियम-२३८ के खण्डन से आती है। इसी कारण इनसे उत्पन्न रेडियधर्मी धूल यद्यपि परमाणु बमो की भाँति ही होती है, पर उसकी मात्रा उनसे कही अधिक होती है। मार्च, १९५४ के बाइकिनी द्वीप पर किये गये अमेरिकन बमो के विस्फोट से ९० मील दूर पर जापानी नाविक रेडियधर्मी धूल के शिकार हुए थे। यदि यह बम सगलन बम होता तो उससे उत्पन्न रेडियधर्मी धूल अत्यन्त न्यून होती। जापानी नाविको पर गिरी रेडियधर्मी धूल की परीक्षा करने पर उसमें यूरेनियम-२३७ के परमाणु मिले। यह समस्थानिक प्रकृति मे नही पाये जाते, परन्तु यूरेनियम-२३८ पर एक करोड़ ($१०^७$) इवो० ऊर्जाशील न्यूट्रान के आक्रमण से बनते हैं।

प्राकृतिक यूरेनियम में २३५ समस्थानिक कम मात्रा में रहता है और बड़ी कठिन क्रिया द्वारा २३८ समस्थानिक से अलग किया जाता है।

तत्पश्चात् बचे यूरेनियम -२३८ का कुछ उपयोग नही होता। इस कारण यह अत्यत प्रचुर मात्रा मे तथा सस्ते मूल्य पर उपलब्ध है। विस्फोट मे इसका उपयोग वहुत सस्ता पडना चाहिए।

यूरेनियम-२३८ के गुणो और २३५ समस्थानिक के गुणो मे वहुत अन्तर है। यूरेनियम-२३५ खण्डन सामान्य न्यूट्रानो से होता है। इसके विपरीत २३८ समस्थानिक के खण्डन के लिए अति तीव्र अथवा ऊर्जाशील न्यूट्रान चाहिए। इतनी उच्च ऊर्जा वाले न्यूट्रान परमाणु बम से नही मिल सकते। यदि किसी प्रकार इनका खण्डन प्रारम्भ भी किया जाय तो उसे आगे बढाना असभव होगा। यूरेनियम-२३८ की खण्डन-क्रिया को स्थिर करने के लिए पचास लाख (५×१०^{६}) इवो० ऊर्जाशील न्यूट्रानो की निरन्तर पूर्ति करनी होगी। ऐसे न्यूट्रान केवल सगलन क्रिया द्वारा ही प्राप्त हो सकते है। सगलन क्रिया स्वय प्रारम्भ नही होती। उसके लिए उच्च ताप की आवश्यकता होती है।

इसलिए यूरेनियम-२३८ की खण्डन-क्रिया को सफल बनाने के लिए हमे तीन दशा वाले प्रक्रम की आवश्यकता है। प्रथम दशा मे सामान्य खण्डन-क्रिया होगी। (यूरेनियम-२३५ अथवा प्लूटोनियम-२३९ द्वारा)। इस क्रिया से उच्च ताप उत्पन्न होगा जो सगलन-क्रिया प्रारम्भ करेगा। इस कारण दूसरी दशा में ड्यूटीरियम-ट्राइटियम या ड्यूटीरियम-ड्यूटीरियम सगलन क्रिया होगी। इस क्रिया से अत्यन्त तीव्र न्यूट्रान स्वतन्त्र होगे। ये तीव्र न्यूट्रान यूरेनियम-२३८ का खण्डन कर सकेंगे जो तीसरी दशा होगी। इसे हम निम्न प्रकार लिख सकते है।

प्रथम दशा— स्वचालित खण्डन
| — (यूरेनियम अथवा प्लूटोनियम)
↓ — २३५ २३९
द्वितीय दशा— ड्यूटीरियम-ड्यूटीरियम अथवा ड्यूटीरियम-
↓ — ट्राइटियम संगलन।
तृतीय दशा— यूरेनियम-२३८ खण्डन।

ऐसा अनुमान है कि इस प्रकार के बम में लगभग अस्सी प्रतिशत से अधिक ऊर्जा तीसरी दशा (यूरेनियम-२३८ खण्डन) में निकलती है। अनजाने में लोग इसे ही हाइड्रोजन बम कहते हैं।

यदि ऐसा बम बनाया जाय जिसमें लगभग सारी ऊर्जा संगलन क्रिया से प्राप्त हो तो उसके लिए समुचित मात्रा में ड्यूटीरियम-ट्राइटियम का उपयोग करना पड़ेगा। यह यूरेनियम-२३८ बम से महँगा पड़ेगा। परन्तु इसमें उसकी अपेक्षा न्यूनतम रेडियधर्मी धूल उत्पन्न होगी। ऐसा अनुमान है कि १९५६ से अमेरिका ने ऐसे बमों की भी परीक्षा की है।

परमाणु-विस्फोट के रूप

परमाणु बम का विस्फोट चार प्रकार से हो सकता है, इस कारण इसके चार रूप सम्भव हैं।

१—पृथ्वी से काफी ऊपर विस्फोट,

२—पृथ्वी की सतह पर विस्फोट;

३—जल के अन्दर विस्फोट;

४—पृथ्वी के अन्दर विस्फोट,

पृथ्वी के ऊपर के वायुमण्डल में यदि बम का विस्फोट किया जाय तो सर्वप्रथम एक विशाल अग्नि-गोला दिखाई देगा। इसके अन्दर का ताप संभवतः एक करोड़ अंश सेन्टीग्रेड से अधिक और दाब कई लाख वायुमण्डल के बराबर होगा। बम के चारों ओर की वायु दहकने लगेगी और इसका प्रकाश लगभग १०० किलोमीटर तक देखा जा सकेगा। अग्निगोले का आकार तीव्रता से बढ़ेगा और वह ऊपर की ओर उठेगा। लगभग १५ किलोमीटर उठने के पश्चात् इसका आकार कुकुरमुत्ता (मशरूम) जैसा हो जायगा जिसपर चपटे बादल जिनका व्यास कई किलोमीटर हो सकता है, छा जायेंगे। यह कुछ समय तक रहेगा तत्पश्चात् हवा के झोंके इसे उड़ा ले जायेंगे।

अग्नि-गोले की चमक लगभग तीन सेकेंड में समाप्त हो जायेगी, परन्तु इस के साथ इतनी ऊष्मा रहेगी कि लगभग दो या तीन किलोमीटर व्यास

तक आधे से अधिक मनुष्यों की तत्काल मृत्यु हो जायगी। विस्फोट के ठीक नीचे की पृथ्वी का ताप तीन सहस्र (३,०००) डिग्री तक पहुँच जायगा। इसकी चमक द्वारा पास खडे लोगो की आँखो की पुतली जल जायगी। यदि कोई मनुष्य विस्फोट से लगभग १५ या २० किलोमीटर खडा होकर इस *ओर देखेगा तो उसकी चमक से एक मिनट के लिए वह अन्धा हो जायगा।*

अग्निगोले की उत्पत्ति के साथ ही विस्फोट के मध्य मे आघात तरग उत्पन्न होगी। इस तरग की गति, ध्वनि की गति से अधिक होगी और यह शीघ्रता से अग्निगोले को पार कर चारो ओर हलचल पैदा करेगी। यदि मनुष्य का कान विस्फोट की ओर होगा तो उसके पर्दे के फटने की सभावना रहेगी। इसके वेग से बहुत दूर तक सारी इमारते गिर जायेंगी। मनुष्य को इनके गिरने से अधिक हानि होने की सभावना है।

परमाणु-विस्फोट से अनेक प्रकार के विकिरण निकलते है। न्यूट्रान और गामा-विकिरण सबसे अधिक मात्रा मे निकलते हैं। ऊष्मा के कारण प्रकाश और पार-बैंगनी विकिरण भी निकलते हैं। विस्फोट होने के पश्चात् उस स्थान के आसपास बीटा तथा गामा-विकिरण निकलते रहेगे। यह विकिरण खण्डन-क्रिया द्वारा उत्पन्न खण्ड से निकलते हैं। कुछ बचे यूरेनियम से अल्फा-कण भी निकलेंगे।

यदि बम का विस्फोटन भूमि या उससे १०० मीटर ऊँचाई तक किया *जाय तो उसे भूमि-विस्फोट कहेगे। इसमे अग्नि-गोले का समुचित भाग* भूमि से स्पर्श करेगा जिसके कारण वहाँ बड़ा गड्ढा खुद जायगा और मिट्टी धूल आदि अग्नि-गोले के साथ मिल जायेंगी। इस विस्फोट में धूल आदि के कारण ऊष्मा और चमक के प्रभाव कम दूरी तक जायेंगे। धूल या पत्थरों के भारी कण विस्फोट-स्थान पर कुछ समय बाद जमा हो जायेंगे जिसे स्थानीय अवपतन या 'लोकल फालआउट' कहते है। अन्यथा इस विस्फोट का बाह्य रूप प्रथम श्रेणी के समान ही होगा।

समुद्र मे जलके भीतर अनेक परीक्षा-विस्फोट किये गये है। इनमे सर्वप्रथम जल मे एक विशाल चमकदार बुलबुला उठता है। यह जल के

शीघ्र वाष्पीकरण द्वारा बनता है और जल की सतह को चीरता हुआ ऊपर उठ जाता है। इस क्रिया के साथ जल की विशाल मात्रा ऊपर उठती है। यह जल एक कुकुरमुत्ते के रूप मे बाहर आता है जिसके नीचे जल का खोखला बेलन लगा रहता है। शीघ्र ही यह दो किलोमीटर से अधिक ऊंचाई तक उठ जाता है। कुकुरमुत्ते के ऊपरी भाग का व्यास २ किलोमीटर से अधिक हो सकता है और बेलन का व्यास लगभग ६०० मीटर रहेगा। मशरूम के नीचे से जल के सूक्ष्म कण ऊपर उठकर पांच वर्गमील के क्षेत्रफल तक वर्षा करते हैं। जल में ३० मीटर ऊंची तरंगें उत्पन्न हो सकती है जिनके कारण जहाजो को भय रहता है। लगभग एक किलोमीटर की दूरी तक के जहाज उलट जायेंगे और दूर के जहाजों को हानि पहुंचेगी।

भूमि के अन्दर विस्फोट होने से लगभग ८०० मीटर व्यास का गड्ढा बन जायगा जिसकी गहराई १०० मीटर से अधिक होगी। अन्दर की मिट्टी मे काफी हलचल होगी यद्यपि इसका प्रभाव बाहर बहुत कम होगा।

कथित तापनाभिक विस्फोटों द्वारा भी इसी प्रकार की क्रियाएं होंगी। अन्तर इतना है कि उनका वेग परमाणु बम से कहीं अधिक होगा।

विभिन्न परमाणु अस्त्रों के साथ एक और नयी समस्या जुड़ी है जो अन्य विस्फोटों के साथ नही रहती। इसे फालआउट[1] कहते हैं। परमाणु-विस्फोट बड़ी मात्रा में रेडियधर्मी तत्त्व उत्पन्न करता है। ये तत्त्व अग्नि-गोले के साथ ऊपर उठकर वायुमण्डल की ऊपरी तह तक पहुंच सकते हैं। वहाँ वायु के वेग के साथ वे बड़ी दूर तक यात्रा कर कही दूसरे स्थान पर नीचे जमा हो सकते हैं। विस्फोट से उत्पन्न न्यूट्रान और गामा विकिरण द्वारा अन्य स्थिर पदार्थों के कणों का रेडियधर्मी हो जाना संभव है। इन पदार्थों के कण भी वायुमण्डल में मिलकर सुदूर पहुँचेंगे। इस प्रकार विस्फोट में खण्डन द्वारा उत्पन्न रेडियधर्मिता समीप के स्थानों पर

1. Fallout

तो रहेगी ही, साथ ही साथ वह संसार के दूसरे कोनो पर भी पहुंच सकती है।

फालआउट दो श्रेणी के माने जाते है, स्थानीय फालआउट और विश्व फालआउट :

स्थानीय फालआउट उन कणो द्वारा होता है जो विस्फोट के साथ ऊपर उठते है, परन्तु वायु-मण्डल के निचले भाग[1] तक सीमित रहते है। ये कण विस्फोट होने के पश्चात् धीरे-धीरे (कुछ घटो से कुछ हफ्तो तक के काल मे) नीचे आ जाते है। इस श्रेणी के फालआउट की अधिकाश मात्रा विस्फोट स्थान के पास ही सीमित रहती है यद्यपि कभी-कभी ये कण कई सौ मील तक भी यात्रा कर सकते हैं।

विश्व फालआउट उन कणो द्वारा होता है जो विस्फोट के वेग के कारण वायुमण्डल के ऊपरी भाग (समतापमण्डल)[2] मे पहुंच जाते है। वहाँ पहुँचने के पश्चात् ये कण बहुत काल तक (५–१० वर्ष तक) नीचे नही आते। इस काल मे वे अनुप्रस्थ गति से विश्व के हर कोने पर छा सकते है। तत्पश्चात् धीरे-धीरे वे वायुमण्डल के निचले भाग मे आते है। इस भाग मे पहुँचने के पश्चात् वे कुछ ही हफ्तो के काल मे भूमि पर गिर सकते है। इससे यह ज्ञात होता है कि विश्व फालआउट बहुत काल के पश्चात् प्रकट होता है और संसार के हर भाग मे इसके पहुँचने की सम्भावना रहती है।

फालआउट मे अनेक तत्त्वों के रेडियधर्मी समस्थानिक उपस्थित रहते है जिनके द्वारा बीटा-कण एवं गामा-विकिरण स्वतन्त्र हो सकते हैं। इनमें सबसे भयकर स्ट्राशियम-९० समस्थानिक है जो परमाणु-विस्फोट के साथ सदा उपस्थित रहता है। यह समस्थानिक मृतिका मे सरलता से मिल जाता है। यदि यह थोडी मात्रा में भी भूमि मे मिल जाय तो उस पर उपजे सारे खाद्य पदार्थो, मवेशियो के चारे आदि मे स्ट्राशियम-९० उपस्थित रहेगा।

1. Troposphere 2. Stratosphere

इसकी अर्धजीवन अवधि लगभग बीस वर्ष है, जिस कारण उस भूमि पर निर्भर रहने वाला प्रत्येक प्राणी वर्षों तक रेडियधर्मी विकिरण द्वारा उत्पन्न रोगों से पीड़ित रहेगा। एक बार पीडित होने पर न जाने उसकी कितनी पीढ़ियों को उसका दण्ड भोगना पड़ेगा। इस कारण यह प्रभाव बम-विस्फोट के तत्काल प्रभाव से भी भयंकर रहेगा।

ऊपर बताये प्रभावो का अनुमान एक प्रसिद्ध उदाहरण द्वारा हो सकता है। १ मार्च, १९५४ को प्रशान्त महासागर के बाइकिनी द्वीप समूह पर अमेरिकन सरकार द्वारा ताप-नाभिक परीक्षा-विस्फोट किया गया। इस विस्फोट द्वारा उत्पादित ऊर्जा एक करोड़ पचास लाख (१.५×१०^७) टन टी० एन० टी० के समान थी। इस विस्फोट से पूर्व अमेरिकन सरकार ने टापू के चारो ओर क्षेत्र निर्धारित किया था और चेतावनी दे दी गयी थी कि कोई उस क्षेत्र मे न घुसे। इस प्रयोग द्वारा निकले विकिरणों का कुछ जापानी मछुओं पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। विस्फोट के समय मछुए फुकूरया मारू नामक नाव पर थे जो विस्फोट द्वीप से नब्बे मील उत्तर-पूर्व की ओर थी। यह स्थान अमेरिका द्वारा निर्धारित क्षेत्र के बाहर था। तीन बजकर ४५ मिनट प्रातःकाल के समय जापानियों ने एक लाल चमक देखी जो अंतरिक्ष के परे ज्ञात होती थी। यह ध्यान देने योग्य बात है कि किसी स्थान से ९० मील दूरी पर समुद्र की सतह अन्तरिक्ष से दो सहस्र दो सौ (२,२००) मीटर नीचे होगी। सात मिनट पश्चात् उन्हें एक धमाका भी सुनाई दिया।

लगभग ३ घंटे पश्चात् उस स्थान पर मटीली सफेद धूल आकाश से नीचे गिरने लगी। धूल-वर्षा लगभग ५ घंटे तक होती रही और सारी नाव तथा उसके नाविकों पर छा गयी। कुछ समय पश्चात् नाविकों को मिचलाहट, पेट में गड़बड़ी, आँखों में सूजन आदि की शिकायत होने लगी। दो तीन दिन पश्चात् उनके हाथो और गालों में सूजन आ गयी। इसी दिशा मे वह नाव १४ दिन तक समुद्र यात्रा करने के पश्चात् जापान के यारजू बन्दरगाह पर लौटी।

लौटने के पश्चात् इन नाविकों पर ल्यूकीमिया के लक्षण दिखाई दिये और उनके मेरुदण्डों के कोषों मे कमी आ गयी। कुछ को ज्वर की पीड़ा होने लगी। तीन-चार सप्ताह के काल मे सब नाविकों के बाल उड गये। कुछ काल पश्चात् सब नाविकों की दशा मे सुधार मालूम हुआ। ये मछुए नाव के यात्रा-काल मे नहाते रहे थे तथा नाव को भी धोया गया था। इस कारण हानिकारक प्रभाव मे कमी आ गयी थी। एक को छोडकर अन्य सारे नाविक अभी तक जीवित है। एक नाविक ने नाव पर गिरी कुछ धूलको एक कागज मे बन्द कर अपने तकिये मे रख लिया था। उसी पर वह रोज सोता था। अवश्य ही उस धूल मे निकले विकिरण उसके मस्तिष्क मे कई घटे तक प्रतिदिन प्रभाव डालते रहे होंगे। वही नाविक कुछ दिनो पश्चात् मृत्यु का शिकार हुआ।

बचे हुए नाविकों की दशा बाह्य रूप से इस समय अच्छी है, परन्तु आन्तरिक रूप से उन पर क्या प्रभाव पडा यह अभी ज्ञात नही है।

इसी परीक्षा-विस्फोट से २८ अमेरिकन सैनिक तथा २३९ मार्शल द्वीप निवासी भी अचानक प्रभावित हुए थे। उन मे भी जापानी मछुओ के समान लक्षण प्रकट हो गये थे। परन्तु शीघ्र इलाज होने के कारण उनकी दशा अधिक नही बिगड़ी।

इन दुर्घटनाओ के कारण अमेरिकन सरकार ने विस्फोटों के फालआउट की जांच की जिसकी सूचना १९५५ मे मिली। इसके अनुसार एक बडे तापनाभिकीय बम से सात सहस्र (७,०००) वर्ग मील तक स्थानीय फालआउट का भयानक प्रभाव पडा था। समुद्र मे परीक्षा करने के कारण जल मे रेडियधर्मिता बढ जाती है। मार्च, १९५४ के विस्फोट से बाईकिनी द्वीप के पास के सागर मे रेडियधर्मिता बहुत बढ गयी। विस्फोट के दो दिनों पश्चात् इसकी मात्रा सामान्य मात्रा से (जल तथा वायुमण्डल मे रेडियधर्मिता अत्यंत हलकी मात्रा मे सदा उपस्थित रहती है) दस लाख गुनी बढी दिखाई थी। चार माह पश्चात् भी इस स्थान से १५०० मील दूरी पर सामान्य मात्रा से तिगुनी रेडियधर्मिता पायी गयी। विस्फोट के तेरह

माह पश्चात् दस लाख वर्ग मील क्षेत्रफल तक यह रेडियधर्मिता पहुँच चुकी थी।

यह तो रही स्थानीय फालआउट की बात। एक बड़े तापनाभिक अस्त्र का विस्फोट इतना विशाल होता है कि उसका बडा भाग समतापमण्डल तक पहुँच जाता है। इसमें पहुँचने वाले कण १० वर्ष तक वायुमण्डल के उसी भाग में रहेंगे। तत्पश्चात् वे नीचे उतर कर पृथ्वी की सतह पर पहुँचेंगे। इनका प्रभाव पृथ्वी के सब स्थानों पर पडेगा। वैज्ञानिकों का विचार है कि इनका अधिकांश प्रभाव विषुवती रेखा के दोनों ओरमध्य अक्षांश रेखाओं के भाग पर पडेगा। विषुवती रेखा के भाग पर कम प्रभाव होगा। इस प्रकार अब तक हुए इतने बम विस्फोटो के कारण फालआउट की मात्रा बढ़ती जा रही है। भविष्य मे मानवता पर इसके क्या हानिकारक प्रभाव होंगे इसका अनुमान करना इस समय कठिन है।

इस समय यह तो ज्ञात है कि रेडियधर्मी विकिरणों का जीवो पर हानिकारक प्रभाव होता है। यह समझ लेना कि कम मात्रा मे ये विकिरण हानिकारक नही होते, भ्रमपूर्ण है। मनुष्य चाहे जितनी कम मात्रा में विकिरण का शिकार हो उससे हानि उसे अवश्य होगी। कम मात्रा के विकिरण का प्रभाव उसी समय ज्ञात नही होता, परन्तु धीरे-धीरे सचयागत रूप में उसका प्रभाव अवश्य पडता है। यदि कोई कार्यकर्ता विकिरण-प्रयोगों में लगा हो और बचाव की सारी सावधानी लेता हो, फिर भी विकिरण थोड़ी मात्रा मे अवश्य उस पर प्रभाव डालते रहेंगे। अमेरिका में १९३०-५४ के मध्य में चिकित्सको के देहान्त कालो को देखने से ज्ञात हुआ है कि जो चिकित्सक एक्स-रे या अन्य विकिरणो से चिकित्सा-कार्य करते थे उनका औसत जीवनकाल ६०.५ वर्ष था तथा जो चिकित्सक विकिरणों से कार्य नही करते थे उनका औसत जीवन-काल ६५.७ वर्ष था। रेडिय-चिकित्सा से कार्य करने वाले की जीवन-अवधि ११ प्रतिशत कम थी।

इस स्थान पर एक घातक रोग ल्यूकीमिया पर भी विचार करना आवश्यक है। इसे 'रक्त कैंसर' भी कहते हैं। रेडिय-विकिरणो के कारण इस

रोग की प्रायिकता अधिक हो गयी है। परमाणु अस्त्रों के विस्फोटों के कारण न जाने कितने व्यक्तियों की इस रोग द्वारा भविष्य मे मृत्यु होगी।

इन्ही विचारों से उत्प्रेरित होकर ऐसे परमाणु बम बनाने का प्रयत्न हो रहा है जो रेडियधर्मी-विकिरण-रहित हो। ऐसे बम को हम स्वच्छ बम[1] भी कह सकते है। ऐसे बम के विस्फोट द्वारा उदित अधिकाश ऊर्जा सगलन क्रिया द्वारा उत्पन्न होगी। अमेरिका द्वारा ऐसे बम बनाने का दावा किया गया है जिनमे ९६ प्रतिशत ऊर्जा सगलन-क्रिया द्वारा और ४ प्रतिशत ऊर्जा खण्डन-क्रिया द्वारा उत्पन्न होगी। सगलन-क्रिया प्रारम्भ करने के हेतु खण्डन-क्रिया का उपयोग किया गया है। ऐसे बम के विस्फोट से न्यूनतम मात्रा मे फ़ालआउट होगा। परन्तु न्यूट्रान उत्पन्न होने से उत्प्रेरित रेडियधर्मिता की उत्पत्ति हो सकती है। फिर भी यह बम इस समय तक प्रयोजित बमो से अत्यंत स्वच्छ होगा। वैज्ञानिको का ऐसा विचार है कि कुछ वर्षो मे वे ऐसा बम बना सकेगे जिसमे रेडियधर्मिता पूर्णतया अनुपस्थित होगी। परन्तु दु:ख का विषय तो यह है कि उस समय तक न जाने कितने तापनाभिक बम परीक्षा-विस्फोटों मे काम आ चुके होंगे और उनके द्वारा विश्व-वातावरण वर्षो के लिए दूषित हो चुका होगा।

1 Clean bomb

स्वतन्त्र करते हैं, अतः इस कार्य को करते समय अत्यधिक सावधानी बरतनी होती है।

अल्फा-कण बीटा-कण गामा-विकिरण एवं न्यूट्रान जीवों पर हानिकारी प्रभाव डालते हैं। अल्फा-कण अन्य द्रव्यों से भी रोके जा सकते हैं। इस कारण इनसे बचाव करना सरल है। परन्तु यदि अल्फा-कण स्वतन्त्र करने वाले तत्व अकस्मात् श्वासादि मार्ग से शरीर में पहुँच जावें तो वे कुछ भागों में जमा होकर बहुत काल तक हानि पहुँचा सकते हैं। बीटा-कण शरीर में कुछ मिलीमीटर तक प्रवेश कर सकते हैं। यदि किसी बीटा स्रोत का त्वचा से स्पर्श हो जाय तो वह हानिकारक फफोले उत्पन्न कर सकता है। एक्स-रे, गामा-विकिरण और न्यूट्रान शरीर के अन्दर के भागों तक पहुँच सकते हैं जिस कारण इनसे बचाव करना अति आवश्यक है।

इन कणों एवं विकिरणों से बहुमुखी हानियाँ सम्भव हैं। ये शरीर में उपस्थित परमाणुओं का आयनीकरण कर उनकी अवस्था में परिवर्तन करते हैं। शरीर के प्रकिण्व (एनजाइम) विकिरण द्वारा नष्ट हो जाते हैं।

अध्याय १८

विकिरण से सुरक्षा

रेडियतत्वों से विकिरण मुक्त होते हैं, यह बात रेडियम की खोज के साथ ही ज्ञात हो गयी थी। कुछ वर्षों पश्चात् यह भी ज्ञात हुआ कि ये विकिरण मनुष्य को हानि पहुँचाते हैं और यह भी कि एक्स-विकिरण भी इसी लिए मनुष्य को हानि पहुँचाने की क्षमता रखते हैं। १९२५ के लगभग वैज्ञानिकों ने इन विकिरणों से बचाव करने के उपयुक्त उपाय निकालने के प्रयत्न किये। परमाणु-विखण्डन प्रयोगों की उपयोगिता के कारण इस समय संसार के अनेक स्थानों पर रेडियधर्मिता विषयक कार्य हो रहा है। इस कारण यह अत्यंत आवश्यक है कि कार्यकर्त्ता हानिकारक विकिरणों से अपनी रक्षा करते रहें तथा कार्य करते समय पूर्णरूप से सतर्क रहें। विकिरणों से बचाव करना एक बड़ी समस्या है। इस कारण उन समस्त अनुसन्धानशालाओं तथा औद्योगिक कार्यालयों में जहाँ परमाणु सम्बन्धी कार्य होते हैं विकिरण-बचाव का पूर्ण रूप से ध्यान रखा जाता है।

परमाणु-ऊर्जा सम्बन्धी कार्यों के कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जिनमें अत्यधिक विकिरण उत्पन्न होते हैं। उनमे साइक्लोट्रान, कणत्वरक और नाभिक प्रतिकारी के क्षेत्र मुख्य हैं। नाभिक प्रतिकारी मे ईंधन के व्यय होने पर खण्डन-पदार्थ बनते हैं। कुछ समय पश्चात् ईंधन के डंडों को बदलना आवश्यक हो जाता है। व्यय ईंधन से खण्डन खण्डों का रासायनिक क्रियाओं द्वारा विश्लेषण किया जाता है जिससे अनेक उपयोगी रेडियधर्मी समस्थानिक उपलब्ध होते हैं। खण्डन खण्ड भयंकर मात्रा में रेडियधर्मी विकिरण

स्वतंत्र करते हैं, अतः इस कार्य को करते समय अत्यधिक सावधानी बरतनी होती है।

अल्फा-कण, बीटा-कण, गामा-विकिरण एव न्यूट्रान जीवो पर हानिकारी प्रभाव डालते हैं। अल्फा-कण अल्प द्रव्यों से भी रोके जा सकते है। इस कारण इनसे बचाव करना सरल है। परन्तु यदि अल्फा-कण स्वतंत्र करने वाले तत्त्व अकस्मात् श्वासादि मार्ग से शरीर मे पहुँच जाये तो वे कुछ भागो में जमा होकर बहुत काल तक हानि पहुंचा सकते है। बीटा-कण शरीर मे कुछ मिलीमीटर तक यात्रा कर सकते हैं। यदि किसी बीटा स्रोत का त्वचा से स्पर्श हो जाय तो वह हानिकारक फफोले उत्पन्न कर सकता है। एक्स-रे, गामा-विकिरण और न्यूट्रान शरीर के अन्दर के भागों तक पहुँच सकते हैं जिस कारण इनसे बचाव करना अति आवश्यक है।

इन कणो एव विकिरणो से बहुमुखी हानियाँ सम्भव हैं। ये शरीर मे उपस्थित परमाणुओ का आयनीकरण कर उसकी अवस्था मे परिवर्तन लाती है। शरीर के प्रकिण्व (एनजाइम) विकिरण द्वारा नष्ट हो जाते है। जिस कारण कोष के कार्य मे रुकावट होती है। अभी इस क्रिया का पूरे रूप से ज्ञान नहीं हुआ है, परन्तु ऐसा अनुमान है कि प्रकिण्व को नष्ट करने मे सभवतः मुक्त मूलक का हाथ रहता है। विकिरण द्वारा पिण्ड सूत्र के विच्छेदन कोष तथा उसके नाभिक मे सूजन होना, उसके द्रव की श्यानता मे वृद्धि होना आदि प्रभाव देखे गये है। विध्वस कोष आदि के कण जमा होकर रक्त के सचार मे भी इसी प्रकार रुकावट उत्पन्न करते हैं। यह भी देखा गया है कि कोष के विभाजन द्वारा गुणित होने की क्रिया-गति में विकिरण द्वारा रुकावट आती है। अत विकिरण के इस गुण के आधार पर कैंसर कोष के गुणन को एक्स एव गामा-विकिरण की सहायता से रोका गया है। इस प्रकार नियंत्रित रूप से गामा-विकिरण के सम्पर्क द्वारा कैन्सर-चिकित्सा सम्भव है, परन्तु शरीर के किसी भाग से अनियन्त्रित मात्रा मे इसका सम्पर्क होने पर कैन्सर रोग हो सकता है।

इस समय विकिरण के कारण मनुष्य पर होनेवाले प्रभाव की उचित

खोज की जा रही है। अब हमें ज्ञात है कि यदि किसी विकिरण को अधिक देर तक मनुष्य के सम्पर्क में रखा जाय तो उस पर होनेवाले प्रभाव की चार दशाएं होती हैं। प्रथम दशा में मिचलाहट और वमन आदि होते हैं। इसके पश्चात् दूसरी दशा मे रोगी की दशा मे सुधार आता है। यह सुधार-अवस्था कुछ दिन से कुछ सप्ताह तक रहती है। तत्पश्चात् तीसरी दशा प्रारम्भ होती है जो अत्यंत कष्टदायक होती है। यदि विकिरण की मात्रा अत्यधिक रही हो तो रोगी की इस अवस्था मे मृत्यु हो सकती है। भूख न लगना, कमजोरी, ज्वर, हृदय-गति में तीव्रता, तीव्र अतिसार, मसूड़ों से रक्त का जाना और बालो का शरीर से गिरना इसके लक्षण होते हैं। विकिरण की तीव्रता के अनुसार इस दशा की अवधि कम या अधिक रहती है। यदि विकिरण की मात्रा अत्यधिक रही होगी तो रोगी की अवस्था खराब होती जायगी और वह बच न सकेगा। परन्तु उसकी मात्रा कम रहने पर चौथी अवस्था में रोगी की हालत में सुधार होने लगता है। इसकी अवधि ६ माह तक हो सकती है। विकिरण के कुछ हानिकारक प्रभाव दीर्घ काल तक गुप्त रहते हैं। रक्त तथा उसके निर्माण-स्थानों, आंतों और जनन अंगों पर विकिरण का प्रभाव शीघ्र ही होता है। इस कारण उन्हें रेडिय संवेदनशील अग कहते है। इसके विपरीत पेशियो, अस्थियों तथा तान्त्रिक कोशिकाओ आदि पर विकिरण का प्रभाव कम पड़ता है, अतः इन्हे रेडिय प्रतिरोधी अग कहते हैं।

विकिरण मात्रक

इस प्रसंग मे कुछ रेडिय मात्रको का ज्ञान करना उचित होगा। रंटजन एक उपयोगी मात्रक है। एक घन सेन्टीमीटर प्रमाणित वायु में आयनीकरण के फलस्वरूप एक स्थिर विद्युत् मात्रक विद्युत् उत्पन्न करने वाली एक्स-रे अथवा गामा-विकिरण को एक रंटजन कहेगे। इतनी मात्रा द्वारा २.०८ × १०^{९} आयन युग्म उत्पन्न होगे। यह भी कह सकते है कि १ रंटजन मात्रक अवशोषण करने पर १ ग्राम वायुको ८६ अर्ग ऊर्जा मिलती है। रंटजन मात्रक

का उपयोग एक्स या गामा-विकिरण के लिए किया गया था। अल्फा, बीटा, प्रोटान या न्यूट्रान कण भी आयनीकरण उत्पन्न करते हैं। इन कणो द्वारा उत्पन्न आयनीकरण को नापने के लिए एक नये मात्रक का उपयोग किया गया है जिसे रैंड[1] कहते हैं। किसी आयनीकरण विकिरण को, जिसके द्वारा १०० अर्ग ऊर्जा प्रति ग्राम अवशोषण पदार्थ उत्पन्न हो, एक रैंड कहेंगे।

समान मात्रा मे ऊर्जा उत्पन्न करने वाले आयनीकारक विकिरणों का मनुष्य या अन्य जीवो पर एक समान प्रभाव नही पडता। इस कारण एक अन्य मात्रक प्रस्तावित किया गया जिसे रेम[2] कहते है। रैंड भौतिक मात्रक है, परन्तु रेम जैव मात्रक है जो हर प्रकार के आयनीकारक अभिकर्मक के लिए प्रयोग किये जाते हैं। एक रेम, आयनीकारक विकिरण की उस मात्रा को कहते है जो जैव वस्तु पर एक रैंड एक्सरे के समान प्रभाव डालती है। इसे आपेक्षिक जैव प्रभावशीलता[3] भी कहते है। भिन्न-भिन्न आयनीकारक पदार्थों मे इसकी मात्रा बहुत भिन्न-भिन्न रहती है।

विकिरण	रैंड	रेम
एक्स अथवा गामा-विकिरण	१	१
बीटा कण	१	१
तीव्र न्यूट्रान	१	१०
मन्द न्यूट्रान	१	४ से ५
अल्फा कण	१	१० से २०
प्रोटान	१	१०

महत्तम स्वीकृत विकिरण मात्रा

परमाणुविज्ञान के कार्यकर्ताओं को ऐसे उपकरणो से कार्य करना पड़ता है जिनमें विकिरण स्वतन्त्र होते रहते है। मनुष्य पर इन विकिरणो का

1. Rad 2. Rem or Roentgen equivalent of man
3. R. B. E. relative biological effectiveness

हानिकारक प्रभाव पड़ता है। इस कारण यह नितान्त आवश्यक है कि कार्य करते समय ऐसी देखभाल रखी जाय कि कार्यकर्ता पर विकिरण की कम से कम मात्रा पड़े। यह भी आवश्यक है कि इस मात्रा की जाँच की जाय और एक महत्तम मात्रा नियत की जाय जिससे अधिक कोई कार्यकर्ता ग्रहण न करे। यदि विकिरण अत्यन्त अल्प मात्रा में हो तो मनुष्य का शरीर उससे सहन कर सकता है। यदि कुछ हानिकारक प्रभाव भी होगा तो कुछ समय पश्चात् शरीर कोष उससे पुन मुक्ति प्राप्त कर लेंगे। परन्तु यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि शरीर के कुछ अग (विशेषकर जनित्र अंग) इसके अपवाद हैं। उनको विकिरण द्वारा पहुँची हानि स्थायी होती है।

पृथ्वी में अल्प मात्रा में रेडियधर्मी तत्त्व उपस्थित रहते हैं। अन्तरिक्ष किरणें भी सदा आयनीकरण उत्पन्न करती रहती हैं। इस कारण सारे जैव प्राणियों पर अल्प मात्रा में आयनीकारक विकिरण पड़ते रहते हैं। इनका कोई हानिकारक प्रभाव तो नहीं ज्ञात हो सका। वैज्ञानिकों के अनुमान के अनुसार सागार के प्रत्येक प्राणी पर ०.१४ से ०.१६ रंटजन प्रतिवर्ष की मात्रा में विकिरणों का प्रभाव पड़ता रहता है। सारी दशाओं पर विचार कर अब यह नियत किया गया है कि ०.३ रंटजन प्रति सप्ताह की मात्रा से अधिक एक्स अथवा गामा-विकिरण किसी मनुष्य को नहीं ग्रहण करना चाहिए। दूसरे विकिरणों की भी मात्रा नियत की गयी है जो इस प्रकार है—

शरीर ऊतक पर महत्तम स्वीकृत मान्य मात्रा (रैड में)
प्रति सप्ताह

विकिरण	शरीर के अदर किसी स्थान पर	पूर्ण शरीर पर	हाथों पर
एक्स अथवा गामा-विकिरण	०. २	० ३	१. ०
बीटा कण	०. २	०. ३	१. ०
प्रोटान	०.०२	०.०३	०.१०
अल्फा किरणें	०.०१	०.०१५	०.०५
तीव्र न्यूट्रान	०.०२	०.०३	०.१०
मन्द न्यूट्रान	०.०४	०.०६	०.२०

के प्रयोग से समान विकिरण स्वतन्त्र न होंगे। पाठकों को यह निम्न तालिका से सूचित हो जायगा।

एक क्यूरी स्रोत द्वारा उत्पन्न गामा-विकिरण

समस्थानिक	अर्धजीवन अवधि	रंटजन प्रति घण्टा
स्वर्ण–१९८	२.७ दिन	०.२२
आयोडीन–१३१	८ दिन	०.२४
सीज़ियम–१३७	३७ वर्ष	०.३६
टैण्टेलम–१८२	११५ दिन	०.६१
रेडियम–२२६	१६२० वर्ष	०.८४
कोबाल्ट–६०	५.२६ वर्ष	१.३०

मनुष्य के शरीर के अन्दर रेडिय समस्थानिकों की हानिरहित महत्तम मात्रा नियत करने के प्रयत्न किये गये यद्यपि उनमे पूर्ण सफलता नहीं मिली। ऐसा अनुमान है कि ०.१ माइक्रोक्यूरी रेडियम और ०.३ माइक्रोक्यूरी आयोडीन–१३१ शरीर के अन्दर पहुँचकर हानि नही पहुँचाते। इसी प्रकार ०.०५ माइक्रोक्यूरी प्लूटोनियम–२३९ और १ माइक्रोक्यूरी स्ट्रांशियम–९० हानिरहित ज्ञात होते है।

विकिरण से रक्षा

परमाणु अनुसन्धानकर्ताओ का विकिरण से बचाव आवश्यक है। विभिन्न विकिरणों के लिए अलग-अलग प्रकार की सावधानियाँ आवश्यक होती है। उदाहरणार्थ, अल्फा-कण से बचाव रबर के दस्तानों द्वारा सम्भव है, परन्तु यह आवश्यक है कि प्रयोगशाला मे वायु का आवागमन होता रहे। बीटा-कणों को एल्यूमिनियम, काँच आदि की चादरों से रोका जा सकता है।

इसके विपरीत न्यूट्रान एवं गामा-विकिरण अधिक मात्रा मे द्रव्य को पार करते हैं, इस कारण उनसे बचाव करना कठिन कार्य है। प्रतिकारी मे

दोनों ही परमाणु अधिकतम मात्रा मे उत्पन्न होते है। इनसे बचाव के लिए कंक्रीट कवच का बहुधा उपयोग होता है। यह सस्ता होने के कारण सुलभ है। इसमे हाइड्रोजन, कैलशियम, सिलिकन आदि तत्त्व रहते है जो न्यूट्रानो को मन्द करने और ग्रहण करने के लिए और गामा-विकिरण को घटाने के लिए अति उपयोगी है। प्रतिकारी के चारो ओर विशेष प्रकार के भारी कन्क्रीट कवच बनाये जाते हैं जिनमे लौह अयस्क और बेराइट खनिज भी मिलाया जाता है जिसमे वे अधिक प्रभावशाली हो जाय। दुर्घटना से बचाने के लिए प्रतिकारी भूमि के अन्दर रखे जाते हैं या उनके चारो ओर गुम्बज की आकृति के निर्माण बने रहते है जिनमे यदि दुर्घटनावश प्रतिकारी फट जाय तो उसकी रेडियधर्मिता बाहर निकलकर वातावरण दूषित न कर सके।

भोजन मे भी अत्यन्त सावधानी बरतना आवश्यक है। जहाँ रेडियधर्मी कार्य हो रहा हो वहाँ पर न तो भोजन रखा जाय और न खाया जाय। हाथ, नाखून आदि की स्वच्छता का सदैव ध्यान रखना भी आवश्यक है।

प्रतिकारी मे परमाणु-खण्डन के फलस्वरूप प्रचुर मात्रा में रेडियधर्मी खण्ड उत्पन्न होते हैं। इनको बाहर निकाल कर फेंकना भी विकट समस्या का कार्य होता है। इस दिशा मे सावधानी से कार्य करना आवश्यक है, जिससे स्थान, जल और वायुमण्डल दूषित न हो। प्रतिकारी के कार्य के कारण उसमें प्रविष्ट वायु में रेडियधर्मी कण उपस्थित रह सकते है। इस वायु को बाहर फेंकने से पहले विशेष छन्नो द्वारा प्रविष्ट करा कर रेडियधर्मी अशुद्धियो को रोक लिया जाता है। प्रतिकारी से बने बहुत-से अनुपयोगी रेडिय खण्डों को जमाकर भूमि मे गहराई पर गाडना आवश्यक हो जाता है। ऐसे स्थानो को चिह्नित करना आवश्यक है जिसमे भविष्य मे वहाँ पर खुदाई न हो।

जिन प्रयोगशालाओ में रेडियधर्मी समस्थानिको द्वारा कार्य होता है उनका निर्माण विशेष प्रकार से किया जाता है जिससे रेडियधर्मिता बाहर न फैल पाये। ऐसी प्रयोगशाला के अन्दर समुचित मात्रा में वायु का आवा-

गमन रहना आवश्यक है। जहाँ तक हो सके रेडिय समस्थानिक कार्य-स्थल को निष्कलंक इस्पात से बनाते हैं जिससे उसकी सफ़ाई सरलता से हो सके। कार्यकर्ता के बचाव के लिए उचित कवच धारण करना आवश्यक रहता है। कभी-कभी तीव्र रेडियधर्मी विकिरण से बचने के लिए दूरस्थ नियन्त्रण-यन्त्र से कार्य करना पड़ता है। इसके लिए कार्यकर्ता को कार्य-कुशल होना चाहिए जिससे वह समस्त कार्यों को उपकरण द्वारा ही कर सके। प्रयोग-शाला के प्रत्येक भाग की और कार्यकर्ता के कपड़ों एवं अंगों की समय-समय पर जाँच होनी चाहिए जिससे प्रयोगशाला की वस्तुओं और जीवों को रेडिय-धर्मी स्पर्श से बचाया जा सके।

अध्याय १९

भारत में परमाणु-अनुसन्धान की प्रगति

स्वतन्त्रता मिलने के पश्चात् से भारत सरकार परमाणु-अनुसन्धानों के प्रति सजग रही है। कई वर्षों पहले परमाणु-ऊर्जा आयोग का निर्माण हुआ था। यह आयोग भारत के प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू की देख-रेख मे कार्य कर रहा है।

परमाणु-अनुसन्धान का सबसे बड़ा केन्द्र वम्बई के निकट ट्राम्बे में स्थित है। इसकी अध्यक्षता विश्व-प्रसिद्ध भौतिकशास्त्री डा० होमी जहाँगीर भाभा कर रहे है।

भारत मे परमाणु-ऊर्जा का प्रयोग शान्तिपूर्ण उपयोगों के लिए निर्धारित हुआ है और सदैव रहेगा। सौभाग्य वश भारत को परमाणु-ऊर्जा के ईंधन की भविष्य मे कमी न होगी। केरल प्रदेश में थोरियम अयस्क 'मोनेज़ाइट' का अक्षय कोष है। थोरियम का परमाणु-ऊर्जा में उपयोग किया जा सकता है, यह पाठकों को अव भली-भांति विदित हो गया होगा। इसके अतिरिक्त यूरेनियम और थोरियम अयस्क अन्य स्थानो में भी पाये गये हैं। रांची (विहार) में पाये गये यूरेनियम और थोरियम अयस्को की कोटि उत्तम है और ऐसा अनुमान है कि इन अयस्को की मात्रा केरल के थोरियम अयस्क से कम से कम डेढ गुनी है।

अप्सरा

४ अगस्त, १९५६ भारत के इतिहास में स्मरणीय दिवस रहेगा। उस दिन भारत के प्रथम संतरित-जलाशय-परमाणु-प्रतिकारी 'अप्सरा'

ने कार्यारम्भ किया था। यह प्रतिकारी पूर्ण रूप से भारतीय वैज्ञानिकों एवं इंजीनियरों द्वारा ही बनाया गया है। इसका रूप ओकरिज के जलाशय प्रतिकारी पर आधारित है।

इस प्रतिकारी की लम्बाई १४ मीटर, चौड़ाई ८.२ मीटर और गहराई ८.५ मीटर है। कंक्रीट द्वारा निर्मित इस सरचना के अन्दर जल की टंकी बनायी गयी है। टकी की लम्बाई ८.५ मीटर, चौड़ाई ३ मीटर और गहराई ८.५ मीटर है। आधार पर कंक्रीट की दीवारों की मुटाई २.४ मीटर है परन्तु ऊपर की ओर वह पतली होती गयी है।

प्रतिकारी के ऊपर रेलों पर खिसकने वाली ट्राली लगायी गयी है। यह ट्राली प्रतिकारी की लम्बी भुजा के समानान्तर आगे-पीछे चलायी जा सकती है। इस ट्राली के सहारे एक ढांचा लटका है जिसके निचले भाग में प्रतिकारी का मध्यभाग अथवा ईंधन-दण्ड लगे हैं।

प्रतिकारी के मध्यभाग में ३५ दण्ड स्थित हैं। प्रत्येक दण्ड ५ से०मी० वर्ग लम्बा चौड़ा और ०.६ मीटर लम्बा है और एल्यूमिनियम के डब्बे के रूप का बना है जिसके अन्दर तेरह पतली पट्टियाँ रखी गयी हैं। ये पट्टियाँ यूरेनियम-एल्यूमिनियम मिश्र धातु की बनी हैं। उपयोजित यूरेनियम में यूरेनियम-२३५ समस्थानिक (समृद्ध यूरेनियम) ५० प्रतिशत मात्रा में रखा गया है।

यूरेनियम ईंधन-दण्डों के बीच खण्डन प्रतिक्रिया होती है। इस क्रिया में सामान्य जल का उपयोग करते हैं जो संमंत्रक, शीतलक और कवच का कार्य करता है। समृद्ध यूरेनियम द्वारा स्वतंत्र हुए न्यूट्रान प्रतिक्रिया को शृंखलाबद्ध रूप मे चलाते हैं। प्रतिक्रिया का नियंत्रण चार एल्यूमिनियम दण्डों द्वारा होता है जिनपर केडमियम की पतली चादर लगायी गयी है।

यूरेनियम दण्डों को छोड़कर 'अप्सरा' का प्रत्येक भाग भारत में बना है।

केनाडा-इण्डिया प्रतिकारी

११ जुलाई, १९६० को भारत के द्वितीय परमाणु प्रतिकारी ने कार्य

करना प्रारंभ किया है। यह केनाडा राज्य की सहायता से बना है, इस कारण इसका नाम केनाडा-इण्डिया प्रतिकारी रखा गया है। यह प्रतिकारी केनाडा के एन० आर० एक्स० प्रतिकारी के आधार पर बना है।

इस प्रतिकारी मे प्राकृतिक सामान्य यूरेनियम दण्डो का उपयोग किया गया है। मयत्रण का कार्य भारी जल का जलाशय करता है जिसमे यूरेनियम दण्ड लटके रहते है। प्रतिकारी का शीतलन सामान्य जल द्वारा होता है जो दण्डो के मध्य से सचरित किया जाता है। मन्द न्यूट्रानो द्वारा इस प्रतिकारी की क्रिया शृंखलाबद्ध की गयी है। यह परमाणु भट्ठी चालीस सहस्र किलोवाट (४०,००० कि० वा०) ऊष्मा ऊर्जा पर चलती है।

प्रतिकारी को शीतल करने के हेतु जल की आवश्यकता होती है। ताज़े जल को एक बन्द परिपथ मे घुमाते है जिसका एक सिरा प्रतिकारी के मध्य भाग मे लगा रहता है। दूसरे भाग को समुद्र के अन्दर रखा गया है। इसके द्वारा प्रतिकारी की ऊष्मा सागर मे चली जाती है।

यह प्रतिकारी विश्व के सर्वश्रेष्ठ रेडियधर्मी समस्थानिक उत्पादकों की श्रेणी मे है। इसके द्वारा भारत में उच्च स्तर के वैज्ञानिक अनुसन्धान सभव हो सकेंगे तथा उच्चकोटि की परमाणु-विज्ञान-शिक्षा भी देश मे ही दी जा सकेगी। इस प्रतिकारी द्वारा परमाणु शक्ति से सम्बन्धित भौतिक, रासायनिक, जीव-विज्ञान और धातुकर्म सम्बन्धी मौलिक अनुसन्धान होना सभव हो गया है। इस उपकरण द्वारा भारत मे प्रत्येक प्रकार के रेडियधर्मी समस्थानिक बन रहे है जो खेती, चिकित्सा, उद्योग, रासायनिक क्रियाओं और अन्य वैज्ञानिक अनुसन्धानो मे उपयोजित होंगे। भारत सरकार ने योजना बनायी है कि अब भारत मे भारतीय तथा अन्य एशिया-अफ्रीकी देशों के विद्यार्थियो को परमाणु-विज्ञान की शिक्षा दी जाय।

केनाडा-इण्डिया प्रतिकारी भारत तथा केनाडा राज्य के सहयोग से निर्मित हुआ है। प्रतिकारी का मध्य भाग केनाडा मे बना है तथा बाह्य भाग भारत के वैज्ञानिको एव इजीनियरो की देख-रेख में तैयार हुआ है। इस प्रतिकारी की लागत लगभग सात करोड पचास लाख (७,-

५०,००,०००) रुपये है जिसका आधा भाग केनाडा ने कोलम्बो योजना के अंतर्गत भारत को प्रदान किया है।

केनाडा-इण्डिया प्रतिकारी भारत और केनाडा के मैत्रीपूर्ण सहयोग का अप्रतिम सूचक है।

जरीलीना

ट्राम्बे में भारतीय परमाणु-ऊर्जा-आयोग के अन्तर्गत जरीलीना नामक परमाणु भट्ठी तैयार हो रही है। जरलीना भट्ठी[1] परमाणु प्रतिकारियों की प्रणालियों के अध्ययन और नक्शे तैयार करने में सहायक होगी। इस भट्ठी की लागत लगभग ९ करोड़ रुपये होगी। इसमें सामान्य यूरेनियम का ईंधन के रूप में उपयोग होगा। इस भट्ठी मे प्रारम्भ मे १५ टन भारी पानी का सयंत्र के रूप में उपयोग होगा। यह अमेरिका के परमाणु शक्ति आयोग से लिया गया है।

यूरेनियम-थोरियम यंत्र

इन परमाणु-प्रतिकारियों के निर्माण और अन्य अनुसन्धान-कार्यों के हेतु शुद्ध ग्रैफाइट, यूरेनियम, थोरियम आदि की आवश्यकता पड़ती है। अब भारत को इन आवश्यक वस्तुओं को बाहर से न मँगाना पड़ेगा क्योंकि ये तथा अन्य वस्तुएँ भारत मे बनायी जाने लगी हैं।

लगभग पाँच वर्ष पूर्व भारत के केरल राज्य में थोरियम यंत्र चालू किया गया था। अब इसकी उत्पादन-क्षमता छः गुनी बढ़ गयी है। इस यंत्र से परमाणु शक्ति के उत्पादन के हेतु आवश्यक यूरेनियम तथा थोरियम को शुद्ध कर, प्रतिकारी के उपयुक्त बनाया जाता है। यह संसार के सबसे

1. Zero Energy Reactor for Lattice Investigations and Neutron Analysis.

बड़े थोरियम नाइट्रेट यत्रो में से है। यहाँ से भारत के बाहर भी थोरियम नाइट्रेट भेजा जाता है। इस यत्र को भारत के वैज्ञानिक और इजीनियरों ने बनाया है।

ट्राम्बे मे यूरेनियम शुद्ध करने का एक यत्र लगाया गया है जिसके द्वारा प्रतिकारी के लिए उपयुक्त यूरेनियम तैयार हो सकता है। एक अन्य थोरियम-यूरेनियम यत्र भी ट्राम्बे मे लगाया गया है।

एक यूरेनियम यत्र बिहार के घटशिला नगर में लगाया गया है। इसके द्वारा ताम्र के अवशेष से यूरेनियम निकाला जाता है।

इन यत्रों द्वारा यूरेनियम-थोरियम तत्त्वो का शुद्ध उत्पादन हो रहा है जिससे भारत को पर्याप्त थोरियम और यूरेनियम मिल सकेगा। परमाणु शक्ति में भारत शीघ्र ही आत्मनिर्भर हो जायगा।

प्रतिकारी मे ईंधन को विशेष रूप मे रखा जाता है। साधारणतया मेगनेशियम और एल्यूमिनियम की मिश्रधातु के डिब्बे मे यूरेनियम की छड़ या पट्टिका को रखा जाता है जिसे ईंधन-तत्व (फ्यूएल-एलिमेंट) कहते है। इसको तैयार करने का यत्र ट्राम्बे मे शीघ्र बन जाने की आशा है।

भारी जलयंत्र

पजाब प्रदेश मे सतलज नदी के किनारे नगल नगर पर भारी जल उत्पादित करने का यत्र बन रहा है। परमाणु-प्रतिकारियों के लिए भारी जल सर्वश्रेष्ठ सयंत्रक सिद्ध हुआ है। अभी तक इस बहुमूल्य पदार्थ को बाह्य देशों से मँगाना पडता है जिस पर बहुमूल्य विदेशी मुद्रा व्यय होती है। इस यत्र के द्वारा १४ टन भारी जल प्रतिवर्ष तैयार हो सकेगा। साथ मे सत्तर सहस्र (७०,०००) टन नाइट्रोजन उर्वरक भी तैयार होगा।

इस यत्र द्वारा जल का विद्युत्-विच्छेदन कर ड्यूटीरियम की मात्रा को समृद्ध किया जायगा। तत्पश्चात् समृद्ध हाइड्रोजन के आसवन द्वारा विशुद्ध ड्यूटीरियम तैयार हो सकेगा।

अनुमान है कि इस विधि द्वारा उत्पादित भारी जल अमेरिका के सेवाना रिवर यंत्र में उत्पादित भारी जल से सस्ता बैठेगा।

भारत में हुए परमाणु-सम्बन्धी अनुसन्धान

भारत के परमाणु-सम्बन्धी अनुसन्धान अधिकतर ट्राम्बे में स्थित परमाणु-शक्ति सस्थान में हो रहे हैं। यह संस्थान दो सहस्र चार सौ (२,-४००) एकड भूमि पर बना है। इस समय इस संस्थान में लगभग एक सहस्र वैज्ञानिक और शिल्पिक कार्य कर रहे हैं। इस संस्थान द्वारा हर वर्ष २५० युवक वैज्ञानिको और इंजीनियरों को प्रशिक्षण दिया जाता है। यह कार्य विगत तीन वर्ष से प्रारम्भ किया गया है।

परमाणु-अनुसन्धान में उपयोजित यंत्र और उपकरण यही पर बनाये जाते है। यह हर्ष का विषय है कि भारत इस महत्त्वपूर्ण क्षेत्र मे आत्म-निर्भर हो गया है।

इस संस्थान के अतिरिक्त बम्बई स्थित टाटा के 'मूलभूत अनुसन्धान संस्थान' (टाटा इस्टीट्यूट आफ फंडामेटल रिसर्च) में परमाणु-अनुसन्धान की विभिन्न विधाओं पर कार्य हो रहा है। कलकत्ता में नाभिक भौतिकी संस्थान (इंस्टीट्यूट आफ न्यूक्लियर फिज़िक्स) भी इस कार्य में अग्रसर हो रहा है। कुछ वर्ष हुए इस संस्थान मे ८१ सें०मी० व्यास का साइक्लोट्रान त्वरक लगाया गया जिसके द्वारा मूलभूत कणो के स्वभाव पर अनुसन्धान सम्भव हो गये हैं। दिल्ली, अलीगढ एवं गुजरात विश्व-विद्यालयों में भी इस महत्त्वपूर्ण विषय पर अनुसन्धान हो रहे हैं। कलकत्ते के बोस सस्थान (बोस इस्टीट्यूट) तथा बंगलौर के भारतीय विज्ञान संस्थान (इडियन इंस्टीट्यूट आफ़ साइंस) मे भी परमाणु विषयक अनु-सन्धान हो रहे हैं। इस प्रयत्न के द्वारा भारत के भौतिकी वैज्ञानिकों, रसा-यनज्ञों तथा इजीनियरों को परमाणु ऊर्जा विषयक विशिष्ट शिक्षा मिल रही है जिसका उपयोग वे अपने-अपने विषयों में कर सकेंगे।

परमाणु-ऊर्जा का चिकित्सा एवं कृषि मे उपयोजन करने मे भी भारत

आगे बढ रहा है। अनेक चिकित्सालयों मे कैंसर, ल्यूकीमिया आदि असाध्य रोगों की चिकित्सा के कर्मठ प्रयत्न हो रहे है। इस कार्य मे प्रशिक्षण देने के हेतु परमाणु-ऊर्जा-आयोग द्वारा एक रेडियो रसायन प्रयोगशाला की स्थापना की गयी है। यह प्रयोगशाला परमाणु-शक्ति सस्थान की रसायन की सब शाखाओं के अनुसन्धान मे रेडियधर्मी पदार्थों के प्रयोग करने मे सहायता देती है।

रेडियधर्मी समस्थानिको का कृषि-अनुसन्धानो एव सामान्य प्रयोगों मे उपयोग हो रहा है। दिल्ली मे स्थित भारतीय कृषि-अनुसन्धानशाला इन प्रयोगो का सबसे बडा केन्द्र है। इस अनुसन्धानशाला मे पिछले दस वर्षो से रेडियधर्मी समस्थानिको द्वारा पौधो की नस्ल सुधारने पर खोज हो रही है। मिट्टी मे उर्वरक देने की सही विधि ज्ञात करने मे रेडिय-समस्थानिकों का अच्छा उपयोग हुआ है। १९५५ से अनुसन्धानशाला में रेडिय-विकिरण द्वारा पौधो की नस्ल परिवर्तित करने के बारे मे अध्ययन चल रहे है। इनके द्वारा गेहूं की किस्म को उन्नत करने मे विशेष सफलता मिली है।

अभी कुछ समय पहले कृषि अनुसन्धानशाला मे २०० फुट व्यास की गोलाकार जमीन मे गामा-बाग[1] बनाया गया है। इस बाग के चारों ओर १ मीटर मोटी और ३ ६ मीटर ऊची दीवार बनायी गयी है। इस बाग के मध्य मे सीसे के भारी डिब्बे मे २०० क्यूरी का कोबाल्ट-६० रखा है जिससे गामा-विकिरण निकलते रहते है। मोटी दीवार मनुष्यों को गामा-विकिरण के हानिकारक प्रभावो से बचाने के लिए बनायी गयी है। इस अहाते मे प्रवेश करने के लिए इस्पात की एक दुहरी चादर का किवाड़ लगा है। यह किवाड उस समय खुलता है जिस समय गामा स्रोत (कोबाल्ट-६०) ढका हो। यत्रो की सहायता से ऐसा प्रबन्ध किया गया

1. Gamnra garden

है कि अहाते के बाहर कोष्ठ में बैठा मनुष्य बटन द्वारा कोबाल्ट-६० को सीसे के डिब्बे से बाहर निकाल सकता है और बन्द कर सकता है। ज्योंही गामा स्रोत डिब्बे से बाहर निकलता है, वैसे ही अहाते का किवाड स्वत. बन्द हो जाता है।

गामा-बाग मे फ़सल सुधारने के लिए परमाणु-ऊर्जा का प्रयोग किया जा रहा है। बाग की भूमि को अनेक भागों में बाँटा गया है। प्रत्येक भाग में अलग-अलग किस्म के अनाज के पौधे या अन्य पेड़ लगे हैं और लगाये जा रहे हैं। गामा-विकिरण द्वारा पौधों की नस्लों मे शीघ्र परिवर्तन लाये जा सकेंगे। इस प्रकार नस्ल में सुधार होने से अनाज की अधिक उपज होगी।

गामा-बाग़ मे लगा कोबाल्ट-६० केनाडा के चाक रिवर प्रतिकारी द्वारा तैयार हुआ है। परन्तु अब ट्राम्बे मे केनाडा-इण्डिया प्रतिकारी चालू होने से भविष्य मे ऐसे स्रोत भारत मे भी तैयार हुआ करेंगे।

ऊर्जा-उत्पादन योजनाएँ

भारत मे परमाणु-ऊर्जा द्वारा विद्युत् उत्पादन का भविष्य उज्ज्वल है; क्योंकि इसका ईंधन पर्याप्त मात्रा मे प्राप्य है। ब्रिटेन, सोवियत संघ और अमेरिका मे विद्युत्-उत्पादक परमाणु-प्रतिकारी सफलतापूर्वक चल रहे है। इससे भारत सरकार को अपनी विद्युत्-उत्पादन योजना में प्रोत्साहन मिला और यह निश्चय किया गया कि तृतीय पंच वर्षीय योजना के अन्तर्गत परमाणु-ऊर्जा द्वारा विद्युत्-उत्पादन करने के तीन स्टेशन बनाये जायें।

परमाणु-ऊर्जा आयोग के अध्यक्ष श्री होमी जहांगीर भाभा ने घोषणा की है कि प्रथम विद्युत् घर महाराष्ट्र प्रदेश मे तारपोर नगर मे बनेगा और दो लाख पच्चीस सहस्र (२,२५,०००) किलोवाट विद्युत्-ऊर्जा का उत्पादन करेगा। इसके बनने मे लगभग पैंतालीस करोड (४५,००,००,०००) रुपये की लागत लगेगी। १९६४ में इसके पूर्ण होने की आशा है। पहले यह विचार था कि इसका प्रतिकारी ब्रिटेन के केल्डर हाल प्रतिकारी के

आधार पर बनाया जाय। परन्तु अब सरकार के अनेक बडे प्रतिकारी निर्णायक निगमों के सुझाव लेकर इस विषय में निश्चय होगा। ऐसा विचार है कि इस स्टेशन की उत्पादन-शक्ति की दशाओं को बढ़ाकर दस लाख (१०,००,०००) किलोवाट तक ले जाया जाय।

इसके अतिरिक्त दो अन्य स्टेशन क्रमशः राजस्थान और दक्षिण भारत मे बनेंगे।

इस समय तक परमाणु-ऊर्जा द्वारा उत्पादित विद्युत् सामान्य स्रोतो द्वारा निकली विद्युत् से महँगी बैठती है। परन्तु भारत मे बिजली की दर सामान्यतः अन्य औद्योगिक देशो से अधिक है। इस कारण प्रारम्भ से ही इन स्टेशनो द्वारा निकली विद्युत् महँगी न पडेगी। इन स्टेशनो द्वारा ऐसे स्थानों मे विद्युत् पहुँचायी जा सकेगी जहाँ कोयले और जल की कमी है और इसीलिए उन स्थानो मे अभी तक विद्युत् नहीं उत्पादित हो सकी है।

भारत मे यूरेनियम और थोरियम प्राप्य हैं। ऐसा अनुमान है कि ससार का सबसे समृद्ध थोरियम अयस्क "मोनेज़ाइट" भारत मे पाया जाता है। भारत सरकार अन्य अयस्को की खोज कर रही है। योग्य वैज्ञानिकों के नेतृत्व मे भारत मे परमाणु-अनुसन्धान हो रहे हैं। हमे पूर्ण आशा है कि निकट भविष्य में भारत की गिनती ससार के प्रमुख परमाणु-ऊर्जा-उत्पादक देशों में होने लगेगी।

परिशिष्ट (अ)

तत्त्वों के परमाणु-भार

परमाणु-संख्या	नाम	संकेत	परमाणु-भार
१	हाइड्रोजन	H	१.००८
२	हीलियम	He	४.००३
३	लीथियम	Li	६.९४०
४	बेरीलियम	Be	९.०१३
५	बोरान	B	१०.८२
६	कार्बन	C	१२.०१०
७	नाइट्रोजन	N	१४.००८
८	आक्सीजन	O	१६.०००
९	फ्लोरीन	F	१९.००
१०	नीआन	Ne	२०.१८३
११	सोडियम	Na	२२.९९७
१२	मैग्नीशियम	Mg	२४.३२
१३	एल्यूमिनियम	Al	२६.९८
१४	सिलिकन	Si	२८.०९
१५	फ़ास्फोरस	P	३०.९७५
१६	सल्फ़र	S	३२.०६६
१७	क्लोरीन	Cl	३५.४५७
१८	आर्गान	Ar	३९.९४४
१९	पोटैशियम	K	३९.१००

परमाणु-संख्या	नाम	संकेत	परमाणु-भार
२०	कैलसियम	Ca	४०.०८
२१	स्कैण्डियम्	Sc	४४.९६
२२	टाइटेनियम्	Ti	४७.९०
२३	वैनेडियम	V	५०.९५
२४	क्रोमियम्	Cr	५२.०१
२५	मैंगनीज़	Mn	५४ ९३
२६	आयरन, (लौह)	Fe	५५.८५
२७	कोबाल्ट	Co	५८.९४
२८	निकल	Ni	५८.६९
२९	कॉपर, (ताम्र)	Cu	६३.५४
३०	ज़िंक, (यशद)	Zn	६५.३८
३१	गैलियम	Ga	६९.७२
३२	जर्मेनियम्	Ge	७२.६०
३३	आर्सेनिक	As	७४.९१
३४	सेलीनियम्	Se	७८.९६
३५	ब्रोमीन	Br	७९.९१६
३६	क्रिप्टान	Kr	८३.८०
३७	रुबिडियम्	Rb	८५.४८
३८	स्ट्राशियम्	Sr	८७.६३
३९	इट्रियम्	Y	८८.९२
४०	ज़र्कोनियम्	Zr	९१.२२
४१	नियोबियम्	Nb	९२.९१
४२	मोलिब्डेनम	Mo	९५.९५
४३	टेक्नीशियम्	Te	(९९)
४४	रुथेनियम्	Ru	१०१. ७
४५	रोडियम्	Rh	१०२.९१

परमाणु-संख्या	नाम	संकेत	परमाणु-भार
४६	पैलेडियम	Pd	१०६. ७
४७	सिल्वर, (रजत, रौप्य)	Ag	१०७.८८०
४८	कैड्मियम्	Cd	११२.४१
४९	इडियम्	In	११४.७६
५०	टिन, वंग	Sn	११८.७०
५१	ऐंटिमनी	Sb	१२१.७६
५२	टेल्यूरियम्	Te	१२७.६१
५३	आयोडीन	I	१२६.९१
५४	ज़ीनान	Xe	१३१. ३
५५	सीज़ियम्	Cs	१३२.९१
५६	बेरियम	Ba	१३७.३६
५७	लैन्थेनम्	La	१३८.९२
५८	सीरियम्	Ce	१४०.१३
५९	प्रेज़िओडिमियम्	Pr	१४०.९२
६०	नीओडिमियम्	Nd	१४४.२७
६१	प्रोमीथियम्	Pm	(१४५)
६२	समेरियम्	Sm	१५०.४३
६३	युरोपियम	Eu	१५२. ०
६४	गैडोलिनियम्	Gd	१५६. ९
६५	टर्बियम्	Tb	१५९. २
६६	डिसप्रोशियम्	Dy	१६२.४६
६७	होल्मियम्	Ho	१६४.९४
६८	एरबियम्	Er	१६७. २
६९	थ्यूलियम्	Tm	१६९. ४
७०	इटर्बियम्	Yb	१७३.०४
७१	ल्यूटीशियम	Lu	१७४.९९

परमाणु-सख्या	नाम	सकेत	परमाणु-भार
९८	केलिफोर्नियम	Cf	(२४९)
९९	आइंस्टीनियम्	Es	(२५४)
१००	फर्मियम्	Fm	(२५६)
१०१	मेंडलीवियम्	Md	(२५६)
१०२	नोबेलियम्	No	(२५४)

नोट

कुछ तत्त्व इस पृथ्वी पर नही पाये जाते। इनका निर्माण कृत्रिम प्रयोगों द्वारा किया गया है। ऐसे हर तत्त्व के अनेक समस्थानिक प्रयोगो द्वारा उपलब्ध हुए हैं। तालिका मे ऐसे प्रत्येक तत्त्व का एक ऐसा समस्थानिक कोष्ठ में दिया गया है जिसकी अर्धजीवन अवधि सबसे दीर्घ है।

परमाणु-संख्या	तत्व	समस्थानिक-भार	अर्धजीवन-अवधि
२०	केलशियम्	४५	१५२ दिन
२१	स्कैंण्डियम्	४६	८५ दिन
		४८	१.८३ दिन
२२	टाइटेनियम्	४५	३ घंटा
२३	वैनेडियम्	४८	१६ दिन
२४	क्रोमियम्	५१	२६.५ दिन
२५	मैंगनीज	५२	६.० दिन
		५४	३१० दिन
२६	लौह	५५	२.९ वर्ष
		५९	४६.३ दिन
२७	कोवाल्ट	५६	८० दिन
		६०	५.२६ वर्ष
२८	निकल	६३	८५ वर्ष
२९	ताम्र	६४	१२.८ वर्ष
३०	यशद	६५	२५० दिन
		६९	१३.८ घंटा
३१	गैलियम्	६६	९.२ घंटा
		७२	१४.१ घंटा
३२	जर्मेनियम्	७१	११.४ दिन
		७७	१२ घंटा
३३	आर्सेनिक	७६	२६.८ घंटा
		७७	४० घंटा
३४	सेलीनियम्	७५	१२८ दिन
३५	ब्रोमीन	८२	३५.१ घंटा
३६	क्रिप्टान	८५	४.५ घंटा
३७	रुबिडियम्	८६	१९.५ दिन
३८	स्ट्रांशियम्	८९	५३ दिन

परमाणु-संख्या	तत्व	समस्थानिक-भार	अर्धजीवन-अवधि
३९	इट्रियम	९०	२० वर्ष
		९०	२.५४ दिन
४०	ज़र्कोनियम्	९५	६५ दिन
		९७	१७ घटा
४१	नियोबियम्	९५	९० घटा→३५ दिन
४२	मोलिब्डेनम्	९९	६८ ३ घटा
४३	टेक्नीशियम्	९७	९० दिन→१०' वर्ष
		९९	२.१×१०' वर्ष
४४	रुथेनियम्	९७	२ ८ दिन
		१०३	४२ दिन
		१०६	१ वर्ष
४५	रोडियम्	१०५	३६.२ घंटा
४६	पैलेडियम्	१०३	१७ दिन
४७	रजत	११०	२७० दिन
		१११	७.५ दिन
४८	कैड्मियम्	११३	५.१ वर्ष
		११५	२.३ दिन
		११५	४३ दिन
४९	इंडियम्	११४	५० दिन
५०	वग	११३	११२ दिन
५१	ऐंटिमनी	१२२	२.८ दिन
		१२४	६० दिन
		१२५	२.७ वर्ष
५२	टेल्यूरियम्	१२७	९० दिन→९.३ दिन
		१२९	३२ दिन→७२मिनट
		१३१	३० घंटा→२५मिनट
५३	आयोडीन	१३१	८ दिन
५४	ज़ीनान	१३१	१२ दिन

परमाणु-संख्या	तत्व	समस्थानिक-भार	अर्धजीवन-अवधि
५५	सीज़ियम्	१३४	२.३ वर्ष
५६	बेरियम्	१३१ १४०	१२ दिन १२.८ दिन
५७	लैन्थेनम्	१४०	४० घंटा
५८	सीरियम्	१४१	३३ दिन
५९	प्रेज़िओडिमियम्	१४२ १४३	१९घंटा १३.८ घंटा
६०	नीओडिमियम्	१४७	११ दिन
६१	प्रोमीथियम्	१४७	२.२६ वर्ष
६२	समेरियम्	१५३	४७ घंटा
६३	युरोपियम्	१५४ १५५	१६ वर्ष १.७ वर्ष
६४	गैडोलिनियम्	१५३	२२५ दिन
६५	टर्बियम्	१६०	७१ दिन
६६	डिसप्रोशियम्	१६६	८२ घंटा
६७	होलमियम्	१६६	२७.३ घंटा
६८	एरबियम्	१६३	६५ घंटा
६९	थ्यूलियम्	१७२	२.५ दिन
७०	इटर्बियम्	१७५	१०० घंटा
७१	ल्यूटीशियम्	१७६	३.७ घंटा
७२	हेफनियम्	१८१	४५ दिन
७३	टैंटलम्	१८२	११५ दिन
७४	टंगस्टन	१८५ १८७	७३.२ दिन २४.१ घंटा
७५	रीनियम्	१८६ १८८	७२.८ घंटा १९ घंटा

परमाणु-संख्या	तत्व	समस्थानिक-भार	अर्धजीवन-अवधि
७६	ऑसमियम्	१८५	९७ दिन
		१९१	१५ दिन
		१९३	३२ घंटा
७७	इरीडियम	१९२	७४.७ दिन
		१९४	१९ घंटा
७८	प्लेटिनम्	१९७	१८ घंटा
७९	स्वर्ण	१९८	२ ६९ दिन
		१९९	३.३ दिन
८०	पारद	१९७	६५ घंटा; २५ घंटा
		२०३	४३.५ दिन
८१	थैलियम्	२०४	२.७ वर्ष
८३	विस्मथ	२१०	४.८५ दिन
८४	पोलोनियम्	२१०	१३८ दिन
८५	एस्टेटीन	२११	७.५ घंटा

परिशिष्ट (इ)

विशेष उपयोगी रेडिय समस्थानिक

शुद्ध बीटा-विकिरण स्वतन्त्र करने वाले कुछ उपयोगी रेडियसमस्थानिक

परमाणु-संख्या	तत्त्व	परमाणु-भार	अर्धजीवन-अवधि	महत्तम विकिरण उर्जा
१	हाइड्रोजन	३	१२.५ वर्ष	०.११ लाख इवो०
६	कार्बन	१४	५७२० वर्ष	१.५५
१				१७.१२

बीटा एवं गामा-विकिरण स्वतन्त्र करने वाले कुछ उपयोगी रेडियमसमस्थानिक

परमाणु-संख्या	तत्त्व	परमाणु-भार	अर्धजीवन-अवधि	महत्तम विकिरण उर्जा (लाख इवो०)	
				बीटा	गामा
११	सोडियम्	२४	१५ वर्ष	१३.९	१३८; २७६
१९	पोटैशियम्	४२	१२.४ घटा	२०४, ३५८	१५.१
२६	लौह	५९	४६ ३ दिन	२.६; ४६	११; १३
२७	कोबाल्ट	६०	५.२६ वर्ष	३१	११७, १३.३
५३	आयोडीन	१३१	८ दिन	३.३; ६	७.२, ३.६४, २.८४, ०.८
७९	स्वर्ण	१९८	२.६९ दिन	९.७	४.११

परिशिष्ट (इ)

विशेष उपयोगी रेडिय समस्थानिक

शुद्ध बीटा-विकिरण स्वतन्त्र करने वाले कुछ उपयोगी रेडियसमस्थानिक

परमाणु-संख्या	तत्व	परमाणु-भार	अर्धजीवन-अवधि	महत्तम विकिरण उर्जा
१	हाइड्रोजन	३	१२.५ वर्ष	०.१९ लाख इवो०
६	कार्बन	१४	५७२० वर्ष	१.५५
१५	फास्फोरस	३२	१४.३ दिन	१७.१२
१६	सल्फ़र	३५	८७ दिन	१.६६
२०	केलशियम्	४५	१५२ दिन	२.५४
३८	स्ट्रांशियम्	९०	२० वर्ष	५.३७
३९	इट्रियम्	९०	२५४ दिन	२१.८

परिशिष्ट (इ)

विशेष उपयोगी रेडिय समस्थानिक

शुद्ध बीटा-विकिरण स्वतन्त्र करने वाले कुछ उपयोगी रेडियसमस्थानिक

परमाणु-संख्या	तत्व	परमाणु-भार	अर्धजीवन-अवधि	महत्तम विकिरण उर्जा
१	हाइड्रोजन	३	१२.५ वर्ष	०.१९ लाख इवो०
६	कार्बन	१४	५७२० वर्ष	१.५५
१५	फास्फोरस	३२	१४.३ दिन	१७.१२
१६	सल्फर	३५	८७ दिन	१.६६
२०	केलशियम्	४५	१५२ दिन	२.५४
३८	स्ट्रांशियम्	९०	२० वर्ष	५.३७
३९	इट्रियम्	९०	२५४ दिन	२१८

बीटा एवं गामा-विकिरण स्वतन्त्र करने वाले कुछ उपयोगी रेडियसमस्थानिक

परमाणु-सख्या	तत्त्व	परमाणु-भार	अर्धजीवन-अवधि	महत्तम विकिरण उर्जा (लाख इवो०)	
				बीटा	गामा
११	सोडियम्	२४	१५ वर्ष	१३.९	१३.८; २७.६
१९	पोटैशियम्	४२	१२.४ घंटा	२०.४; ३५.८	१५.१
२६	लौह	५९	४६.३ दिन	२.६, ४६	११; १३
२७	कोवाल्ट	६०	५.२६ वर्ष	३१	११७, १३३
५३	आयोडीन	१३१	८ दिन	३.३; ६	७.२; ३६४; २.८४; ०८
७९	स्वर्ण	१९८	२.६९ दिन	९.७	४.११

गामा-विकिरण स्वतन्त्र करने वाले कुछ उपयोगी रेडियसमस्थानिक

परमाणु-संख्या	तत्व	परमाणु-भार	अर्धजीवन-अवधि	विकिरण उर्जा (लाख इवो०)
उच्च ऊर्जाशील (१० लाख इवो० से अधिक)				
२७	कोवाल्ट	६०	५.२६ वर्ष	११.७; १३.३
४७	रजत	११०	२७० दिन	६.७६ से १४.१६ तक १० विकिरण
६३	युरोपियम्	१५४	१६ वर्ष	१२
७३	टॅंटलम्	१८२	११५ दिन	०.४६ से १२. ३७ तक ३३ विकिरण

माध्यमिक ऊर्जाशील (५ लाख से १० लाख इवो० तक)

५५	सीजियम्	१३७	३७ वर्ष	६.६२
५८	सीरियम्	१४४	२७५ दिन	१ ३
५९	प्रेजियोडिमियम् (सीरियम-१४४ से उत्पन्न)	१४४	१७.५ मिनट	७ से २२ तक तीन विकिरण
७७	इरीडियम्	१९३	७४ ७ दिन	१ ३७ से ६.५१ तक १२ विकिरण

अल्प ऊर्जाशील (५ लाख इवो० से कम)

३४	सेलीनियम्	७५	१२८ दिन	०.६७ से ४.०५ तक १० विकिरण
६९	थ्यूलियम्	१७०	१२७ दिन	०.८४
७४	टंग्स्टन	१८५	७३.२ दिन	१.३४
८०	पारद	२०३	४३.५ दिन	२ ८६

परिशिष्ट (ई)

कुछ उपयोगी स्थिरांक

प्रकाश वेग (C) २.९९७९ $\times$ १०^{१०} सेन्टीमीटर प्रति सेकेंड

इलेक्ट्रान आवेश (e) ४.८०२८ $\times$ १०$^{-१०}$ स्थिर वैद्युत मात्रक

अथवा १.६०३० $\times$ १०$^{-११}$ कूलो

इलेक्ट्रान आवेश-भार अनुपात (e/m) ५.२७३० $\times$ १०^{१७} स्थिर वैद्युत मात्रक प्रति ग्राम

अथवा १.७५८८ १०^{७} विद्युत् चुम्बकत्व मात्रक प्रति ग्राम

स्थिर इलेक्ट्रान भार (mc) ९.१०८५ $\times$ १०$^{-२८}$ ग्राम

अथवा ०.०००५४९ परमाणु भार मात्रक

अथवा ५.१०९८ लाख इलेक्ट्रान वोल्ट

न्यूट्रान-भार १.६७४७४ $\times$ १०$^{-२४}$ ग्राम

अथवा १.००८९८२ परमाणु भार मात्रक

अथवा ९३९५.२६ लाख इलेक्ट्रान वोल्ट

प्रोटान-भार १.६७२४३ $\times$ १०$^{-२४}$ ग्राम

अथवा १.००७५९३ परमाणु भार मात्रक

अथवा ९३८२.३२ लाख इलेक्ट्रान वोल्ट

१ परमाणु भार मात्रक ९३११.६२ लाख इलेक्ट्रान वोल्ट

अथवा १.४९ $\times$ १०$^{-३}$ अर्ग

अथवा ३.५६ $\times$ १०$^{-११}$ कैलोरी

अथवा ४.१५ $\times$ १०$^{-१७}$ किलोवाट-घंटा

१. इलेक्ट्रान वोल्ट उर्जा — १.६०२०७ $१०^{-१२}$ अर्ग

१ क्यूरी — ३.७ × $१०^{१०}$ विच्छेदन प्रति सेकेंड

१ रंटगन — १ स्थिर वैद्युत मात्रक प्रति घन सेन्टीमीटर प्रामाणिक वायु
अथवा २.०८३ × $१०^{९}$ आयन युग्म प्रति घन सेन्टीमीटर प्रामाणिक वायु
अथवा १.६१ × $१०^{१२}$ आयन युग्म प्रति ग्राम वायु
अथवा ६.७७ × $१०^{४}$ लाख इलेक्ट्रान वोल्ट प्रति घन सेन्टीमीटर प्रामाणिक वायु
अथवा ५.२४ × $१०^{७}$ लाख इलेक्ट्रान प्रति ग्राम वायु
अथवा ८६ अर्ग प्रति ग्राम वायु

परिशिष्ट (उ)

व्याख्यात्मक शब्दावली

अन्तरिक्ष-विकिरण

ये वाह्य आकाश-मंडल से आने वाले तीव्र-वेधी विकिरण हैं जिनकी उत्पत्ति अन्तरिक्ष मे होती है। इन विकिरणोंकी संरचना ऊर्जाशील प्रोटान व अन्य परमाणु नाभिको द्वारा होती है। द्रव्य पर इनके आक्रमण से अनेक कणों एवं विकिरणों की उत्पत्ति होती है।

अभ्र-प्रकोष्ठ

यह नाभिक भौतिकी का अत्यंत उपयोगी उपकरण है जिसके द्वारा कणों के मार्ग का चित्र लिया जाता है।

अर्धजीवन-अवधि

रेडियधर्मी तत्त्वो का क्षय एक विशेष नियम द्वारा होता है। इसके अनुसार प्रत्येक तत्त्व के आधे परमाणु एक नियत समय मे तत्त्वातरित हो जाते हैं। इस काल को उस तत्त्व की अर्धजीवन अवधि कहते हैं।

अल्फ़ा-कण

यह कण कुछ रेडियधर्मी तत्त्वों द्वारा स्वतंत्र होता है। इसे हीलियम तत्त्व का नाभिक भी कह सकते हैं। इसका भार ४ मात्रक एवं आवेश २ धनमात्रक है।

इलेक्ट्रान

यह ऋणावेश युक्त मूलभूत कण है जो सारे परमाणुओं में विद्यमान रहता है।

परमाणु-प्रतिकारी

परमाणुओं के नियंत्रित खण्डन की वह प्रणाली [illegible] जिसके द्वारा मुक्त ऊर्जा का उपयोग किया जा सकता है, परमाणु-प्रतिकारी कहलाते हैं।

पाज़िट्रान

यह इलेक्ट्रान का प्रति-कण है जिसे धनावेश युक्त मूलभूत कण कहते हैं। इस पर आवेश १ मात्रक है और इसका भार सामान्य इलेक्ट्रान के समान है।

पारयूरेनियम तत्त्व

ये यूरेनियम से उच्च परमाणु-संख्या वाले तत्त्व हैं जो प्रकृति में नहीं पाये जाते। इनका निर्माण कृत्रिम क्रियाओं द्वारा हुआ है।

प्रोटान

यह हाइड्रोजन परमाणु नाभिक होता है जो मूलभूत कणों की श्रेणी में आता है। इस पर १ मात्रक धनावेश और १ मात्रक भार संकेन्द्रित रहता है।

प्लूटोनियम

यह मनुष्य निर्मित ९४ परमाणु-संख्या वाला तत्त्व है जिसका भार सामान्यतः २३९ रहता है। इसका निर्माण यूरेनियम-२३८ पर मन्द न्यूट्रानों के [illegible] से होता है। यह एक खण्डनीय तत्त्व है और परमाणु-ऊर्जा उत्पन्न [illegible] गी सिद्ध हुआ है।

तत्वान्तरण

किसी नाभिक में ऐसे क्रान्तिकारी परिवर्तन को जिसके फलस्वरूप वह दूसरे तत्व मे परिणत हो जाय, तत्त्वांतरण कहते हैं।

त्वरक

कणों को तीव्र गति देने वाले उपकरण को त्वरक कहते हैं। अनेक प्रणालियों के त्वरक बनाये गये हैं। साइक्लोट्रान एक विशेष रूप का त्वरक है जिसमें कणों को सर्पिल मार्ग मे त्वरित करते हैं। कणों को सीधे मार्ग में त्वरित करने वाले यन्त्र को 'सरल त्वरक' कहते हैं।

नाभिक

यह परमाणु का वह मध्य भाग है जो अत्यंत सूक्ष्म स्थान ग्रहण करता है, परन्तु जिसमें उसका लगभग सारा भार संकेन्द्रित रहता है। इसमें प्रोटान एवं न्यूट्रान कण उपस्थित रहते हैं।

न्यूट्रान

यह आवेशरहित मूलभूत कण है जिसका भार लगभग प्रोटान के समान है।

परमाणु

यह किसी मूल तत्व का वह सूक्ष्मतम कण है जो स्वतंत्र अवस्था मे रह सकता है। परमाणु विभिन्न मात्राओं में रासायनिक प्रक्रिया करके अणुओं का निर्माण करते हैं।

परमाणु-ऊर्जा

यह वह ऊर्जा है जो परमाणुओं की खण्डन अथवा संगलन प्रक्रिया के फलस्वरूप मुक्त होती है।

परमाणु-प्रतिकारी

परमाणुओ के नियन्त्रित खण्डन की वह प्रणाली जिसमे यत्र विशेष द्वारा मुक्त ऊर्जा का उपयोग किया जा सकता है, परमाणु-प्रतिकारी कहलाते हैं।

पाज़िट्रान

यह इलेक्ट्रान का प्रति-कण है जिसे धनावेश युक्त मूलभूत कण कह सकते हैं। इस पर आवेश १ मात्रक है और इसका भार साधारण इलेक्ट्रान के समान है।

पारयूरेनियम तत्त्व

ये यूरेनियम से उच्च परमाणु-सख्या वाले तत्त्व है जो प्रकृति मे नही पाये जाते। इनका निर्माण कृत्रिम क्रियाओ द्वारा हुआ है।

प्रोटान

यह हाइड्रोजन परमाणु नाभिक होता है जो मूलभूत कणो की श्रेणी मे आता है। इस पर १ मात्रक धनावेश और १ मात्रक भार सकेन्द्रित रहता है।

प्लूटोनियम

यह मनुष्य निर्मित ९४ परमाणु-सख्या वाला तत्त्व है जिसका भार सामान्यत २३९ रहता है। इसका निर्माण यूरेनियम-२३८ पर मन्द न्यूट्रानों के आक्रमण से होता है। यह एक खण्डनीय तत्त्व है और परमाणु-ऊर्जा उत्पन्न करने मे उपयोगी सिद्ध हुआ है।

बीटा कण अथवा इलेक्ट्रान

यह ऋणावेशयुक्त सूक्ष्मतम कण है जो अनेक रेडियधर्मी तत्त्वो द्वारा मुक्त होता है।

मोनेजाइट

यह थोरियम तत्त्व का मुख्य अयस्क है। भारतमें यह केरल राज्य में उपलब्ध है।

यूरेनियम

यह प्रकृति में उच्चतम भार संख्या वाला तत्त्व है। इसकी परमाणु-संख्या ९२ तथा भार-संख्या २३८ है। इसका एक २३५ भार संख्या वाला समस्थानिक भी सूक्ष्म मात्रा में पाया जाता है जो खण्डनीय पदार्थ है। इसका उपयोग परमाणु-प्रतिकारी में होता है।

रेडिय तत्त्व

वे तत्त्व जो रेडियधर्मी गुण रखते है।

रेडियधर्मिता

परमाणु की स्वतः तत्वांतरण क्रिया के गुण को रेडियधर्मिता कहते हैं। यह विशेष नियमों द्वारा नियंत्रित होती है।

रेडियम

यह क्षारीय मृदा—समूह का एक तत्त्व है जो स्वतः तत्वांतरित होता रहता है। इसकी भार-संख्या २२६ औरपरमाणु-संख्या ८८ है। यह रेडियधर्मी तत्व है और एक अल्फा-कण मुक्त कर रेडान में परिणत हो जाता है।

विच्छेदन

परमाणुओं के टूटने की प्रतिक्रिया जिसके फलस्वरूप कण एवं विकिरण मुक्त होते हैं, विच्छेदन कहलाती है।

संकेतक

किसी तत्व का रेडियधर्मी समस्थानिक जो इतनी सूक्ष्म मात्रा मे उपस्थित हो कि उसका अस्तित्व गणक यत्र द्वारा ज्ञात हो, सकेतक कहलाता है।

संगलन-क्रिया

हलके तत्वो के नाभिको को सगलन द्वारा भारी तत्वो के नाभिको मे रूपान्तरण करने को नाभिक-सगलन क्रिया कहते है। इस क्रिया द्वारा प्रभूत ऊर्जा उत्पन्न होती है।

संयन्त्रक

परमाणु-प्रतिकारी में न्यूट्रानों की गतिज ऊर्जा को कम करने वाली वस्तु को सयत्रक कहते है। खण्डन शृखला प्रतिक्रिया चलाने मे इसका उपयोग होता है।

समस्थानिक

एक ही तत्त्व के विभिन्न भार वाले परमाणु समस्थानिक कहलाते है। इनकी परमाणु-सख्या समान होते हुए भी परमाणु-भार भिन्न-भिन्न होते हैं।

साइक्लोट्रान

यह परमाणु-विखण्डन प्रयोगों के हेतु निर्मित यत्र है जिसमें दो अर्ध गोलाकार खोखले विद्युत् चुम्बक लगे रहते है। इनके मध्य से कण त्वरित होते है।

परिशिष्ट (ऊ)

पारिभाषिक शब्दावली

अंतरिक्ष	Cosmos
अंतरिक्ष-किरण	Cosmic ray
अंतरिक्ष-यान	Space-ship
अंश	degree
अक्षय्यता	conservation
अक्षीय	axial
अणु	molecule
अति निर्वात	high vacuum
अतिसंतृप्त	supersaturated
अनुनाद	resonance
अनुनाद पट्ट	resonance band
अनुनादी ग्रहण	resonance capture
अनुपात गुणक	ratio index factor
अनुप्रस्थ	horizontal
अणुवीक्षण यंत्र	microscope
अपद्रव्य	impurity
अभिकर्मक	reactant
अभ्रक	mica .
अभ्रकोष्ठक, अभ्रप्रकोष्ठ	cloud chamber
अयस्क	ore

उत्तोलक	elevator
उत्प्रेरक	catalyst
उत्प्रेरित	induced
उत्प्रेरित भजन	catalytic cracking
उत्सर्जन	emission
उदय	release
उपकरण	apparatus
उपग्रह	satellite
उपपारमाणविक विमितियाँ	sub-atomic distances
उप-संक्रान्तिक	sub-critical
उर्वरक	fertilizer
ऊर्जा	energy
ऊतक	tissue
ऊष्मा	heat
ऊष्मा विनिमायक	heat exchanger
ऋणाग्र	cathode
ऋणात्मक	negative
ऋणायन	anion
कक्षा	orbit
कण	particle
कला	phase
काल	time
किरणभावन	irradiation
किलोवाट-घंटा	kilowatt-hour
कीटमारक	insecticide
कृत्रिम	artificial
कैलास, मणिभ	crystal

कोण	angle
कोश कोष	cell
क्रान्तिक	critical
क्वाण्टम् यांत्रिकी	quantum mechanics
क्षय	decay
क्षरण	leak
क्षिप्र	prompt
क्षेत्र	field
खण्ड	fragment
खण्डन	fission
गतिज ऊर्जा	kinetic energy
गलग्रन्थि	thyroid
गलनांक	melting point
गवाक्ष	window
गामा-उद्यान	gamma garden
गिर्री	pulley
गुणक	factor
गुणक दशा	multiple stage
गुप्त प्रतिबिम्ब	latent image
गुण परिवर्तन	mutation
गेरुई-प्रतिरोधी	rust resistant
गोला	sphere
गौण	secondary
ग्रन्थि	tumour
ग्रहण	capture
ग्रहीत्व	uptake
ग्राहक	holder

घटन	phenomenon
घन	cube
घनत्व	density
चक्रण	circulation
चमक	scintillation
चयापचय	metabolism
चरम	critical
चाप	arc
चापदीप	arc-lamp
चालक	conductor
चिकित्सा-निदान	medical therapy
चिह्नित	labelled
चुम्बक	magnet
जनित्र	generator
जलाशय-प्रतिकारी	pool reactor
जीव-रसायन	biochemistry
जीवाणु	bacteria
जैव रासायनिक	biochemical
टक्कर	collision
टरबो जनित्र	turbogenerator
तत्त्व	element
तत्वांतरण	transmutation
तनु	dilute
तनुता	dilution
तन्तु	filament
तरंग	wave
तरंग-दैर्घ्य	wave-length

ध्रुव	pole
ध्रुवीयता	polarity
नलिका	tube
नाभिक	nucleus
नियमण-दण्ड	control rods
नियमित	controlled
नियामक	regulator
निरपेक्ष	*neutral*
निरावेश	neutral
निरीक्षण	observation
निर्वीजित	sterilized
निर्वात	evacuated, vacuum
निष्कलंक (अकलुष) इस्पात	stainless steel
नोदक दण्ड	propeller shaft
न्यूनता	deficiency
पटल	screen
पट्टिका	plate
पाठ्यांक	reading
परम आवेश	absolute charge
परमाणु	atom
परमाणु ऊर्जा	atomic energy
परमाणु-पुंज	atomic pile
परमाणु विखण्डक यंत्र	atom smasher
परमाणु-संख्या	atomic number
परवलय	parabola
परिक्रमण	revolution
परिगणन	calculation

परिधि	range
परिपथ	circuit
परिवहन	circulation
परिष्करण	purification
परोपजीवी	pests
पायस	emulsion
पार-बैंगनी	ultra-violet
पारयूरेनियम	transuranium
पार-संक्रान्तिक	super-critical
पित्र्य सूत्र	chromosomes
पुनरुत्पादन गुणक	reproduction factor
पृथक्करण	separation
पृष्ठ तनाव	surface tension
पोषक तत्त्व	nutrient
प्रकाश कोष	photo cell
प्रकाश पायस	photo emulsion
प्रकाश संश्लेषण	photosynthesis
प्रकिण्व	enzyme
प्रकीर्णन	scattering
प्रक्रम	mechanism, process
प्रतिकण	anti-particle
प्रतिकर्षण	repulsion
प्रतिकारी	reactor
प्रतिक्रिया	reaction
प्रतिक्षेप	recoil
प्रतिदीप्ति	fluorescence
प्रतिबिम्ब	image

प्रतिमान	standard
प्रतिरूप	model
प्रतिरोधक	barrier
प्रतिरोधी	resistant
प्रतिरोधकता	resistance
प्रत्यावर्तक	reflector
प्रत्यावर्ती धारा	alternating current
पृथक्कृत	insulated
प्रपात	cascade
प्रयोग	experiment
प्रवर्धन	amplify
प्रशीतन	cooling
प्रशीतन कुंडली	cooling coil
प्राथमिक प्रणाली	primary system
प्रायिकता	probability
फंदे	loops
बन्धन ऊर्जा	binding energy
बलवान् संकेन्द्रण	strong focussing
बहुलीकरण	polymerization
बिन्दु	drop
बुदबुद कोष्ठक	bubble chamber
बेलन	cylinder
भार वर्णक्रम लेखी	mass spectrograph
भारी जल	heavy water
भौतिक	physical
भौतिकी	physics
भौमिकी	geology

भ्रमि	spin
मणिभ	crystal
मध्यमान	mean
मनका	beads
मात्रक	unit
मुक्त	release
मुक्तमूलक	free radical
मूलभूत	fundamental, elementary
मृत्तिका	soil
मेरुदण्ड	spinal cord
यंत्र	instrument
यान्त्रिकी	mechanics
युग्म	pair
यौगिक	compound
रचना	composition
रसायन	chemistry
रसायनज्ञ	chemist
रासायनिक	chemical
रूपातरण	transformation
रेडिय तत्त्व	radio element
रेडियधर्मिता	radio activity
रेडियधर्मी	radioactive
रेडिय-रसायन	radio chemistry
लक्ष्य	target
लघु तरंग	short wave
लवण	salt
वंशानुगत	hereditary

वर्ण-क्रम मापी	spectrometer
वर्ण-क्रम लेखी	spectrograph
वर्तन	refraction
वर्तनांक	refractive index
वलय	ring
वलयाकार चुम्बक	ring magnet
वातव्य विसरण	gaseous diffusion
वायुमण्डल	atmosphere
वाष्पशील	volatile
वाष्पित्र	boiler
वाहक तत्व	carrier element
विकर्षण	repulsion
विकसित	developed
विकिरण	radiation
विकृति	deformation
विक्षेप	deflect
विक्षेपण	deflection
विघटन	disintegration
विद्युत्	electricity
विद्युत् चुम्बकीय	electromagnetic
विद्युदग्र	electrode
विधि	method
विनिमय	exchange
विभव	potential
विमा	dimension
विरल मृदा	rare earth
विलम्बित	delayed

विलयन	solution
विलोम ध्रुव	opposite poles
विशिष्टता	specificity
विश्लेषण	analysis
विषम	opposite
विषमांग	heterogeneous
विषाणु संक्रमण	virus infection
विषुवत रेखा	equator
विसरण	diffusion
विसर्ग नलिका	discharge tube
विसर्जन	discharge
वृक्ष-चयापचय	plant metabolism
वृक्ष-प्रजनन	plant breeding
वृत्ताकार प्रवाहित	circulated
वेग	velocity
वेधन	penetration
वोल्टता	voltage
व्यवस्था	assembly
व्युत्पन्न	derivative
शक्ति	force
शर्करा	sugar
शल्य कर्म	surgery
शीतन पद्धति	cooling mechanism
शून्य प्रवणता	zero gradient
शृंखला	chain, series
श्यानता	viscosity
शृंग	peak

श्लेपा	gelatin
श्लेपीकरण	gelatinisation
संकर	alloy
सकेत	symbol
संकेतक पद्धति	tracer technique
सकेत मार्ग	trail
सकेन्द्रित	focussed
संक्षारण	corrosion
संगलन	fusion
संघट्टन	assembling
संघनक	condenser
संघनन	condensing
संचरित	propagated
सचयागत	cumulative
संतुलन	balance
सधान	launch
संप्रजनक	breeder
समात्रा	mass
संमिश्र	alloy
समृद्ध	enriched
संयत्रक	moderator
संरचन	structure
संवहन	convection
संवेदनशीलता	sensitivity
संवेदी	sensitive
संसजक शक्ति	cohesive force
संसंजन	cohesion

सक्रियकरण विश्लेषण	activation analysis
सक्रिय भाग	core
सक्रियमाण ऊर्जा	energy of activation
सतर्कता सूचक	warning signal
सान्द्र	concentrated
सापेक्षवाद	relativity
समताप मण्डल	stratosphere
समता	uniformity
समस्थानिक	isotope
समस्वरण घुन्डी	tuning knob
समाग	homogeneous
समीकरण	equation
सम्यक्	accurate
सरल त्वरक	linear accelerator
सुचालक	good conductor
स्थानान्तरण	transfer
स्थिर वैद्युत	electrostatic
स्नेहक	lubricant
स्पद	pulse
स्पदन	vibration
स्पदित शक्ति	pulsed power
स्वत	spontaneous
हलचल	circulation
हस्तातरण	disposal